॥ श्रीः ॥

त्रैवर्णिकानां

नवरत्नविवाहपद्धतिः ।

लोकोपकारार्थं

श्रीराजधानीकर्पूरस्थलनिवासिगौतमगोत्र-(शोरि) अन्वयालंकृतश्रीदेवज्ञदुनिचन्द्रात्मजश्रीयुतपण्डितविष्णुदत्त-वैदिककृतनवरत्नप्रकाशिका टीकासहिता ।

सेयम्

मुम्बय्याम्

खेमराज श्रीकृष्णदास इत्यनेन

स्वकीये "श्रीवेंकटेश्वर" यन्त्रालये

मुद्रयित्वा प्रकाशिता ।

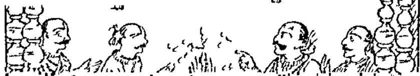
द्वितीयं संस्करणम् ।

संवत् १९५२ शके १८१७













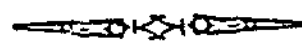




भगतराम
लक्ष्मीनारायण
अघोराम
तुलसीराम
धनैया
मुरारीराम
काशी
शालग्राम
लछमन
बेली
गोंदा
हरगोपाल
नारायण
गणपत
बूढ़ा
हरजस
आलाराम
लालू
रामजस
धनैया
लखू
पोल्हो
धारी
साहबराय
रामजी
सुखराम
पर्वत
सूर्य
दौलतराम
मनोहर
राजरूप
बालक
गुजर
सहजा
सुखा
ढाढी
जयराम
मूलराज
गंढा
दिलाराम
हेमराज
लाहोर
नेणा
भारा
रामसहाई
वंशवृक्ष

ग्रंथकर्ताकी वंशावली.

विज्ञापन।



विदित हो कि, हमारे आर्य्यावर्त भारतखण्डमें अतिचिरसे वर्धित अधर्मरूप यवनराज्यके प्रताप(संताप)से नित्यआनंदरूप शीतलस्वभावसंपन्न सगुणनिर्गुणात्मक पूर्वोत्तर तट युक्त और वेद ४ पुराण १८ न्याय ३ मीमांसा २ धर्मशास्त्र १८ शिक्षा १ कल्प २ व्याकरण ८ निरुक्त १ छंद. ३ ज्योतिष ६ काव्य २ नाटक १० चंपू १ आख्यायिका इतिहास कोश५६अलंकार नीति मंत्र २ तंत्रचिकित्सा ८ गणित २ वेदान्त सांख्ययोग कर्मकाण्डादिकरूप विकसित जो अनेक कमल उनपर लोभायमान भृंगरूप विद्वद्वृंद और आनंदमग्न कविरूप हंस चक्रवाक पारावत क्रौंचादियोंसे शोभायमान वेदविद्यारूप नदीके किञ्चित् शुष्कप्राय होनेपर तदनंतरही सर्वान्तर्यामी कृपालु परमेश्वरकी कृपादृष्टि और अखण्डप्रताप श्रीमती महराजराजेश्वरी श्रीविक्टोरीयाजीके राज्यप्रतापरूप अरुणोदय होनेपर और धर्मरूप चारों तरफ वृष्टिके होनेसे वही सनातन वेदविद्यारूप नदी सगाध होकर वहने लगी उस्की अशुद्धिरूप मलनिवृत्ति कर्नेके लिये हमारे भ्रातृगण क्षत्रि वैश्य शूद्रादि तनमनधनसे अति उद्यत होनेपर बौद्ध चार्वाक जैन अनार्य्यादि नूतनमलके निवृत्त होनेसे वही हंसादिरूप विद्वान् निर्मलजलपान कर्तेहैं तथापि विना कषाय पदार्थ हरीतक्यादि भक्षण विन जैसे जलका मधुरगुण (मिठास) मालुम नहीं होती तद्वत् विना अर्थ विनियोगके वेदविद्याका फलरूप गुण मालुम नहीं होता इस्में श्रुति प्रमाणभीहै यथा (स्थाणुरयं भारहारःकिलाभूदधीत्य वेदं न विजानाति योर्थम्। योऽर्थज्ञ इत् सकलं भद्रमश्नुते नाकमेति ज्ञानविधूतपाप्मा)

इसलिये सर्वोपकारके लिये विवाहपद्धतीका मैंने वेदभाष्य सायन उवटमहीधरादि देख और श्रीनिबाहूरामकृतसंस्कृत टीका तथा ब्राह्मणसर्वस्व हरिहरभाष्यआदि ग्रंथोंका सार ले तथा अनेक विवाहपद्धति गृह्यसूत्रसे मिलाय पाठ शुद्ध कराहै और जो मंत्र-पद्धतियोंमें अप्रचारसे अशुद्ध थे वह यजुर्वेदादि संहितासे मिलाय शुद्धकरे साथ वेदका प्रमाण अध्याय मंत्रांक भी लिखेहैं और मंत्रोंको ऋषि छन्द देवतादिसे सुशोभितकर कर्तव्यतामंत्रार्थ भावार्थ गूढार्थ युक्त नवप्रकरणसंयुक्त भाषामें टीका बनाय सर्वाधिकारसमेत " खेमराज श्रीकृष्णदास " श्रीवेंकटेश्वरयंत्रालयाधिपतिके समर्पणकी है इस लिये सज्जनपुरुष इस पुस्तकको स्वीकार कर मेरे परिश्रमको सफल करें और इस पुस्तकमें जो वर कन्याके प्रति उपदेश आचार दोष गुण कहेहैं वह उपदेश करें ऐसे करनेसे लोक परलोकमें यश और धर्मकी प्राप्ति होगी ॥ इस परिश्रमसे सर्वांतर्यामी परमेश्वर श्रीरामचन्द्रजी प्रसन्नहों ॥

राजधानी कर्पूरस्थलनिवासी

गोतमगोत्र (शोरी) अन्वयालंकृत

दैवज्ञ दुनिचन्द्रात्म

पण्डित-विष्णुदत्तशर्म्मा वैदिक.

विंवाहपद्धतिस्थितविषयनिरूपण.

(प्रथमप्रकरणज्योतिषशास्त्रमें)

जिसमें स्त्रीप्रशंसा, दैवज्ञपूजन, विवाहप्रश्न; प्रश्नसे शुभाऽशुभविचार, वैधव्ययोगका व्रत शांति आदिसे परिहार,सावित्रीव्रतविधान,पिप्पलविवाह, कुंभविवाह,अच्युतविवाहविधान, प्रश्नसे कन्यास्त्रीपुत्रविचार, मंगलशब्द अशुभशब्द, बालकवरण नक्षत्र, कन्यावरणविधि, कन्यापरिणयनकाल, चैत्रादिमासनियमव्यवस्था, ज्येष्ठमें विवाहनिषेध, पुत्र विवाहके अनंतर विवाहनिषेध और विधान, मुण्डनविचार, विवाहकेमुहूर्त,पुरुषस्त्रीराशिचक्रवर्णचक्र, योनिचक्र,गणचक्र लत्तापात।युतिवेध।चरणवेध।जामित्र। बुधपंचक। सर्वदेशमें एकार्गल चक्र। यह सबदोषपरिहारसहित उपग्रह। क्रांतिसाम्य। दग्धातिथि। दशयोग। पंग्वंधकाणलग्नविचार। ग्रहनैसर्गिकमैत्रीचक्र। दुष्टभकूट। लग्नशुद्धि। गोधूलीलग्न। वधूप्रवेश। द्विरागमनमुहूर्त। शुक्रविचार परिहार सहित। यह सब भाषाटीकासहित प्रथम प्रकरणमें लिखे हैं॥

(द्वितीयप्रकरण कर्मकाण्डविषयमें)

यथार्थगृहचित्र।मण्डपचित्र। तिलकमण्डलचित्र।सर्वतोभद्रचित्र। पञ्चाग्निकुण्ड। आज्यस्थाली। चरुस्थाली।प्रणीता पात्र। पुरोडाशपात्र।स्रुवा।उपभृत्स्रुक्। ध्रुवा स्रुक्।पुष्करस्रुक्। अग्निहोत्रहवनी। वैकंकतस्रुक्। उलूखल। मुसल। शूर्प। शम्या। स्फ्यः। कृतावदान। उपवेष। कूर्च। दृषत।

उपल । षड्वर्त । अभ्रि । अरणी । उत्तरारणी । मोविली । प्रमन्थ । नेत्र । अन्तर्धानकट । हविर्धानपात्री । प्राशित्र-हरण । चमसा । इडापात्री । यजमानासन । पत्न्यासन । होत्रासन । ब्रह्मासन । यजमानपात्री । पत्नीपात्री । कृष्णा-जिन । इनसर्वके प्रमाणसहितचित्र । कात्यायनोक्तपात्रोंके लक्षण । विनियोगवर्णन । ऋषिछंददेवतालक्षण । छन्दसंख्या गायत्रीछन्दभेद यह सर्व श्रेष्ठतासेद्वितीयप्रकणमें लिखेहैं॥

(तृतीयप्रकरणकात्यायनोक्तशांतिमें)

जिसमें प्रमाणसहित स्वर संयुक्त अतिशुद्धकर वेदोंके मंत्र । स्वस्तिवाचन । गणपत्यादिपूजन । रक्षाविधान । आचार्यादिवरणविदस्वरूप । आशीर्वादमंत्र । कलश । वास्तुपूजन । योगिनी ब्रह्मा।विष्णु । शिव। इंद्रादि दशदिक्पाल । नवग्रहपूजन । बलिदान । संकल्प । शांति । सामग्रीहै ।

(चतुर्थप्रकरणसंकलपादिभेदमें)

विवाहसामग्री । चतुर्थीकर्मसामग्री । कन्योद्वाहमें यजमानकर्तृक प्रतिज्ञासंकल्प । यजमानकर्तृक शुभ्रचौलशाटिकासंकल्प । कन्यापितृकर्तृक वेदीदानसंकल्प । यजमानकर्तृकचतुर्थीदानसंकल्प । यजमानकर्तृक उपाध्यायदक्षिणासंकल्प । यजमानकर्तृककन्या यज्ञ अंतमें भूरि अन्नद्रव्यदानसंकल्प । यजमानकर्तृक विवाहप्रतिज्ञासंकल्प । वरकर्तृकपत्नीप्रतिग्रहगोदानसंकल्प । अभावे सुवर्णमयीगोदानसंकल्प । उपाध्यायदक्षिणासंकल्प । यजमानकर्तृकखट्वा ...। जलवेष्टन।गोत्रोच्चारण । अतिवि स्नृतकन्यासं

कल्प । संक्षेपसेकन्यासंकल्प । परिभाषा । सूर्यादिनवग्रह मंत्र । इन्को पूजनीयता । षोडशोपचारपूजा । ज्योतिषबोधकनवग्रहमंगलाष्टकपारस्करोक्तकुशकंडिकामें विवाहसूत्र.

(पंचमप्रकरणम्)

विवाहपद्धतिमारम्भ । मंगलाचरण ग्रंथकर्तुःप्रशंसा । वाग्दानविधि । बालकवरण । वेदोच्चारण । गणेशस्तुति । ऋषिसृष्टि । शिवसंकल्प । शांतिपाठ यह सब अत्युत्तम भाषाटीका सहित साथप्रमाण स्वरयुक्त मंत्र है

(षष्ठप्रकरणविवाहविधिमें)

(तत्र कन्याहस्तेन) इहाँसे आदिले (प्राङ्मुखौ वधूवरौ स्थितौ भवतः) इस पर्यंत अर्थात् संपूर्ण पद्धति अनेक पद्धतियोंसे मिलाय संस्कृत शुद्धकरऋग्वेदादिचतुर्वेदोंसे मंत्र निकाल और जिसवेदका जोमंत्र उसका प्रमाणतथा स्वरसहित अतिशुद्ध कर विनियोगोंके सहित लिखेहैं॥ इस्की टीका महीधरभाष्य सायनभाष्य उवटभाष्य ब्राह्मणसर्वस्व गृह्यसूत्र हरिहरभाष्य ॥ तथानिवाहुरामकृतटीका जिस्को पाञ्चालदेशीय महाविद्यानिकरके मुख्य संस्कृताध्यापक श्रीपंडित गुरुप्रसादजीने शुद्ध किया ॥ इत्यादि अनेक वेदार्थबोधक ग्रंथोंसे मंत्रोंके अर्थ साथ मन्वादि प्रमाण देकर सबकी समझमें आनेवाली मनभाविनी अतिसुंदर भाषाटीकामें करेहैं इसी प्रकार साथ प्रमाणोंके विवाहपद्धतिके पद २ का अर्थ स्पष्टभाषाटीकामें लिखाहै ॥

(सप्तमप्रकरणमें)

चतुर्थीकर्म अतिविस्तृत भाषाटीकासहित है।

(अष्टमप्रकरणस्त्रीआचारमे)

धर्मशास्त्रादि अनेक शास्त्रोक्त विवाहानंतर जो स्त्रीमात्र-को पतिसेवाआदि प्रतिदिन कर्तव्य है वह अतिविस्तारसे निरूपण करा है॥

(नवमप्रकरणरजस्वलाकृत्यमे)

अर्थात् जिस समय स्त्रियोंको ऋतु आता है उस दिनसे तीनदिनपर्यन्त स्त्रीरक्षा भोजन शयनासनादि व्यवस्था जिससे गर्भाशय शुद्ध रहनेसे अति शौर्य बल बुद्धिसंपन्न और दुराचारसे दुष्टकुकर्मीसतान होतीहै॥यह सब धर्म्मशास्त्र कर्मकाण्ड ज्योतिष चिकित्सासे शुद्ध कर अतिसुंदर निरूपण करा है ॥ इति ॥ तथा प्रकीर्णाऽध्यायं लिखा है॥

(प्रार्थना)यद्यपि अनेक विवाहपद्धति मूल और सस्कृतटीकासवलितसे कार्य्यसिद्ध था तथापि वेदमंत्रोमें अशुद्धिका सन्देह और सस्कृतटीकाको सर्वोपकारक ना होनेसे तथा विना विवाहप्रकरण अन्य स्थानोमें मन्त्रार्थ कर्तव्यताकी इच्छा लग्नशुद्धि कात्यायनीशांति संकल्प आदिकी अवश्यकता विचार कर संस्कारकी शुद्धि और लोकोपकारार्की जिस्को पढकर सामान्य विद्यासंपन्नभी पुरुष अति-

सुगमरीतिसे समझकर आनंदपूर्वक निर्वाह करे इस लिये मैंने अत्युत्तम भाषाटीकासहित विवाहपद्धतिका पुस्तक नवप्रकरणमें अतिपरिश्रमसे बनायाहै ॥ इसको महाशय जन स्वीकार कर प्रचरित करे ॥ और जो मुझकी अशुद्धि हो वह क्षमा करे ॥

पुष्पाञ्जलिः—यदशुद्धमसम्बद्धमज्ञानाच्चकृतंमया।
विद्वद्भिःक्षम्यतांसर्वंबालत्वादयमञ्जलिः॥

(कर्पूरस्थलनिवासि—दैवज्ञ-धुनिचन्द्रात्मज-(शोरी)
पण्डित—विष्णुदत्तशर्मा—वैदिक.



विशेषद्रष्टव्य।

यथाह सुश्रुते भगवान् धन्वन्तरिः॥ अथास्मै पंचविंशति वर्षाय द्वादशवर्षां पत्नीमावहेत्। पित्र्यधर्मार्थकामप्रजाःप्रास्यतीति॥

किञ्च—॥तद्वर्षाद्द्वादशात्कालेवर्तमानमसृक्पुनः। जरापक्वशरीराणांयातिपंचाशतःक्षयम् ॥ ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तःपंचविंशतिः। यद्याधत्तेपुमान्गर्भं कुक्षिस्थःसविपद्यते ॥ जातोवानचिरंजीवेज्जीवेद्वादुर्बलेन्द्रियः। तस्मादत्यन्तबालायांगर्भाधानंनकारयेत् ॥ इममेवाशयमालम्ब्यभावमिश्रोपिभावप्रकाशेवयोधिकांनिदन्बालांस्तौति ॥

यथा—पूतिमांसंस्त्रियोवृद्धाबालार्कस्तरुणंदधि । प्रभातेमैथुनंनिद्रासद्यःप्राणहराणिषट् ॥ वृद्धोपितरुणीं गत्वातरुणत्वमवाप्नुयात् । वयोधिकांस्त्रियंगत्वातरुणःस्थविरायते ॥ अत्याशितोऽधृतिःक्षुद्धान्सव्यथांगःपिपासितः । बालोवृद्धोन्यवेगार्तस्त्यजेद्रोगीचमैथुनम् ॥ लिंगिनींगुरुपत्नींचसगोत्रामथपर्वसु । वृद्धांचसंध्ययोश्चापिगच्छतोजीवनक्षयः ॥ विषये श्चैवमैथुनमित्याद्यनेकवचनप्रामाण्यात्तद्ग्रंथाऽवलोकनाच्चस्त्रियावरोद्विगुणोऽभावेसार्द्धोवास्त्रीत्वयवीयसीएवविधेयाइतिमेप्रतिभात्यतश्चेहलौकिकपारलौकिकहितेप्सुभिःपुरुषैरस्यप्रचारःकर्तव्यइतिशम् ॥

प्रार्थनेयंदे० दुनिचन्द्रात्मजकपूरस्थलीयपंडित-

विष्णुदत्तवैदिकशर्मणः ।

(अवशिदेखिये देखनयोग)

सुश्रुतमें भगवान धन्वंतरि स्वयं लिखतेहैं कि पच्चीस२५ वर्षके बालकको द्वादश १२ वर्षकी स्त्रीसे विवाहकर्नेसे धर्म अर्थ काम संयुक्त पिताको हित दीर्घायुवाली संतान प्राप्त होतीहै ॥ और स्त्रीको द्वादशवर्षसे ले ऋतु पचास वर्षपर्यन्त रहतेहैं और षोडश १६ वर्षसे न्यून (कम) स्त्रीको यदि वर्षसे कम (न्यून) पुरुष प्राप्त हो उससे जो गर्भ हो

वह स्रवजाताहै अर्थात् गिरजाताहै । वा उत्पन्न होकर चिरकाल जीवत नहीं रहता यदि रहताहै तो दुर्वलशरीर (नताकत) असमर्थ इंद्रियवाला चिरजीवताहै ॥ इस कारणसे अतिबालकोंका गर्भाधान नाकरावें ॥ अर्थात् २५ पचीसवर्षका पुरुष औ १६ वर्षकीस्त्री वा १४वर्षकी स्त्री और २० वीसवर्षका पुरुषहो इससे न्यून नाहीं ॥ और इसी आशयको लेकर भावमिश्रजी भावप्रकाश ग्रंथमें वृद्धा (वडी) स्त्रीका निषेध और बालास्त्रीका स्वीकार कहतेहैं ॥ जैसे सढा मांस । वृद्धस्त्री । लाल दधि । वा दिनमें बनायाहुआ दधि ॥ प्रातःकाल स्त्रीसे संभोग । और प्रातःकाल निद्रा यह शीघ्र बलको नष्ट कर्तेहैं । वृद्धपुरुष यौवनवती स्त्रीको प्राप्त होय युवा होताहै और अपनेसे वडीस्त्रीको यदि युवानपुरुष प्राप्तहोय तो शीघ्रही वृद्ध (बूढा) होजाताहै ॥ और बहुतअन्न भोजन कर धैर्यरहित क्षुधायुक्त पीडायुक्त तृषायुक्त और बालक अर्थात् वीस २० वर्षसे न्यून (कम) और वृद्ध (अशीति ८० वर्षसे) ऊपर पुरुष ॥ और रोगातुर और जो एकसे संभोगकर चुकाहो यह ७ पुरुष मैथुन ना करे यदि यह करे तो प्रत्यक्ष फलको प्राप्तहोतेहैं। इसीप्रकार संन्यासयुक्त स्त्रीसे वा गुरुकी स्त्रीसे और अपने गोत्रकी स्त्रीसे वा कन्योंसे और पर्वकाल अष्टमी अमावस एकादशी आदिमें और वृद्धास्त्रीसे तथा संध्याकालमें संभोग कर्नेसे जीवनका क्षय होताहै ॥ इसलिये विंशति अर्थात् वीस २० वर्षके ऊपर पुरुषको मैथुन करना चाहिये इत्यादि अनेकवचन निदर्शनसे सिद्ध यह भया की स्त्रीसे बालक द्विगुण अर्थात् दुगुण (दूना) होना चाहिये॥ जैसे स्त्री बारह १२ व-

षेकी और पुरुष २५ वर्षका यादि ऐसा योग्य गुणयुक्त वर ना मिले तो द्वादश १२ वर्षकी लडकीको वर विंशति २० वर्ष-का अवश्य होना चाहिये और कन्या वरसे सदैव न्यून होनी चाहिये ऐसे कर्नेसे इस लोकमें यश परलोकमें अनंत सुख प्राप्त होताहै इस लिये संसारभीरु धर्मनिष्ठपुरुषोंको इस्का प्रचार तनमन धनसे अवश्य करनाचाहिये ॥

प्रार्थनेयं दैवज्ञदुनिचन्द्रात्मज (शौरि) कर्पूरस्थलीयं

विष्णुदत्तवैदिकशर्मणः।

जो महाशय इस रीतिसे वरकन्याका विवाह करें वा करवावें तो उन्को लिखनेपर हम प्रशंसापत्र देंगे ॥

प्रकाशक

खेमराज श्रीकृष्णदास,

" श्रीवेंकटेश्वर " छापाखाना

खेतवाड़ी—मुम्बई.

श्रीः ।

अथ नवरत्नविवाहपद्धतिः-भाषाटीकासहिता ।

ॐ स्वस्ति श्रीगणेशाय विघ्नहर्त्रे नमोनमः ।

मंगलाचरणम् ।

शिवंशिवकरंगौरीं रामंसीतासमन्वितम् ।
नत्वालग्नविशुद्ध्यर्थं टीकांकुर्वेमनोहराम् ॥ १ ॥

अथ मुहूर्तचिंतामणौ विवाह (उपयमन) प्रकरणम् ॥

भार्य्यात्रिवर्गकरणशुभशीलयुक्ता शीलंशुभं
भवतिलग्नवशेनतस्याः॥तस्माद्विवाहसमयः
परिचिंत्यतेहितन्निघ्नतामुपगताःसुतशीलधर्माः॥१॥

भा०टी०-भार्या अर्थात् जिससे विवाह होय वह स्त्री शुभशीलसे युक्त धर्म अर्थ कामका साधन होती है ॥ वह शुभशीलता लग्नद्वारा होनेसे विवाहका समय प्रथम चिंतना कर्तेहैं ॥ भावार्थ यह है कि यदि लग्न दशादोषादिरहित शुद्ध होय तो उस्में पाणिग्रहण कर्नेसे स्त्री दुष्टभी श्रेष्ठ (अच्छी) और वंध्यायोगवाली पुत्रवती और पापिष्ठ धर्मयुक्त लग्नके प्रभावसे होजाती है ॥ १ ॥

आदौसंपूज्यरत्नादिभिरथगणकंवेदयेत्स्वस्थचितः
कन्योद्वाहंदिगीशानलहयविशिखेप्रश्नलग्नाद्यदीन्दुः ॥

दृष्टोजीवेनसद्यः परिणयनकरोगोतुलाकर्कटाख्यं
वास्यात्प्रश्नस्यलग्नंशुभखचरयुतालोकितंतद्विदध्यात् २॥

भा०टी०-प्रथम रत्न सुवर्ण रजतादिसे गणितविद्यानिपुण ज्योतिषी स्वस्थचित्त बैठेको भेटकर कन्याका विवाह निवेदन (कथन) करे इँहा रत्नादिसे यह प्रयोजन है जितनेसे संतुष्ट हो जाय उतना द्रव्य देना वा यथाशक्ति अनुसार देना ॥ और साथ यह कहनाकी मैं कन्याका विवाह कर्ना चाहताहूं ॥ यदि उसकाल विवाहप्रश्नसे दशम १० एकादश११ तृतीय ३ सप्तम ७ पंचम ५ स्थानमें चन्द्रमा होय और पूर्णदृष्टि नवम ९ पंचम ५ से बृहस्पति चंद्रमा को देखे वा वृष तुला कर्क यह प्रश्नके लग्न होय और शुभग्रह युक्त होवे वा देखे तो शीघ्रही विवाह होताहै ॥ २ ॥

विषमभांशगतौशशिभार्गवौ तनुगृहंबलिनौ यदिपश्यतः।
रचयतोवरलाभमिमौ यदा युगलभांशगतौ युवतिप्रदौ॥३॥

भा०टी०-यदि शुक्रचंद्र विषम (मेष. मिथुन. सिंह. तुला. धन. कुंभ)राशिके नवांशोंमें बलयुक्त प्राप्त होकर प्रश्नलग्नको देखे तो यह वरकी प्राप्ति कन्याको कर्तेहै ॥ यदि शशि शुक्र समराशिके नवांशमें हो और बलयुक्त प्रश्नलग्नको देखे तो कन्याकी प्राप्ति बालकको कर्तेहैं ॥ ३ ॥

षष्ठाऽष्टस्थः प्रश्नलग्नाद्यदीन्दुर्लग्नेक्रूरःसप्तमेवाकुजः
स्यात्। मूर्तौविन्दुःसप्तमेतस्यभौमोरंडासास्यादष्ट
संवत्सरेण ॥ ४ ॥

भा०टी०-प्रश्नलग्नसे षष्ठ ६ अष्टम ८ इनस्थानोमें चंद्रमा
: और लग्नमें क्रूर ग्रह होवे यह एक योगहै ॥१॥ वा प्रश्न

लग्नसे षष्ठ ६ अष्टम ८ इनस्थानोंमें चंद्रमा होय और प्रश्न लग्नसे भी सप्तम ७ स्थानमें मंगल होवे यह द्वितीय योग है ॥ २ ॥ अथवा लग्नमें चंद्रमा और सप्तम ७ स्थानमें मंगल होवे यह तृतीय योग है॥३॥फल इन्का ऐसे होनेसे आठ वर्षके अंतर वह कन्या रंडा होती है ॥ ४ ॥

प्रश्नतनोर्यदिपापनभोगाःपंचमगोरिपुदृष्टशरीरः ।
नीचगतश्चतदाखलुकन्यासाकुलटात्वथवामृतवत्सा ५॥

भा०टी०-प्रश्नलग्नसे पापीग्रह अर्थात् क्षीणचंद्रमा सूर्य मंगल शनैश्चर और इन्के साथ युक्त बुध यह पापीग्रह लग्न पंचमस्थानमें होय और लग्नमे स्थितहो शत्रुग्रह उस्को देखे ॥ वा नीचगत होय तो निश्चयसे वह कन्या व्यभिचारिणी वेश्या कुलटा होती है ॥ अथवा मृतवत्सा-अर्थात् नारहणेवाली संतानवाली होतीहै ॥ प्रमाण बृहज्जातकका पापी नीच उच्च ग्रहोंमें यथा (क्षीणेंद्वर्कमहीसुतार्कतनयाः पापा बुधस्तैर्युतः । अजवृषभमृगांगनाकुलीरा झषवणिजौ च दिवाकरादितुंगाः ॥ दश १० शिखि ३ मनुयुक् २८ तिथी १५ न्द्रियांशै ५ स्त्रिनवक २७ विंशति २० भिश्चतेऽस्तनीचाः) अर्थात् मेषके १० अंश सूर्य्य उच्च औ तुलाके १० अंश नीच इसप्रकार वृषके ३ अंश चंद्रमा उच्च औ वृश्चिकके ३ अंश नीच ॥ औ मंगल मकरके २८ अंश उच्च औ कर्कके २८ अंश नीच औ कन्याके १५ अंश बुध उच्च औ मीनके १५ अंश नीच होताहै और बृहस्पति कर्कके ५ अंश उच्च औ मकरके ५ अंश नीच ॥ शुक्र मीनके २७ अंश उच्च औ कन्याके २० अंशनीच । शनैश्चर तुलाके २० अंश उच्च औ मेषके २० अंश नीच होताहै ॥ ५ ॥

यदिभवतिसितातिरिक्तपक्षेतनुगृहतःसमराशिगः शशांकः।अशुभखचरवीक्षितोऽरिरंध्रेभवतिविवाह विनाशकारकोऽयम् ॥ ६ ॥

भा०टी०–यदि लग्नग्रहसे कृष्णपक्षमें समराशिगत चंद्रमा होय और षष्ठ ६ अष्टम ८ इनस्थानमें स्थितहो पापी ग्रह देखे तो विवाहका नाशकर्नेवाला होताहै ॥ ६ ॥

जन्मोत्थंचविलोक्यबालविधवायोगंविधाय्यव्रतं सावित्र्याउतपैप्पलंहिसुतयादद्यादिमांवारहः ॥ सल्लग्नेऽच्युतमूर्तिपिप्पलघटैःकृत्वा विवाहं स्फुटं दद्यात्ताञ्चिरजीविनेऽत्रनभवेद्दोषःपुनर्भूभवः ॥ ७ ॥

भा०टी०–प्रश्नलग्नसे जैसे विधवा योग विचारा इसीप्रकार जातकशास्त्रसे जन्मलग्नसे उत्पन्न विधवा योग विचारकरे (जैसे लिखा भी है–बाल्ये विधवा भौमे पतिसंत्यक्तादिवाकरेऽस्तस्थे। सौरे पापैर्दृष्टे कन्यैव जरां समुपयाति) अन्य च (उत्संष्टारविणाकुजेन विधवा बाल्येऽस्तराशिस्थिते) अर्थात् यदि मंगल स्त्रीके जन्मलग्नसे सप्तम स्थान स्थित हो तो स्त्रीको बालविधवा योग होता है यदि सप्तम स्थानमें सूर्य स्थितहो तो पति स्त्रीको त्याग देता है ॥ यदि कन्याकी जन्मकुंडलीमें शनैश्चर पापदृष्टियुक्त सप्तममें स्थितहो तो कन्याही वृद्धहो जातीहै अर्थात् विवाह नहीं होता और भी लिखाहै(लग्नेव्यये च पाताले जामित्रे चाष्टमे कुजे। कन्या भर्तृविनाशाय भर्ता कन्याविनाशकः) अर्थात् जन्मलग्न चतुर्थ ४ सप्तम ७ द्वादश १२ अष्टम ८ इनस्थानोंमें यदि कन्याके मंगल होय तो पतिका नाशकर्ता है यदि

पुरुषके इनस्थानोमें मंगल होय तो स्त्रीका नाशकर्ता है ॥ इत्यादि योगोंसे अच्छीतरह बालविधवायोगको विचार आगे कहना जो वैधव्यनाशक साविभ्रीका व्रत पिता कन्यासे विधिपूर्वक करवावें ॥ यदि भर्ताके स्त्रीनाशक और स्त्रीके भर्तानाशक योग पडा होय तो उन दोनोंका विवाह कर्ना श्रेष्ठ होता है और वैधव्यकारक योग नहीं रहता ॥ इसमें दृष्टान्त यह है कि जैसे दोनो अंगार आपसमें युद्धकरें तो घातसे दोनोही निस्तेज हो जाते हैं औ सर्प दोनो युद्धकरे तो उस्की विष उस्को उस्की विष उसको नहीं बाधा कर्ती॥ और केवल स्त्रीकेही विधवायोग होय तो एकांतमें कन्याका पिता कन्यासे साविञ्रीव्रत करवाय पश्चात् पिप्पलसे वा घट अथवा सुवर्णमयी विष्णुमूर्तिसे यथोक्त विधिसे विं-वाहकर पीछेसे चिरायुवाले वरसे विवाह करे तो पुनर्भूदोष नहीं होता॥प्रमाणभी जैसे व्रतखंडमे लिखाहै(सावित्र्यादि व्रतादीनि भक्त्या कुर्वन्ति याः स्त्रियः॥ सौभाग्यश्च सुहृत्त्वश्च भवेत्तासां सुसन्ततिः) यह सब अष्टम प्रकरण स्त्रियोंके आचारमें अच्छीतरह आगे लिखाहै ॥ ७ ॥

(अथ पिप्पलव्रत ज्ञानभास्करोक्त लिखतेहैं)

बलवद्विधवायोगेबाल्येसतिमृगीदृशाम् ।
पितारहसिकुर्वीततदङ्गंशास्त्रसम्मतम् ॥
सुदिनेशुभनक्षत्रेचन्द्रताराबलान्विते ।
अवैधव्यकरेयोगेलग्नेग्रहबलान्विते ॥
व्रतारम्भंप्रकुर्वीतबालवैधव्यनाशकम् ।
सुस्नातांचित्रवसनांकन्यांपितृगृहाद्बहिः ॥
नत्वाऽश्वत्थशमीस्थानेयद्वाबदरिकाश्रमे ।

आलवालं प्रकुर्वीतयदिवामृदुकार्पितम् ॥
कुमार्य्याचार्य्यनिर्दिष्टंकृत्वासंकल्पमादरात् ।
करकाम्बुप्रमाणेनसिंचनंप्रतिवासरम् ॥
चैत्रेवाश्विनमासेवातृतीयाऽसितपक्षतः ।
यावत्कृष्णतृतीयान्यामासमेकंयथाविधि ॥
ब्राह्मणानांतथास्त्रीणांपूजनंचसमाचरेत् ।
तदाशिषाप्नुयात्कन्यांसौभाग्यञ्चसुखान्वितम्॥
प्रतिमांपार्वतीनाम्नीं वैणवेभाजनेऽर्चयेत् ।
चंदनाक्षतदूर्वाद्यैर्बिल्वपत्रैर्यथाविधि ॥
उपचारैर्यथाशक्त्यानैवेद्यैः प्रतिवासरम् ।
एवंव्रतप्रभावेणबालवैधव्यनिष्कृतिः ॥
जायतेकन्यकानाञ्चततः पाणिग्रहक्रियाः ।
इत्यश्वत्थव्रतविधानम् ॥

भा०टी०-भावार्थ यह है कि बलिष्ठ स्त्रीको विधवा योग पडनेसे एकांत स्थानमें पिता शास्त्रोक्त उसका भंग वक्ष्यमाण शुभदिन शुभनक्षत्रोंमें करे ॥ कन्याको स्नान करवाय वस्त्र-भूषण पहनाय घर (गृह) से बाहिर (अश्वत्थ) पिप्पल के स्थानमें कन्याको साथ ले पिप्पलकी आलवाल (आढ) चारो तरफ कर कन्या संकलपपूर्वक जो चतुर्थप्रकरणमें लिखाहै॥ प्रतिदिन जलसे सिंचन करे फिर चैत्र वा आश्विन शुक्लतृतीयासे कृष्णतृतीयापर्य्यन्त ब्राह्मण और स्त्रियोंका कन्या पूजनकर उन्के आशीर्वाद कन्या ग्रहण करे ॥ और सुवर्णपात्रमें पार्वतीजीको षोडशोपचार वक्ष्यमाणसे पूजन करे इस व्रतके प्रभावसे कन्यांका बालवैधव्य योग नाश होता है पीछेसे चिरायुवाले वरसे विवाह देवे ॥

(अथ अश्वत्थविवाहविधिःसूर्यारुणसंवादोक्तोलिख्यते ॥)

सुहृद्द्विजगुरून्नारीमङ्गलोच्चारणैः समम् ।
आहूयोद्वाहकालेचरम्यभूमौचमण्डपे ॥
गत्वाप्रणम्यगौरीञ्चगणनाथंचभूरुहम् ।
भवानींचैवमन्थानींपितामंत्रमुदीरयेत् ॥
उद्वाहयिष्येविधिवदश्वत्थेनमनोहराम् ।
कन्यांसौभाग्यसौख्यार्थहेतवेऽहंद्विजोत्तमाः ॥
नमस्तेविष्णुरूपायजगदानंदहेतवे ।
पितृदेवमनुष्याणामाश्रयायनमोनमः ॥
पूर्वजन्मकृतंपापंबालवैधव्यकारकम् ।
नाशयाशुसुखंदेहिकन्यायाममभूरुह ॥ इति ॥

भा०टी०-भावार्थ यह है कि अश्वत्थव्रतके अनंतर मित्र द्विज गुरु स्त्री मंगल शब्दके साथ विवाहकालमें इन सर्वको साथ लेकर सुंदर मण्डपभूमिमें प्राप्त होय गौरी गणेश पिप्पल भवानी मंथानी इन्को प्रणाम कर इस मंत्रसे प्रार्थना कन्याका पिता करे॥ हे ब्राह्मणगण! आपके प्रत्यक्ष सौभाग्य सुख अर्थके लिये अपनी कन्याको अश्वत्थके साथ विवाह कर्त्ता हे जगतआनंद हेतु विष्णुरूप औ पितर देव मनुष्यों-का आश्रय इस अश्वत्थको वारंवार नमस्कार कर साथ प्रार्थना कर्ते हैं भो अश्वत्थदेव पूर्वजन्मकृत जो बालवैधव्यकारक पाप इन्को नाश करो और मेरी कन्याको सुख सौभाग्य देवो ॥ इति ॥ यह प्रार्थनाके मंत्र हैं और विवाहविधि वक्ष्यमाण यथावत मंत्रोंसे कर्नी चाहिये ॥

(अथ कुम्भविवाहः सूर्यारुणसंवादे ॥)

विवाहोक्तेनमंथन्याकुम्भेनचसहोद्वहेत् ।
विवाहात्पूर्वकालेतुचंद्रतारावलेशुभे ॥
पितासंकल्प्यवाद्यश्चविवाहविधिपूर्वकम् ।
सूत्रेणवेष्टयेत्पश्चाद्दशतन्तुविशेषतः ।
कुंकुमालंकृतंदेहंतयोरेकान्तमन्दिरे ॥
ततःकुम्भंविनिस्सार्य्यंप्रभज्यसलिलाशये ।
ततोऽभिषेचनंकुर्यात्पञ्चपल्लववारिभिः ॥
तत्सर्ववस्त्रपूजाद्यंब्राह्मणायनिवेद्यच ॥
कन्यालंकारवस्त्राद्यंब्राह्मणायनिवेदयेत् ॥

प्रार्थना ।

वरुणांगस्वरूपत्वंजीवनानांसमाश्रय ॥
पतिंजीवयकन्यायांश्चिरंपुत्रान्सुखंवरम् ॥
देहिविष्णुवरानन्दंकन्यांपालयदुःखतः ॥

इतिकुम्भविवाहः ।

भा०टी०-भावार्थ यह है कि विवाहके प्रथम शुभदिनमें विवाहोक्तविधिसे मन्थनी कुंभसे संकलपपूर्वक विवाह करे पीछेसे दशतंतुसूत्रसे वेष्टन कर कुंकुम (केशर) लगाय एकान्तमें फिर कुंभको निकाल सलिलस्थानमें प्रक्षेपकर (फेंक) पंचपल्लवसे अभिषेक कन्याको करे अनंतर संपूर्ण कुंभपूजनकी सामग्री ब्राह्मणको दे कन्याकेभी वस्त्रभूषण

---

१ दशतन्तुविधानत इत्यपिपाठः ।

ब्राह्मणको देवे ॥ और वरुणकी प्रार्थना करे हे जीवनके आश्रय वरुणस्वरूप वट कन्याके पतिको चिरंजीवी करो हे विष्णो कन्याकी पालना कर सुख सौभाग्यको देवो ॥ इति ॥ इस प्रकार सुवर्णमयी चतुर्भुज विष्णुकी मूर्ति बनाय विवाह कर यथावत् विधिसे ब्राह्मणको मूर्ति देवे ॥ दानका प्रकार जैसे वहांही लिखाहै यथा ॥

शुभेमासेसितेपक्षेसानुकूलग्रहेदिने ॥
ब्राह्मणंसाधुमामंत्र्यसंपूज्यविविधार्हणैः ॥
तस्मैदद्याद्विधानेनविष्णोर्मूर्तिंचतुर्भुजाम् ॥
शुद्धवर्णसुवर्णेनवित्तशक्त्याथवापुनः ॥
निर्मितांरुचिरांशंखगदाचक्राब्जसंयुताम् ॥
दधानांवाससीपीतेकुमुदोत्पलमालिनीम् ॥
सदक्षिणांचतांदद्यान्मंत्रमेतमुदीरयेत् ॥
यन्मयापूर्वजनुषिघ्नन्त्यापतिसमागमम् ॥
विषोपविषशस्त्राद्यैर्हतोवातिविरक्तया ॥
प्राप्यमानंमहाघोरंयशःसौख्यधनापहम् ॥
वैधव्याद्यतिदुःखौघनाशायसुखलब्धये ॥
महासौभाग्यलब्ध्यैचमहाविष्णोरिमांतनुम् ॥
सौवर्णनिर्मितांशक्त्यातुभ्यंसंप्रददेद्विज ॥
अनघात्वहमस्मीतित्रिवारंप्रवदेदिति ॥
एवमस्त्वितिविप्राशीर्गृहीत्वास्वगृहंविशेत् ॥
ततोवैवाहिकंतातोविधिंकुर्यान्मृगीदृशाम् ॥
इतिविष्णुप्रतिमादानविधिः ॥

भा०टी०– सानुकूल ग्रहदिनमें ब्राह्मणको बुलाय सुवर्णनिर्मित चतुर्भुज शंख चक्र गदा पद्म युक्त पीतवस्त्र वनमाला सहित साथ दक्षिणाके प्रतिमा देय यह मंत्र पढे कन्या की जो मैंने पूर्वजन्ममें पतिसमागम नाशकर्नेसे वा विष उपविष शस्त्रसे पतिको मारा उससे उत्पन्न जो वैधव्य योग उसके नाशके लिये और सुख प्राप्तिके लिये यह सुवर्णमयी महाविष्णुकी मूर्ती हे ब्राह्मण! तुमको दान कर्ती हूं इससे मैं पापरहित भई यह तीन वार कहे एवमस्तु ऐसे ब्राह्मण वाक्यके अनंतर गृहमें आवे तब पिता वरके साथ मंगल शब्द पूर्वक विवाह करै ॥

शास्त्रार्थ।

यदि कोई महाशय शंका करे कि विष्णुमूर्ति कुंभपिप्पल इन्मेंसे एकके साथ विवाह कर फिर द्वितीयवार मनुष्यके साथ विवाह कर्नेसे पुनर्भूदोष स्त्रीको होना चाहिये ॥उसका उत्तर यह है कि जो एक मनुष्यके साथ विवाह कर फिर द्वितीय पुरुषके साथ विवाह किया जाय वह स्त्री पुनर्भू कहलाती है । इस्में हम प्रमाण देते हैं याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ प्रथम (यथा-अक्षता च क्षता चैव पूनर्भूःसंस्कृता पुनः) अर्थात् पतिके मरजाने पर वा जीवतपर जो फिर दूसरे मनुष्यसे संस्कृत विवाही जाय वही पुनर्भू होती है॥ यदि पिप्पलादि विवाहके अंनतर मनुष्यके साथ विवाह होनेसे पुनर्भूदोष है तो याज्ञवल्क्यजीने अक्षता च क्षता यह शब्द किसलिये कथन करा (ऐसे लिख देना था कि पूनर्भूः संस्कृता पुनः) और अक्षता च क्षता इन शब्दोंके अर्थ मिताक्षरा में यह लिखा है पति अक्षत हो अर्थात् जीवत

हो वा (चक्षता) क्षतहो अर्थात् मरगया हो॥ फिर संस्कार कर्नेसें पूनर्भू संज्ञा होती है॥ इसलिये पिप्पल देवादि विवाहसे पुनर्भूदोष नहीं है हम औरभी प्रमाण देते हैं कि जो घटादिविवाहसे पूनर्भूदोष न हो॥ प्रमाण विधान व्रतखंडका जैसे (स्वर्णाम्बुपिप्पलानाञ्च प्रतिमा विष्णुरूपिणी। तयासह विवाहेच पूनर्भूत्वं न जायते। अन्यच्च लक्ष्मी रूपा सदा कन्या हरिरूपं सदा जलम्। हरेर्दत्तञ्च यद्दानंदातुः पापहरं सदा॥अर्थ सुवर्ण घट पिप्पलकी प्रतिमा मूर्ति विष्णुरूप होती है इन्के साथ विवाह कर्नेसे पूनर्भूदोष नहीं होता॥ और लक्ष्मी सदैव कन्या हरिरूप सदैव जल होता है॥इसलिये विष्णुको जो दान दिया जाय वह यजमानके पाप नष्टकर्नेवाला होताहै॥ इसलिये इन्के साथ विवाह कर्नेसे पुनर्भूदोष नहीं प्रत्युत (किञ्च) कन्याका वैधव्यनाशक है॥ और वेदमेंभी सोम, सूर्य, अग्नि पालनकर्नेसे स्त्रीके रक्षक लिखे हैं। और चतुर्थ मनुष्य पति लिखाहै यथा (सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविदउत्तरः। तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः) इस मंत्रका अर्थ विस्तार पूर्वक आगे विवाहप्रकरणमें लिखाहै॥ यदि कोई महाशय अबभी यह आक्षेप करे कि जो वस्तु एकको दानकरे वा भोगनेके लिये दीजाय फिर यदि वही वस्तु दूसरेको भोगनेके लिये दी जाय तो वह उच्छिष्ट (जूठ) होती है और उच्छिष्टका सर्वत्रही निषेध है॥ इस लिये प्रथम विष्णु घट वा पिप्पलको स्त्री दी फिर वही मनुष्यके साथ विवाह दी तो वह भी उच्छिष्ट भई इस लिये मनुष्यको स्वीकार कर्नी नहीं चाहिये॥ उत्तर महाशय मित्रवर आपने युक्तिसे फिर भी वही दोष उच्छिष्ट मान कर लगाया अहो आप बड़े निपुण हो और अति चंचलबुद्धि है परंतु आपको विनयपूर्वक हम यह कहते हैं कि आप उच्छिष्टका त्याग

सर्वत्र कर्तेहो वा आपके पूर्व पूर्व पुरुषोंने किया जैसे मधु (शहत्त) (दुग्ध) यहभी उच्छिष्टही है यह आप किस लिये भक्षण कर्ते हो और श्राद्धादि कर्मोंसे मधुवातादि मंत्रोंसे मधु पितरोंके अर्पण कर्ते हो वा नहीं॥बस अब चुपहोगये भला जरासा तो कहिये बस अब नहीं कहेंगे निरुत्तरभये अच्छा अपने प्रश्नका तो उत्तर श्रवण कीजिये महात्मन् जैसे मधु मक्षिकासे दुग्ध वत्ससे कमल भ्रमरोंसे उच्छिष्ट भयाभी देवपितृकर्ममें आता है और जगत्को पंचगव्यादिसे पवित्र कर्त्ता है उसीप्रकार विष्णु घट पिप्पलसे संस्कृत स्त्री मनुष्यके साथ विवाह कर्नेके अनंतर पुत्रपौत्रादिसंतानसे शुभलोककी प्राप्ति औरइसलोकमें सुख देती है यथा(याज्ञवल्क्यस्मृतिमें लिखा है अध्यायः १ लोकानंत्यं दिवःप्राप्तिः पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः। यस्मात्तस्मात्स्त्रियः सेव्याः कर्त्तव्याश्च सुरक्षिताः इति ॥)और विधानखंडमेंभी लिखा है यथा (यथालिमुक्तकमलं देवानां पूजनायवै ॥ अर्ह भवति सर्वत्र तथा कन्या नृणां भवेत् ॥-) इस लिये भास्कराचार्य मंथानीसे कन्याका विवाह यत्नसे कर्त्ता भया ॥ और रेणुक महर्षि अश्वत्थसे कन्याका विवाह कर्त्ता भया ॥ प्रमाण अभिधानखण्डका जैसे (मन्थन्या भास्करो यत्नात्कृतवान्दुहितुर्विधिम् ॥ रेणुकोपि स्वकन्यायास्तरूद्वाहं चकार सः) इसलिये पुत्रवत् कन्याकीभी जन्मकुण्डली सर्व महाशयजनोंको अवश्य बनानी चाहिये॥ यदि कर्मानुसार जिस्के योग पड़ाहो उस्का शास्त्रोक्त उपाय करानेसे शांति होजाय तोसुखहो॥इत्यलम्॥

प्रभलभक्षणेयाहशाऽपत्ययुक्स्वेच्छयाकामिनीतत्र चेदाव्रजेत् । कन्यकावासुतोवातदापण्डितैस्ताहशा पत्यमस्याविनिर्दिश्यते ॥

भा०टी०–प्रश्नकालमें जैसी संतानयुक्तस्त्री अपनी इच्छासे उसस्थान आजाय ॥ वा कन्या वा बालक बुद्धिवान् ज्योतिषी तादृश उसकी संतान कहै ॥ अर्थात् जैसी स्त्री कन्या बालक प्राप्त होय वैसेही उसको स्त्री पुत्रादिक मिलते हैं ॥

शङ्खभेरीविपंचीरवैर्मंगलंजायतेवैपरीत्यंतदालक्षयेत् ।
वायसोवाखरःश्वाशृगालोपिवाप्रश्नलग्नक्षणेरौतिनादंयदि ॥

भा०टी०–शंख दुंदुभी वीणा सतारका शब्द प्रश्नकालमें शुभ होता है ॥ और काक श्वान गर्दभ शृगाल यह प्रश्नकालमें शब्द करे तो निषिद्ध अशुभहै ॥

अथराशिमेलनम् ।

वरस्यपंचमेकन्याकन्यायानवमेवरः ।
एतत्रिकोणकंग्राह्यंपुत्रपौत्रसुखावहम् ।
मरणंपितृमात्रोश्चसंग्राह्यंनवपंचकम् ।
षडष्टकेभवेन्मृत्युर्यत्नंतस्याविचारयेत् ।

भा०टी०– वरकी राशिसे कन्याकी राशि पंचम ५ होय कन्याकी राशिसे वरकी राशि नवम ९ होय तो यह त्रिकोण शुभ है ॥ यदि विपरीत हो कन्यासे ५ में वर वरसे९ कन्या हो तो मातापिताकी मृत्यु कहै ॥ इसलिये राशिको विचारले ॥

अथबलम् ॥

वरस्यभास्करबलंकन्यायाश्चगुरोर्बलम् ।
द्वयोश्चंद्रबलंग्राह्यंविवाहेनान्यथाभवेत् ॥

अष्टमेचचतुर्थेचद्वादशेचदिवाकरे ।
विवाहितोवरोमृत्युंप्राप्नोत्यत्रनसंशयः ॥
जन्मन्यथद्वितीयेचपंचमेसप्तमेपिवा ।
नवमेचदिवानाथेपूजयापाणिपीडनम् ॥
एकादशेतृतीयेवाषष्ठेवादशमेपिवा ।
वरस्यशुभदोनित्यंविवाहेदिननायकः ॥

भा०टी०-वरको सूर्यका बल कन्याको बृहस्पतिका बल दोनोंको चंद्रबल ग्रहणकर्ना अन्यथा विवाह नहीं होता अर्थात् इन्की शुद्धिविन विवाह शुभ नहीं होता ॥ यदि वरको अष्टम ८ चतुर्थ ४ द्वादश १२ में सूर्य होय तो विवाहसे वर मृत्युको प्राप्त होता है इसमें कुछ संशय नहीं है ॥ यदि सूर्य जन्मका १ वा द्वितीय पंचम ५ सप्तम ७ नवम ९ सूर्य होय तो पूजासे विवाह होता है अर्थात् पूजनीय है ॥ यदि सूर्य ११ एकादश ३ तृतीय ६ छठे १० दशमें होय तो वरको अतिशुभ होता है ॥

अष्टमेद्वादशेवापिचतुर्थेवाबृहस्पतौ ।
पूजातत्रनकर्तव्याविवाहेप्राणनाशकः ॥
षष्टेजन्मनिदेवेज्येतृतीयेदशमेपिवा ।
भूरिपूजापूजितःस्यात्कन्यायाःशुभकारकः ॥
एकादशेद्वितीयेवापंचमेसप्तमेपिवा ।
नवमेचसुराचार्यःकन्यायाः शुभकारकः ॥

भा०टी०-बृहस्पति८।१२।४।हो तो शुभ नहीं पूजामत करो॥ यदि ६। १। ३। १०। बृहस्पति होतो बहुत पूजा कर्नेसे शुभ कर्ता है ॥ यदि बृहस्पति ११। २। ५। ७। ९। होतो क-

न्याको शुभ होता है॥ इसी प्रकार चंद्रमा १।४।६।८।१२ स्थानमें शुभ नहीं विशेषकर इन्को देखना योग्य है॥

अथविवाहनक्षत्राणि।

विश्वस्वातीवैष्णवपूर्वात्रयमैत्रैर्वस्वाग्नेयैर्वाकरपीडोचितर्क्षैः। वस्त्रालंकारादिसमेतैःफलपुष्पैस्सन्तोष्यादौस्यादनुकन्यावरणंहि॥

भा०टी०–अब कन्याका वरण लिखते हैं ज्येष्ठा स्वाती श्रवण पूर्वात्रय अनुराधा धनिष्ठा कृत्तिका अथवा पाणिग्रहणोचित नक्षत्रोंमें फल पुष्प वस्त्रालंकारादिसे कन्याको संतुष्टकर पीछेसे वरण करे॥

धरणिदेवोऽथवाकन्यकासोदरःशुभदिनेगीतवाद्यादिभिःसंयुतः॥ वरवृतिंवस्त्रयज्ञोपवीतादिभिर्ध्रुवयुतैर्वह्निपूर्वात्रयैराचरेत्॥

भा०टी०–अथ बालक वरण लिखते हैं॥ब्राह्मण वा कन्याका भ्राता (भाई) शुभदिनमें गीतादिवाद्यसहित होय वस्त्रयज्ञोपवीतादिसे। उत्तराफाल्गुनी। उत्तराभाद्रपदा। उत्तराषाढा। रोहिणी। कृत्तिका। पूर्वाफाल्गुनी। पूर्वाभाद्रपदा। पूर्वाषाढा इन नक्षत्रोंमें वरका वरण करे॥ इस प्रकार वर वरण कर पीछेसे कन्याको वस्त्रालंकारादि श्वशुरगृहसे जो प्राप्त उससे पूर्वोक्त नक्षत्रोंमें वरण कर्ना॥

गुरुशुद्धिवशेनकन्यकानांसमवर्षेषुपडब्दकोपरिष्टात्। रविशुद्धिवशाच्छुभोवराणामुभयोश्चंद्रविशुद्धितोविवाहः॥

भा०टी०–वृहस्पतिजीकी शुद्धिसे कन्याका षट् ६ व-

र्षके ऊपर अष्टम ८ दशम १० समवर्षमें विवाह शुभ है ॥ और सूर्यकी शुद्धिद्वारा वरका विवाह श्रेष्ठ है और वर कन्या दोनोंका चंद्रमाकी शुद्धिसे विवाह शुभहोता है भःवार्थ यह है कि कन्याकी जन्मराशिसे गुरु औ वरकी जन्मराशिसे सूर्य और दोनोंको चंद्रमाजीकी शुद्धिसे श्रेष्ठ विवाह होता है ॥ इसी आशयको काशीनाथजी कहतेहैं॥(वरस्य भास्करबलं कन्यायाश्च गुरोर्बलम् ॥ द्वयोश्चंद्रबलं ग्राह्यं विवाहो नान्यथा भवेत् ॥)

मिथुनकुम्भमृगालिवृपाजगेमिथुनगेपिरवौत्रिलवेशुचिः । अलिमृगाजगतेकरपीडनंभवतिकार्तिकपौपमधुष्वपि ॥

भा०टी०–मिथुन कुंभ मकर वृश्चिक वृष मेष इन राशियोंमें सूर्य होय अथवा आषाढके १० दशदिन पर्यंत मिथुन राशिगत सूर्य हो वा वृश्चिक मकर मेषगत सूर्य्य होय तो कार्तिक पौष चैत्रमें भी पाणिग्रहण शुभ है ॥

आद्यगर्भसुतकन्ययोर्द्वयोर्जन्ममासभतिथौकरग्रहः । नोचितोथसवुधैःप्रशस्यतेचेद्वितीयजनुपोःसुतप्रदः ॥

भा०टी० आद्यगर्भ प्रथमगर्भ अर्थात् ज्येष्ठ पुत्र वा कन्या होय तो उन दोनोंका जन्मके मासमें वा जन्म तिथिमें अथवा जन्म नक्षत्रमें पाणिग्रहण श्रेष्ठ नहीं यदि वह दोनों दूसरें गर्भके होय तो जन्ममास तिथि नक्षत्रमें विवाह पुत्रके देनेवाला है ॥

ज्येष्ठद्वंद्वंमध्यमंसंप्रदिष्टंत्रिज्यैष्टंचेन्नैवयुक्तंकदापि ॥ केचित्सूर्यवह्निगंप्रोक्तमाहुर्नैवान्योन्यंज्येष्ठयोःस्याद्विवाहः॥

भा०टी०-ज्येष्ठ बालक ज्येष्ठकन्याका विवाह मध्यम होता है यदि ज्येष्ठका महीना (मास) ज्येष्ठ बालक ज्येष्ठाही कन्या यह तीन ज्येष्ठ किसी कालमेंभी श्रेष्ठ नही अति निषिद्ध है ॥ कई आचार्योंका यह मतहै की जिसकालपर्यंत कृत्तिकामें सूर्य हो उतना काल ज्येष्ठमास निषिद्धहै ॥ परंतु सिद्धांत मत यही है वरकन्या ज्येष्ठोंका आपसमें विवाह श्रेष्ठ नही ॥

सुतपरिणयात्पण्मासान्तःसुताकरपीडनंनचनिजकुले
तद्वद्वामण्डनादपिमुण्डनम् ॥नचसहजयोर्देयेभ्रात्रोःस
होदरकन्यकेनसहजसुतोद्वाहोब्दार्धेशुभेनपितृक्रिया ॥

भा०टी०-पुत्रविवाहके अनंतर षण्मास ६ के बीचमें कन्याका विवाह शुभ नहीं ॥ इसप्रकार अपनी कुलमें मंडन (विवाहकर्म)के पीछे मुंडन(चूडाकर्म) षट् ६ महीनेके अन्तर श्रेष्ठ नहीं और एकपिताके दो पुत्रोंको दो भ्राताकी कन्यासे सहोदर(सगे) भाइयोंका विवाह शुभ नही ॥ यदि एक पिताकी दो कन्या होय तो एकपिताके दो पुत्रोंसे विवाह का दोष नही ॥ सहोदर शब्दका यह अर्थ है कि एकमाता के गर्भसे नाहो और एकपितासे सपत्नीमें उत्पन्न भ्राता सहोदर नहीं कहावे ॥ प्रमाण (समानोदर्य्यसोदर्य सगर्भ्यस्तु सनाभयः इत्यमरः) और बालक कन्याके विवाह केअनंतर षट् मास ६ पर्यन्त पितृक्रिया श्राद्धादि शुभ नहीं है ॥

वध्वावरस्यापिकुलेत्रिपूरुपेनाशंव्रजेत्कश्चनानिश्चयो
त्तरम् । मासोत्तरंतत्रविवाहइप्यतेशान्त्याथवासूतक
निर्गमेपरे ॥

भा०टी०-वधूवरके तीनपुरुषमें यदि निश्चयके अनंतर कोई नाशको प्राप्तहो जाय एक मासके अनन्तर विवाह करे। अथवा कूष्मांड शांतिकर विवाह करे। कोई आचार्य सूतक पातककी निवृत्तिके अनंतर कहते हैं ॥ यदि कन्यादानहो चुकाहो फिर सूतक पातकपडेतो भोजनादि सर्व विवाहांग कर्नेका दोष नहीं ॥

चूडाव्रतंचापिविवाहतोव्रताच्चूडाचनेष्टापुरुषत्रयान्तरे। वधूप्रवेशाच्चसुताविनिर्गमः षण्मासतोवाब्दविभेदतः शुभः ॥

भा०टी०-विवाहसे चूडाकर्म चूडाकर्मसे विवाह षण्मासके बीच श्रेष्ठ नहीं इसप्रकार वधूप्रवेशसे कन्याका निर्गम ६ षट् मासके अन्तर श्रेष्ठ नहीं। यदि वर्षका भेद होयतो दोष नहीं ॥ विवाहमें सूर्यसंक्रान्तिसे वर्षका भेद होताहै ॥

॥ अथविवाहमुहूर्तानि ॥

निर्वेधैःशशिकरमूलमैत्रपित्र्यब्राह्मांत्योत्तरपवनैः शुभोविवाहः। रिक्ताऽमारहिततिथौशुभोह्निवैश्वप्रांत्यांघ्रिश्रुतितिथिभागतोऽभिजित्स्यात् ॥

भा०टी०-वेधरहित मृगशिर हस्त मूल अनुराधा मघा रोहिणी रेवती उत्तरात्रयं ३ स्वाती यह नक्षत्र विवाहमें शुभहैं ॥ चतुर्थी ४ नवमी ९ चतुर्दशी १४ अमावस ३० इनसे रहित तिथीयाँ श्रेष्ठहैं ॥ विवाहमें चंद्र बुध बृहस्पति शुक्र यह वार शुभ होतेहैं ॥ उत्तराषाढाका अंतका चरण श्रवणकी ४ चारघटी अभिजित नक्षत्र होताहै ॥ और राशि वर्ण योनि गण षडाष्टक नवपंचक द्विर्द्वादश राशिनाडी

चक्रवर्ग लत्तादिकदश १० दोष अवश्य विचारणे योग्यहैं इस लिये सारणी बनाकर सबकी समझमें आनेवाली अति-सुगम रीतिसे आगे लिखेहैं ॥

अथ राशिचक्रम् ॥

मेष	वृष	सिंह	धन मकर पू.	चतुष्पद
मिथुन	कन्या	तुला	कुंभ	नर द्विपद
मकर परार्द्ध	मीन	०	०	जलचर
वृश्चिक	कर्क	०	०	कीटसंज्ञक

पुरुषकी राशि स्त्रीकी राशिसे बली उचित है और सम्पूर्ण चतुष्पद द्विपदोंके वश्यहैं सिंहके विना ॥ जलचरभक्ष्य है सर्प विछु भयदायक है ॥

अथ वर्ण चक्रम् ॥			
मीन	वृश्चिक	कर्क	ब्राह्मण
मेष	सिंह	धन	क्षत्री
वृष	मकर	कन्या	वैश्य
मिथुन	कुंभ	तुला	शूद्र

वरस्यवर्णतोधिकावधूर्नेश्यतेशुभः। अर्थात्वरके वर्णसे अधिक वधू श्रेष्ठ नहीं वरका वर्ण कन्यासे अधिक श्रेष्ठ है.

अथ योनिचक्रम् ॥

अश्विनी	स्वा० हस्त	धनि. पू भा	भरणी रेवती	पुष्य कृत्ति	श्रवण पू पा	उ षा अभि	मृग रोहिणी	नक्षत्र
अश्व घोडा	महिष	सिंह	गज	छाग मढा	वानर	नकुल	सर्प	योनयः
ज्येष्ठा अनु.	मूला आर्द्रा	श्लेषा पुनर्व.	मघा पू फा	चित्रा विशा	उ फा उ भा			नक्षत्र
मृग श्वान अनयोर्वैर		बिला चूहा अनयोर्वैरं		व्याघ्र गौ अनयोर्वैरं		भैसा अश्व अनयोर्वैरं..		योनिःवैरं

वैर . . वैर वैर वैर

यह योनिचक्र विवाहमें सेव्यसेवक भावमें मैत्रीकार्यमें अवश्य विचारणा चाहिये.

अथ गणचक्रम् ॥

म	श्ले	ध	ज्ये	मूला	शत	कृत्ति	चि	वि	राक्षस
पू फा	पू पा	पू भा	उ फा	उ पा	उ भा	रोहि	भर	आर्द्रा	मनुष्य
अनु	पुन	मृ	श्र	रेव	स्वा	ह	अश्वि	पुष्य	देवता

अपने गणके साथ परमप्रीति देवता मनुष्योंकी सम देवता राक्षसोंका युद्ध मनुष्य राक्षसकी मृत्यु गणोंकी आपसमें होती है ॥

अथ षडष्टकचक्रम् ॥

मे	वृष	मि	कर्क	सिं	क	पुरुषराशि मृत्युः
क	तु	वृ	ध.	म	कुं	स्त्रीराशि मृत्युः

अथ नवपंचकचक्रम् ॥

मे	वृ	मि	क	सिं	क	कुं	अन्योन्यपुरुषसंतानहानि
सिं	क	तु	वृ	ध	म	मिथु	स्त्री राशिकीकलि होतीहै

अथ द्विर्द्वादशचक्रम् ॥

मे	वृ	मि	कर्क	सिं	क	वृ	म	मी	दारिद्र्यं
वृ	मि	कर्क	सिं	क	तु	ध	कुं	मे	दारिद्र्यं

मृत्युःषडष्टके ज्ञेयोऽपत्यहानिर्नवात्मजे।
द्विर्द्वादशेनिर्द्धनत्वंद्वयोरन्यत्रसौख्यकृत् ॥
अथनाडीचक्रम.



दम्पत्योरेकनाड्यांपरिणयनमसन्मध्यनाड्यांहिमृत्युः। अर्थात् स्त्रीवरका एक नाडीमें स्थित नक्षत्रोंमें विवाह अशुभ होताहै और मध्यम नाडीमें मृत्यु होतीहै ॥ इसलिये तृतीय नाडी शुभ है

अथ वर्गचक्रम् ॥

गरुड	बिडाल	सिंह	श्वान	सर्प	मूषिक	मृग	मेंढा
अ ॥	क	च	ट	त	प	य	श
इ १	ख	छ	ठ	थ	फ	र	ष
उ ७	ग	ज	ड	द	ब	ल	स
ऋ ६	घ	झ	ढ	ध	भ	व	ह
लृ ६	ङ	ञ	ण	न	म		

अपने वर्गमें परम प्रीति होती है और अपने वर्गसे पंचम वर्ग शत्रु होताहै और चतुर्थ मित्र औ तृतीय उदासीन होताहै इन्का फल वर्ग सदृशहै.

अथ राशिस्वामिचक्रम्।

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी	राशयः
मं	शु	बु	चं	सू	बु	शु	मं	बृ	श	श	बृ	स्वामिनः

अथ राशिचक्रम।

मे	वृ	मि	क	सिं	क	तु	वृ	ध	म	कुं	मी
चु	इ	का	हि	म	टो	रा	तो	ये	भोजू	गु	दि
चे	उ	कि	हु	मि	प	रि	न	यो	जजे	गे	दु
चो	ए	कु	हे	मु	पि	रु	नि	भ	जिजो	गो	थ
ला	ओ	घ	हो	मे	पुं	रे	नु	भि	खिख	स	झ
लि	वा	ङ	डा	मो	प	रो	ने	भू	खू	सि	थ
लु	वि	छ	डि	टा	ण	ता	नो	ध	खे	सु	दे
ले	वु	के	डु	टि	ठ	ति	या	फा	खो	से	दो
लो	वे	को	डे	टु	पे	तु	यि	ढा	ग	सो	च
अ	वो	हा	डो	टे	पो	ते	यु	भे	गि	द	चि

अथ लत्ताचक्रम्।

सूर्य	चंद्र	मंगल	बुध	बृ	शुक्र	शनि	रा	विवाहनक्षत्र
पू. पा	पू भा	भर	मघा	उ भा	पुष्य	शत	उ फा	रोहि
उ षा	उ भा	कृ	पू फा	रेवती	श्ले	पू भा	ह	मृगशिरा
उ भा	रो	पुष्य	वि	मृ	चि	कृ	ज्ये	मघा
अश्विनी	आर्द्रा	मघा	ज्येष्ठा	पुन	वि	मृ	पू षा	उत्तराफा
भरणी	पुष्य	पू फा	मूल	पु	अनु	आ	उ षा	हस्त
रो	श्ले	ह	उ षा	म	मू	पुष्य	ध	स्वाती
आ	पू फा	स्वा	ध	उ फा	उ षा	म	पू भा	अनुराधा
पुष्य	ह	अनु	पू भा	चि	धनि	उ फा	रे	मूल
म	स्वा	मृ	रे	वि	पू भा	चि	भ	उत्तराषाढा
स्वा	पू षा	श	मृ	उ षा	कृ	मृ	पु	उत्तराभाद्रपदा
चि	उ भा	पू भा	आ	श्र	रो	पू षा	पुष्य	रेवती

यह लत्तादोष विवाहादि शुभकार्य्योंमें वर्जित है. विशेषकर मालव देशमें अवश्य वर्जनीय है ॥

अथ पातदोषचक्रम् ।

वैधृति	हर्षण	व्यतीपात	शूल	गंड	योगानाम्

अन्ते विवाहनक्षत्रं यथा गंड योग १८ घटी रेवती २० वा २८ घटी पातेन पतितं नक्षत्रं विवाहे वर्ज्यं कुरु जांगलदेशे अवश्यं वर्ज्यम् ॥

अथ युतिदोषचक्रम् ।

चं. सू.	चं. म.	चं बु	चं बृ	चं शु	चं श	चं रा	युति
दारिद्र्यं	मरणं	शुभं	सौख्यं	सापत्न्यं वैराग्यं	मृतिः	मृतिः	फलं

अथ वेधचक्रम् ।

रो.	मृ.	म.	उफा.	ह.	स्वा.	अनु.	मू.	उ.षा.	उ.भा.	रेव.	विवाह न.
अभि.	उ.षा,	श्र.	रे.	उ.भा.	श.	भ.	पु.	मृ.	ह.	उ.फा.	सूर्योदयः

अथ चरणवेधचक्रम् ।

प्र.	प्र.	प्र.	प्र.	
४	१	२	३	नक्षत्रके प्रथम पादमें ग्रहको विवाह नक्षत्रके चतुर्थ पादका वेध है विवाहमें सर्व देशमें वेधवर्ज्य है अत्याव-
१	४	३	२	श्यकमें चरणवेध वर्जनीय है ।

अथ यामित्रनक्षत्रचक्रम् ।

रो.	मृ.	म.	उ.फा.	ह.	स्वा.	अनु.	मू.	उ.षा.	उ.भा.	रे.	वि.न
अनु.	ज्ये.	ध.	पू.भा.	उ.भा.	अश्वि.	कृ.	मृ.	पु.	उ.फा.	ह.	ग्रहा

लग्नसे चंद्रमासे सप्तम ग्रह यामित्रकारक होता है अथवा लग्न नवांशसे वा चंद्रराशिस्थ नवांशसे पंचपंचाशत ५५ नवमांशमें जो ग्रह होय वह यामित्रकारक होता है शुभ नहीं होता है ॥

अथ बुधपंचकचक्रम् ।

८.	२.	४.	६.	१. ०	अंक.
रोग.	वह्नि.	राजा.	चौर.	मृत्यु.	बाण

शुक्ल प्रतिपत्से गततिथि लग्नसे युक्त कर नौसे भागले शेष रहा अंक बाण जानना ॥ यह दक्षिण देशमें निषिद्ध है-

अथ सर्वदेशे बुधपंचकम्

रोग	वन्हि	राज	चौर	मृ यु	बाणः ५ दिने
०८ १७ २६	०२ ११ २० २४	०४ १३ २२ ३१	०६ १५ २५	०१ १० १९ २८	सर्यसंक्रांतिमें इन दिनोंमें बाण है ॥
सूर्य	भौम	शनि	मंगल	बुध	इन दिनोंमें
व्रतमे	गृह गोपमें	नृप सेवा	यात्रामें	विवाहमे	इन कार्यामें वर्जित है ॥
रात्रिमें	दिनमें	दिनमे	रात्रिमें	संध्यामे	

एकार्गलचक्रम्

व्या.	गड.	व्यति.	वि०.	शूल.	वैधृति.	वज्र.	परि.	ऽतिग

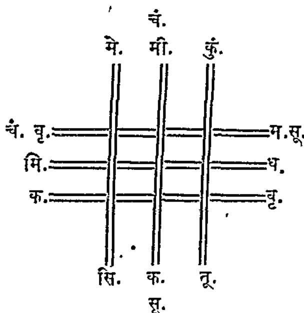
यदि सूर्यनक्षत्रसे विवाहनक्षत्र विषमऽभिजित् सहित स्थित हो तो एकार्गल योग कुरुबाल्हीक देशमेंवर्जित है.

अथोपग्रहाः

५	८	१०	१४	७	१९	१५	१८	२१	२२	२३	२४	२५

यदि सूर्यनक्षत्रसे इन अंकोंमें विवाहनक्षत्र होय तो उपग्रह दोष होताहै ॥

(अथ क्रांतिसाम्यम्)



अर्थात् चंद्रमा सूर्य अन्योन्य नक्षत्रगत होय सन्मुख स्थित होय तो क्रांतिसाम्य दोष होताहै विवाहमें शुभनहीं होता ॥

(अथ दग्धातिथि)

मीन. चैत्र.	वृष. जेष्ठ.	मेष. वैशाख	कन्या. आश्विन	वृश्चि मार्गशी.	मकर. माघ.	मासोंमे.
२	४	६	८	१०	१२	दग्धातिथि
धन. पौष.	कुंभ. फाल्गुन.	कर्क. श्रावण	मिथु. आषाढ.	सिंह भादो.	तुला. कार्तिक	मासोंमें
१	. ४	६	८	१०	१२	दग्धातिथि

यह शुभ कर्मोंमें दग्धातिथी वर्जित हैं ॥

(अथ दशयोगाः)

सूर्य चंद्र नक्षत्र योगः २७ शेषः ॥									
००	०१	४	६	१०	११	१५	१८	१९	२०
वात	ऽभ्र	ऽग्नि	नृप	चौर	मृति	रोग	वज्र	वाद	क्षिति

यथा सूर्यर्क्ष श्रवण २२ चंद्रर्क्ष धनिष्ठा २३ अनयोर्योगः४५ भशेषः २७ सप्तविंशातितष्टः १८ वज्रपातयोगः ॥

(अथ पंग्वंधकाणलग्नानि)

मे	वृ	मि	कर्क	सिं	क	तू	वृ	ध	म	कुं	मी
अंध	अंध	अंध	अंध	अंध	अंध	बधिर	बधि.	बधिर	बधिर	पंगु	पंगु
दिन मे	दिन में	रात्रि में	रात्रि में	दिन में	रात्रि में	अप राह्णमें	अप राह्णे	अप राह्णे	संध्या में	सं०	सं०

यहं गौड मालव देशमें त्याज्यहै अथवा गुरुदृष्टिसे किसी स्थानमें भी दोष नहीं हैं ॥

(अथ ग्रहनैसर्गिकमैत्रीचक्रम्)

सूर्य	चंद्रमा	मंगल	बुध	बृहस्पति	शुक्र	शनि	ग्रहाः
मं० बृ० चं०	सूर्य बुध	चं० बृ० सूर्य	सूर्य शुक्र	सूर्य मं० चं०	बुध शनि	शुक्र बुध	मित्र
बु	बृ० शु० श० मं०	शुक्र शनि	मं० श० सूर्य	शनि	मंगल बृहस्पति	बृहस्पति	सम
शुक्र शनि		बुध	चंद्रमा	शुक्र बुध	सूर्य चं०	सू० चं० मंगल	शत्रु

प्रोक्तिदुष्टभकूटकेपरिणयस्त्वेकाधिपत्येशुभो
ऽथोराशीश्वरसौहृदेपिगदितोनाडयृक्षशुद्धिर्यदि ॥
अन्यर्क्षेशपयोर्बलित्वसखितेनाडयृक्षशुद्धौतथा
ताराशुद्धिवशेनराशिवशताभावेनिरुक्तोबुधैः ॥

भा०टी०-दुष्टभकूटमेंभी विवाह शुभ होताहै यदि दोनों- राशिका स्वामि एकहो अथवा दोनोंकी आपसमें मैत्रीहोय।

(अथलग्नशुद्धिमाह)

कार्मुकतौलिककन्यायुग्मलवेझषगेवा ॥ यर्हिभवेदुप यामस्तर्हिसतीखलुकन्या ॥ व्ययेशनिःखेऽवनिजस्तृ तीयेभृगुस्तनौचंद्रखलानशस्ताः। लग्नेट् कविग्लौश्च रिपौमृतौग्लौर्लग्नेट् शुभाराश्चमदे च सर्वे ॥ त्र्यायाष्ट षट्सुरविकेतुतमोर्कपुत्रास्त्र्यायारिगःक्षितिसुतोद्विगु णायगोब्जः ॥ सप्तव्ययाष्टरहितौज्ञगुरू सितोष्टत्रि द्यूनषड्व्ययगृहान्परिहृत्यशस्तः ॥ त्याज्यालग्नेऽध योमन्दात् षष्ठेशुक्रेंदुलग्नपाः। रंध्रेचंद्रादयःपंचसर्वे स्तेऽब्जगुरूसमौ ॥

भा०टी०-धन तुला कन्या मिथुन मीन इन लग्नोंमें वा इनके नवमांशेमें विवाह होवे तो कन्या सती होतीहै। और चरलग्नका नवांश न होवे तुला मकरमें चंद्रमा होवे तब चरलग्न भी शुभहै ॥ और लग्नसे द्वादश १२ स्थानमें शनि दशमे १० मंगल तृतीय ३ शुक्र लग्नमें १ चंद्रमा मंगल श- नि सूर्य शुभ नहीं होते हैं॥ षष्ठ ६ स्थानमें लग्नेश शुक्र चंद्र- मा शुभ नहि॥और अष्टम ८ स्थानमें चंद्रमा लग्नेश बुध बृ- हस्पति शुक्र मंगल शुभ नहीहै ॥ और सप्तम ७ स्थानमें

संपूर्णग्रह शुभ नही होतेहैं । अन्यच्च तृतीय ३ एकादश ११ अष्टम ८ षष्ठ ६ स्थानमें सूर्य केतु राहु शनि श्रेष्ठहैं और तृतीय ३एकादश११ षष्ठ ६ स्थानमें मंगल शुभहै और द्वितीय २ तृतीय ३ एकादश ११ स्थानमें चंद्रमा शुभहै ७ । १२ । ८ । ३ । ६ । इनस्थानके विन और स्थान बुध गुरु शुक्र शुभ है ॥ अन्यच्च ॥ लग्नमें शनि सूर्य चंद्र मंगल ग्रह नहोय और षष्ठ स्थानमें शुक्र चंद्रमा लग्नेश न होय और अष्टम स्थानमें चंद्रमा मंगल बुध बृहस्पति शुक्र नहोय । सप्तम स्थानमें कोई भी ग्रह न होय अर्थात् शुद्ध होवे तो शुभहै कई आचार्य सप्तम स्थानमें चंद्रमा बृहस्पतिको सम कहते हैं ॥

(कर्तरीदोषमाह)

लग्नात्पापावृज्वनृजूरिष्फार्थस्थौयदातदा ॥
कर्तरीनामसाज्ञेयामृत्युदारिद्र्यशोकदा ॥

भा०टी०-लग्नसेद्वितीयस्थान वक्रीग्रह और द्वादश १२ स्थानमें मार्गी ग्रह होय तो कर्तरीदोष होताहै ॥ शुभनही॥

(पुष्टिमाह)

त्रिकोणेकेंद्रेवामदनरहितेदोषशतकंहरेत्सौम्यःशु
क्रोद्विगुणमपिलक्षंसुरगुरुः ॥ भवेदायेकेन्द्रेंगपउतलवे
शोयदितदासमूहंदोषाणांदहनइवतूलंशमयति ॥

भा०टी०-विवाहलग्नसे नवम पंचम प्रथम चतुर्थ दशम यदि बुध होय तो शत १०० दोषका नाश कर्ताहै यदि शुक्र होय तो द्विगुणशत २०० दोषका नाश कर्ताहै बृहस्पति जो होय तो लक्ष १००००० दोषका नाश कर्ताहै यदि एकादश ११ चतुर्थ सप्तम लग्न दशम स्थानमें यदि लग्नेश ऊंन नवमांशेश होय तो दोषोंके समूहको जैसे अग्नि तूलके पुंजको क्षणभरमें नाश कर्ताहै तद्वत् नाश कर्ताहै ॥

(अथसंकीर्णजातीनांविवाहः)

कृष्णेपक्षेसौरिकुजार्केपिचवारेवर्ज्यैनक्षत्रेयदिवा
स्यात्करपीडा। संकीर्णानांतर्हिशतायुःखलुलाभः
प्रीतिप्राप्तिःसाभवतीहस्थितिरेषा॥

भा०टी०-कृष्णपक्षमें शनैश्चर मंगल सूर्य वारमें और विवाहमें वर्जित नक्षत्रोंमें यदि संकीर्ण शवर किरात निषाद भिल्ल पुलिंद म्लेच्छ यवन प्रभृतियोंका विवाह होय तो आयु सुत प्रीतिका लाभदायक होता है॥

(अथगोधूलीलग्नमाह)

पिण्डीभूतेदिनकृतिहेमन्ततौस्यादर्धास्तेतपसम
येगोधूलिः। संपूर्णास्तेजलधरमालाकालेत्रेधायो
ज्यासकलशुभेकार्य्यादौ॥

भा०टी०-जब नक्षत्रादिक शुद्धि न होय तब गोधूली समय सर्वकार्यमें शुभ होताहै जैसे मार्गशिर पौषमें जब पिंडाकार सूर्य होय तो गोधूली समय होताहै (फाल्गुन माघ मेंभी इसीप्रकार) और (चैत्र वैशाख ज्येष्ठ आषाढमें) अर्द्ध-सूर्य जब होय तब गोधूली समय होताहै॥ और श्रावण भाद्रपद (आश्विन कार्तिकमें) संपूर्ण सूर्य अस्त होनेपर गोधूली समय होताहै यह सर्व कार्य्यमें श्रेष्ठहै॥

(अथवधूप्रवेश)

समाद्रिपंचांगदिनेविवाहाद्वधूप्रवेशोऽष्टिदिनांतराले।
शुभःपरस्ताद्विषमाब्दमासदिनेक्षवर्षात्परतोयथेष्टम्॥

भा०टी०-विवाहादिनसे। २। ४। ५। ६। ७। ८। ९। १०। १२। १४। १६। दिनमें इसके ऊपर विषम वर्षमें वा मासमें विवाहदिनसे ५ पंचवर्ष उपरांत यथेच्छ प्रवेश करे॥

ध्रुवक्षिप्रमृदुश्रोत्रवसुमूलमघानिलेवधूप्रवेशःसन्नेष्टोरिक्तार्कभुधपरैः ॥

भा०टी०-हस्त अश्विनी पुष्य अभिजित् उत्तरात्रय रोहिणी मृगशिर चित्रा अनुराधा श्रवण धनिष्ठा मूल मघा स्वाती इन नक्षत्रोंमें वधूप्रवेश श्रेष्ठहै और चतुर्थी ४ नवमी ९ चतुर्दशी १४ यह तिथि न होय और मंगल सूर्य बुध इन वारोंके विना वधू प्रवेश शुभहै ॥

(अथ द्विरागमनमुहूर्त्तः)

चरेदथोजहायनेघटालिमेषगेरवौरविज्यशुद्धियोगतः शुभग्रहस्यवासरे ॥ नृयुग्ममीनकन्यकातुलावृषेवि लग्नगेद्विरागमंलघुध्रुवेचरेस्रपेमृदूडुभिः ॥

भा०टी०-विवाहकालसे विषमवर्ष अथवा विषममास कुंभ वृश्चिक मेषगत सूर्य होय और मिथुन कन्या तुला मीन वृष यह लग्नहोय और सूर्य बृहस्पति शुद्धहोय शुक्र बृहस्पति चंद्र बुध इन दिनोंमें और हस्त अश्विनी पुष्य अभिजित उत्तरात्रय स्वाती पुनर्वसु श्रवण धनिष्ठा शतभिषा मूल मृगशिर रेवती चित्रा अनुराधा इन नक्षत्रोंमें द्विरागमन शुभ होताहै ॥

अथ स्त्रीणां नृपणघटनमुहूर्तम् ॥

त्रिपुष्करादिनमें स्वाति पुनर्वसु श्रवण धनि०शत. हस्त. अश्विनी पुष्य अभिजित् उत्तरा ३ रोहिणी यह नक्षत्र होवे ४।१४।९ तिथिविना मंगलवारविना वार तिथि शुभहै ॥ त्रिपुष्कर योग २।७।१२ तिथिमें शनि मंगल सूर्यवारोंमें विशाखा उ० फा० पुन० कृ० पूर्वाभा० उत्तराषाढा नक्षत्रों ॥ इन तीनोंसे त्रिपुष्कर योग होताहै ॥

अथ कर्णवेधः कन्यानां नासिकावेधः ॥

६।७।८.मासमें विषम वर्षमें चतुर्मास विना श्र० ध० पुष्य मृ० रे० चि० अनु० ह० अश्वि० पुन० अभि० इन नक्षत्रोंमें ॥ शुभ वारोंमें ॥ जन्मका मास रिक्तातिथि अवमतिथिजन्मताराके विना अष्टम शुद्धहो । १।४।७ १०।९।५। इन्में शुभ ग्रहहों।६।११।३ पापीहो।२।७।९। १२लग्नमें बृहस्पति हो तो कर्णवेध श्रेष्ठहै॥ नासिका वेधमें विशेष उत्त०३श० स्वा० शुक्लपक्ष पूर्वाह्न चं० बु० बृ० शु० वार शुभ होतेहैं ॥ नत्थनीभी उक्त मुहूर्तमें पावें ॥

(अथ शुक्रविचारमाह)

दैत्येज्योह्यभिमुखदक्षिणेवादिस्याद्गच्छेयुर्नहिशिशुगर्भिणीनवोढा ॥ वालश्चेद्व्रजतिविपद्यतेनवोढाचेद्वंध्या भवतिचगर्भिणीत्वगर्भा ॥

भा०टी०-यदिशुक्रजी सन्मुख वा दक्षिण भागमें स्थित होय तब बालक गर्भिणी नवीन युवती यह तीन न जाय यदि बालक यात्राकरे तो मृत्युको प्राप्त होताहै और यदि गर्भवती स्त्री जाय तो गर्भरहित होतीहै अर्थात् गर्भ स्रव जाताहै और यदि नवीन युवती यात्राकरे तो वंध्या होजातीहै ॥ और वामांग पृष्टमें शुक्र श्रेष्ठ होताहै यात्रामें ॥

(अथापवादमाह)

नगरप्रवेशविपयाद्युपद्रवेकरपीडनेविबुधतीर्थयात्रयोः ॥ नृपपीडने नववधूप्रवेशने प्रतिभार्गवोभवति दोपकृन्नहि ॥ पित्र्ये गृहे चेत्कुचपुष्पसंभव

स्त्रीणां न दोषःप्रतिशुक्रसंभवः । भृग्वंगिरोवत्सव सिष्ठकश्यपात्रीणां भरद्वाजमुनेःकुले तथा ॥ इति श्रीदैवज्ञाऽनंतरामसुतविरचिते मुहूर्तचिंतामणौ विवाहप्रकरणं समाप्तम् ॥

भा०टी०-अपने नगरमें एकगृहसे द्वितीयगृहमें प्रवेश कर्ना होवे अथवा देशभंग वा राजभंग होय और विवाहमे अर्थात् विवाहको मुख्य रख यात्रामें और देवयात्रा पंचक्रोशी आदि तीर्थ यात्रा गंगादि और नवीन वधूके आगमनमें सन्मुख शुक्र दोषकारक नहि होता प्रमाणभी जैसे बादरायणका (स्वभवनपुरप्रवेशे देशानां विभ्रमे तथोद्वाहे। नूतनवध्वागमने प्रतिशुक्रविचारणं नास्ति ॥ एकग्रामे पुरे वापि दुर्भिक्षे राजविप्लवे। विवाहे तीर्थयात्रायां प्रति शुक्रो न दुष्यति) और कई आचार्य दीपमालाके अनंतर प्रतिपत्में आगमनसे शुक्रका सन्मुख दक्षिण दोष नहि कहते ॥ प्रमाण (अस्तंगते गुरौ शुक्रे सिंहस्थे वा बृहस्पतौ ॥ दीपोत्सवदिने चैव कन्या भर्तृगृहं विशेत् ॥) यदि कन्याके पितृगृहमें कुच पुष्पका संभव हो अनंतर विवाह कर्नेसे शुक्रका दोष नहि होता प्रमाण चंडेश्वरका (पित्र्यागारे कुचकुसुमयोः संभवो वा यदि स्यात्पत्युः शुद्धिर्न भवति सफला सेवितुं स्वामिसद्म ॥) और भृगु अंगिरा वत्स वसिष्ठ कश्यप अत्रि और भरद्वाज इनके कुलमेंभी शुक्रकृत दोष नहि होता ॥ इतिश्री गौतम गोत्र (शौरि) अन्वयालंकृत श्रीदैवज्ञ डुनिचन्द्रात्मज कर्पूरस्थलनिवासि पण्डित विष्णुदत्त वैदिक संगृहीत विवाहमुहूर्त तत्कृतटीका समाप्तिमगात् ॥ समाप्तमिदं प्रथमं प्रकर्णम् ।शुभमस्तु कुलदेव्याः प्रसादात् ॥

अथ यथार्थ गृहचित्र.

पूर्व.

ईशा· देवस्थान | कूप | स्थानगृह | मंथनगृह | पाकगृह. अग्नि

उत्तर: सर्वधाम | भाण्डारगृह | औषध | रतिस्थान

अंगनभूमि

दक्षि: आज्यस्थान | शयनस्थान | द्रव्यादिगोसस्थान

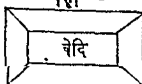
वाय· धान्यगृह | रोदन | भोजनस्थान | विद्याभ्यास | अस्त्रगृह नैर्ऋ·

पश्चिम

अभावे यथाशक्त्या लग्नादिक वीक्ष्य शुद्धगृहं विधेयमिति ॥

मंडपचित्र·

जामातृहस्तचतुष्टय



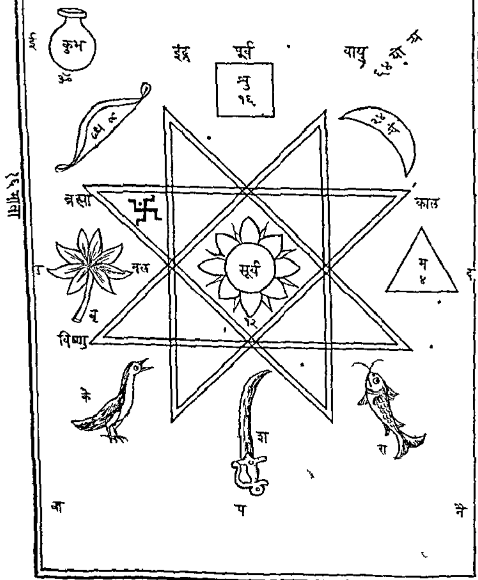
मण्डप.

ई · पू. · अ

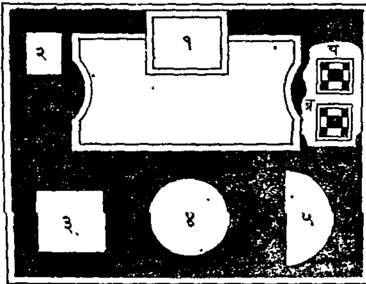
१६। कन्याहस्तषोडश

कौतुकागार · नै

वा


अथ तिलक नाममण्डलचित्रम्
कुंभ
इंद्र
पूर्व
वायु
भृ
१६
ब्रह्मा
काल
सूर्य
१२
म
४
विष्णु
के
श
रा
वा
प
नै

अथ पंचाग्निकुंड चित्रम्.



आहवनीयकुण्ड१ आवसथ्यकुं२ सभ्यकुण्डम्३ गार्हपत्यकुण्ड ४ दक्षिणाग्निकुण्डमिति ५ ब्रह्मासनं- यजमानासनम्.

अथ पात्राणामाकृतयः

आज्यस्थाली १



चरुस्थाली २



प्रणीतापात्र३

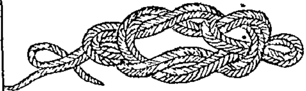
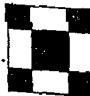
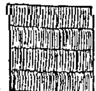


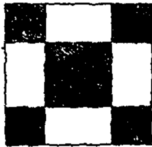
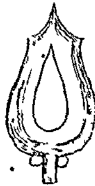
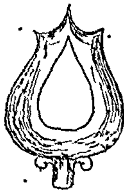
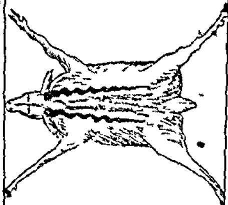
पुरोडाशपात्र४



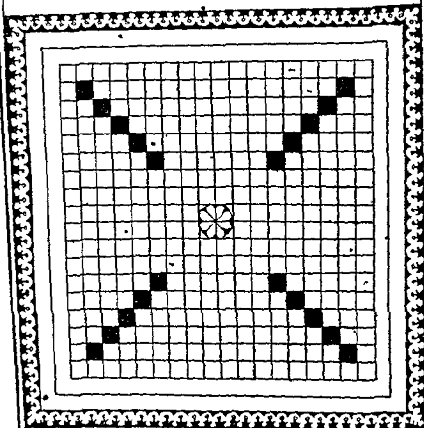
स्रुव५	उपभृत्स्रुक् ६	ध्रुवास्रुक् ७
पुष्करस्रुक्८	अग्निहोत्रहवनी ९	वैकङ्कतस्रुव १०
उलूखलं ११	मुसलं १२	शूर्पम् १३

१४ शम्या	१५ स्फ्य.	शृतावदानं १६	उपवेषः(१७)
कूर्च १८	१९ दृषत्	२० उपल	२१ षड्वृत्त
२२ अग्नि	२३ अरणि	२४ उत्तरारणि	२५ मोघिली.

२६ प्रमन्थ·	२७ नेत्रम्.		
			
२८ अंतर्धानकट·	२९ हविर्धानपात्री	३० प्राशित्रहरणं	३१ चमसा
			
३२ इडापात्री	३३ यजमानासन	३४ पत्न्यासनं	३५ होत्रासन
			

३६ ब्रह्मासनम्	३७ यजमानस्यपात्री
	
३८ पत्नीपात्री.	३९ कृष्णाजिनम्.
	

सर्वतोभद्र.



नांदीमुखश्राद्ध विवाहके प्रथम करना चाहिये ॥ नांदीश्राद्ध श्राद्धविवेक या अन्य ग्रंथान्तरसे देखलें

यज्ञपात्राणि कात्यायनसूत्रे–ऋचोयजूंषिसामा
निनिगदामन्त्रास्तेषांवाक्यं निराकाङ्क्षं मिथः सं
बद्धं–वैकङ्कतानिपात्राणिखादिरःस्रुवः स्फ्यश्चपाल
शीजुहूराश्वत्थ्युपभृद्वारणान्यहोमसंयुक्तानि बाहुमा
त्र्यःस्रुचःपाणिमात्रपुष्करास्त्वग्बालहंसमुखप्रसेक
मूलदण्डाभवन्त्यरत्निमात्रःस्रुवोऽङ्गुष्ठपर्ववृत्तपुष्करः
स्फ्योऽस्यारत्निरादर्शाकृतिः प्राशित्रहरणंचमसा
कृति वा चात्वालोत्करावस्तरेणसञ्चरःप्रणीतोत्क
राविष्टिषु ॥ ३ ॥ विस्तरस्तुतत्रैववासंस्कारभाष्ये
द्रष्टव्यः॥ विस्तरभयान्नलिखितम् ॥ विवाहप्रकरणे
येषांप्रयोजनंतेषांप्रमाणपृं० २२ आरभ्य ४० पर्यंतं
पत्रोपरिलिखितंमन्यान्यादर्शमात्राणि ॥ ॥ इति श्री
दैवज्ञदुनिचंद्रात्मजविष्णुदत्तसंग्रहतिंगृहमण्डपपात्र
चिन्हंनामप्रकरणंप्रमाणंसमाप्तम् ॥ शुभम् ॥ श्रीः ॥

(अथ विनियोगवर्णन)

व्याख्यालिख्यते ॥ विदित होकि आगामि सर्वमंत्रोंका साथ विनियोग दिखाया जावेगा इसलिये प्रथम विनियोगकि पुष्टि कर्त्तेहैं कि विनियोग इस्को कहतेहैं कि ऋषि छंद देवताओंका स्वर कर्ममें योजन करना अर्थात् इस मंत्रका यह ऋषि और यह देवता अमुक छंद इन्का यथार्थ ज्ञानको

विनियोग कहतेहैं और विना विनियोगके मंत्र सिद्धिको प्राप्त नहीं होता इसकारणसे विनियोगकी आवश्यकता है ऋषि किनको कहतेहैं-(द्रष्टारे ऋषयः) अर्थ मंत्रद्रष्टा ऋषि होतेहैं जैसे इस मंत्रका गोतम ऋषि वा भरद्वाज वा आङ्गिरस इत्यादि ऋषिहै वहां समझना कियह मंत्र इस ऋषिको अपने तपोबलसे प्रत्यक्ष स्मरण भया उस्को निश्चय गुरुसे किया था फिर वही मंत्र वेदसे सदृश मिलनेसे वह ऋषि उस मंत्रका भया कि इसने प्रथम मालूम किया ॥ १ ॥ और देवता उन्को कहतेहैं (स्मर्तारः परमेष्ठ्यादयः) अर्थात् जैसे ब्रह्माने अमुक वेदका स्मरण किया विष्णुने अमुक स्मरणकरा इसप्रकार रुद्र इंद्र अग्नि सूर्य चंद्रादि जिस २ मंत्रोंको स्मरण कर्तेभये वह उन२ के देवता भये॥२॥ अब छंद लिखतेहैं (छन्दांसि गायत्रीप्रभृतीनि) अर्थात् गायत्रीसे आदि-लेकर मंत्रोंके छंद होतेहैं अब छंदोंको यथावत् लिखते हैं किजो वेदमंत्रोंके हैं ॥ उक्ता १ अत्युक्ता २ मध्या ३ प्रतिष्ठा ४ सुप्रतिष्ठा ५ गायत्री ६ उष्णिक् ७ अनुष्टुप् ८ बृहती ९ पंक्ति १० त्रिष्टुप् ११ जगती १२ अतिजगती १३ शक्वरी १४ अतिशक्वरि १५ अष्टि १६ अत्यष्टि १७ धृति १८ अतिधृति १९ प्रकृति २० आकृति २१ विकृति २२ संस्कृति २३ अभिकृति २४ उत्कृति २५ यह छंदसंख्या है ॥

अथ गायत्र्यादिछन्दोभेदाः ॥

	छन्दः	गायत्री	उष्णिक्	अनुष्टुप्	बृहती	पंक्ति	त्रिष्टुप्	जगती
१	आर्षी	२४	२८	३२	३६	४०	४४	४८
२	दैवी	१	२	३	४	५	६	७
३	आसुरी	१५	१४	१३	१२	११	१०	९
४	प्राजापत्या	८	१२	१६	२०	२४	२८	३२
५	याजुषी	६	७	८	९	१०	११	१२
६	साम्नी	१२	१४	१६	१८	२०	२२	२४
७	आर्ची	१८	२१	२४	२७	३०	३३	३६
८	ब्राह्मी	३६	४२	४८	५४	६०	६६	७२

इसप्रकार सम्पूर्णछन्दोंके अनेक भेद हैं विस्तारके भयसे लिखते नहीं एक गायत्री छन्द उदाहरण मात्र दिखलादिया है जिनमहाशयोंको और भेद देखनेकी इच्छाहो वह सभाष्य पिंगलसूत्र छंद शास्त्रसे देखलेवे ॥ श्रीः। इति श्रीदेवदत्तात्मजपण्डितविष्णुदत्तकृतऋषिछंददेवतावर्णनं नाम द्वितीयं प्रकरणं समाप्तम् ॥

इति द्वितीयं प्रकरणम्।

ओंस्वस्तिश्रीगणेशायनमः ॥ श्रीगुरवेनमः ॥ अथ कात्यायनीशान्तिप्रयोगः ॥ आदौगणपतिंवन्देविघ्न नाशंविनायकम् । ऋषींश्चदेवजननींग्रहस्थापनमा रभे ॥ १ ॥

भा०टी०–श्रीगुरुचरणसरोजं नत्वा गणपत्यादिदेवांश्च ॥ कात्यायनकृतशान्तेः कुर्वेंनृभाषयाटीकाम् १ काव्यकलापे कुशलाः सन्तियद्यपिसर्वभूदेवाः ॥ सर्वजनसुखातिहेतौ क्रियतेविष्णुदत्तेन ॥ २ ॥ श्रीविघ्नविनाशक विनायक गणपतिजीको तथा ऋषियोंको देवजननी दुर्गाजी अथवा अदितिजीको वंदन कर प्रथम ग्रहोंकी यथावत् स्थितिका प्रारंभ करते हैं ॥ देवजननी इस शब्दसे लक्षणद्वारा ब्रह्मा विष्णु रुद्रादि देवता और ब्रह्मविद्याका ग्रहण होताहै ॥

मण्डलंचततः कृत्वा सर्वतोभद्रमेवच । व्रतोपनयने चूडेयत्रशांतिरुदाहृतां ॥२॥ विवाहादौलिखेन्नित्यंतिलकंनाममण्डलम् । द्वादशाङ्गुलमध्यस्थंवर्तुलाष्टदलंरविम् ॥३॥ चन्द्रमर्द्धंलिखेत्तत्र ह्याग्नेय्यां चतुर्विंशतिः ॥ त्रिकूटंभूसुतंचैवदक्षिणेचतुरंगुलम् ॥ ४ ॥ धनुपाकारंनवाङ्गुल्यमीशानेचबुधंतथा ॥ उत्तरेचगुरुःस्थाप्यः पद्माकारोनवाङ्गुलः ॥ ५ ॥ पूर्वेसंस्थापयेच्छुक्रं चतुष्कोणंनवांगुलम् । खड्गाकृतिनवाङ्गुल्यं प्रतीच्यांशनिमेवच ॥६॥ नैर्ऋत्यांराहुंसंस्थाप्यमत्स्याकारंनवांगुलम् ॥ केतुंदीर्घंयथाराहुंवायव्यांदिशिसंस्थितम् ॥ ७ ॥ स्वस्वदिक्षुग्रहाःस्थाप्याःसंख्या रेखाभवेद्ध्रुवम् । भा

स्करांगारकौरक्तौ श्वेतौ शुक्रनिशाकरौ ॥ ८ ॥ सो
मपुत्रोगुरुश्चैवउभौतौपीतकौस्मृतौ । कृष्णवर्णौभ
वेत्सौरीराहुकेतूचधूम्रकौ ॥ ९ ॥ ब्रह्माविष्णुश्चरुद्रश्च
उत्तरेचतथाऽनलः ॥ इंद्रोवायुर्भवेत्पूर्वेसर्प्पकालौच
दक्षिणे ॥१०॥ ऐशान्यांकलशः स्थाप्य ओंकारादीं
श्चसर्वशः । मातरश्चोत्तरेस्थाप्याआग्नेय्यांयोगिनीं
न्यसेत् । कनिष्टिकाप्रमाणेनरेखाः कार्य्याःप्रयत्न
तः ॥ ११ ॥ स्थूलाः सूक्ष्मानकर्तव्यायदीच्छेच्छ्रे
यआत्मनः ॥ १२ ॥ इतिग्रहस्थापनम् ॥

भा०टी०-व्रतमें उपनयन चूडाकर्म तथा जहां शांति हो वहां सर्वतोभद्र मण्डल रचना चाहिये, विवाहमें तिलकनाम मण्डल लिखे ॥ यह मंडलका चित्र पीछे लिखा है इस लिये अर्थ सुगम होनेसे लिखते नहिं ॥ तथापि सूर्य मंगल यह रक्त वर्णसे लिखे बुध गुरु पीतवर्णसे शुक्र चंद्र श्वेत और कृष्णवर्णसे शनि राहु केतु धूम्रवर्ण लिखे व यदि कल्याण की ईच्छा हो तो ना अति सूक्ष्म और ना स्थूल लिखे ॥

इति नवग्रहस्थापनविधानम् ॥

अथ स्वस्तिवाचनम् ॥

हरिःओम् शुक्लयजुर्वेदअध्याय २५ कं०मंत्र १९

स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाःस्वस्तिनःपू
षाविश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअ
रिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥१॥

यजु० अध्याय ३९ ॥ मंत्र ३६

पयः पृथिव्याम्पय ऽओषधीषुपयोदि
व्यन्तरिक्षेपयोधाः । पयस्वती ः प्प्रदि
शः सन्तुमह्यम् ॥ २ ॥

शु० यजु ० अध्याय ५ मंत्र २१ ॥

विष्णोरराटमसिविष्णोः श्नप्त्रेस्थो
विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्द्ध्रुवोसि । वै
ष्णवमसि विष्णवेत्त्वा ॥ ३ ॥

यजु० अध्याय १४ मंत्र २० ॥

अग्ग्निर्द्देवतावातोदेवतासूर्य्यो देवताच
न्द्रमादेवतावसवो देवता रुद्द्रादेवता
दित्त्यादेवतामरुतोदेवता विश्श्वेदेवादे
वतावृहस्पतिर्द्देवतेन्द्रोदेवता वरुणोदे
वता ॥ ४ ॥

यजु० अध्याय ३६ मंत्र १७ ॥

द्यौःशान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवीशा

न्तिरापःशान्तिरोषधयःशान्तिः॥वनस्प
तयःशान्तिर्विश्वेदेवाः शांतिर्ब्रह्मशा
न्तिः सर्वंशान्तिः शान्तिरेवशान्तिः
सामाशान्तिरेधि ॥ ५ ॥

यजु० अध्याय ३० अनुवाक १ मंत्र ३

विश्वानिदेवसवितर्दुरितानिपरासुव ।
यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥ ६ ॥

यजु० अध्याय १६ अनुवाक ७ मंत्र४८

इमारुद्रायतवसेकपर्दिनेक्षयद्वीरायप्रभं
रामहेमतीः ॥ यथा शमसद्द्विपदेचतुष्प
देविश्वम्पुष्टङ्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम् ७॥

यजुर्वेद अध्याय २ मंत्र १२

एतन्तेदेवसवितर्यज्ञम्प्राहुर्बृहस्पतयेब्र
ह्मणे। तेनयज्ञमवतेनयज्ञपतिन्तेनमामव८॥

यजुर्वेद० अध्याय २ मंत्र १२

मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्यबृहस्पतिर्य्य

ज्ञमिमंतनोत्त्वरिष्टंश्यज्ञंठंसमिमन्दधा
तु। विश्वेदेवासऽइहमादयन्तामोऽम्प्र
तिष्ठ॥ एषवैप्रतिष्ठानाम यज्ञोयत्रैतेनय
ज्ञेनयजन्तेसर्वमेव प्प्रतिष्ठितंभवति।ॐ३म्र

यजुर्वेद अध्याय २३॥ मन्त्र १९॥

गणानान्त्वा गणपतिंठं हवामहेप्प्रिया
णान्त्वाप्प्रियपतिंठंहवामहे निधीनान्त्वा
निधिपतिं ठं हवामहे वसोमम। आहम
जानिगर्भंधमात्वमजासिगर्भंधम्॥

शुक्लयजु अध्याय १६ मंत्र २५॥

नमोगणेभ्योगणपतिभ्यश्चवोनमो नमो
व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमोनमो
गृत्सेभ्योगृत्सपतिभ्यश्चवो नमोनमो
विरूपेभ्योविश्वरूपेभ्यश्चवोनमः॥

ओंसुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः। लंबो
दरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः॥ धूम्रकेतुर्गणा
ध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः। द्वादशैतानिनामानियः

१ यह मंत्र ब्राह्मणकाहै॥

पठेच्छृणुयादपि ॥ विद्यारंभेविवाहेचप्रवेशेनिर्गमेत था । संग्रामेसंकटेचैवविघ्नस्तस्यनजायते ॥ श्रीगण पतयेनमः ॥ इति स्वस्तिवाचनम् ॥

भा०टी०-यह स्वस्तिवाचनका अर्थ आगे विवाहप्रकरणके आदिमें लिखाहै इस लिये पिष्टपेषण नहिं कर्ते ॥ (मनोजूति इस्का) (अर्थ.) अति वेग युक्त मेरा मन आज्यको सेवन करे इस यज्ञको बृहस्पतिजी विस्तृत करे तथा अरिष्टको तथा इस यज्ञकी पुष्टि करे। और विश्वेदेवा १३ नाम देवगण इहां आनंदसे मग्न होवे वा मदयुक्त होवे ॥ (सुमुख श्चेति) यह १२ द्वादश गणेशजीके नाम विद्याके प्रारंभ तथा विवाहमें प्रवेशनिर्गम संग्राम संकट अर्थात् जहां भीतिहो वहां लेनेसे विघ्नादि सर्व उपद्रव शान्त होतेहैं इस लिये आदिमें गणपतिपूजन यथोक्त करना चाहिये।

ततःसंकल्पः ॥

ओंतत्सदद्यब्रह्मणोद्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे जंबूद्वीपेभरतखंडे, आर्यावर्तेवर्तमानकलियुगप्रथम चरणेवैवस्वतमन्वंतरे अष्टाविंशतिमेकलियुगेऽमुक ऋतौअमुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथौअमुकवासरान्वि तायाममुककरणनक्षत्रयोगयुक्तायां श्रुतिस्मृतिपु राणोक्तफलावाप्तिकामः धर्मार्थकाममोक्षार्थंमनोभि लषितप्राप्तयेअमुकगोत्रो ऽमुकशर्मा ऽहममुकक र्मनिमित्तककात्यायनीशान्तिकरिष्ये ॥ तन्निर्विघ्नप रिसमाप्तयेगणपतिपूजनंचकरिष्ये इति ॥

भा०टी०—संकल्पमें यथावत् संवत्सरादि नामादि उच्चारण करनें चाहिये ॥ और शर्मके स्थान क्षत्री वर्मा यह पद कहे और वैश्य गुप्त यह पद कहै ॥ प्रमाण. (शर्म ब्राह्मणस्य वर्म क्षत्रियस्य गुप्तेति वैश्यस्य) गृह्यसूत्र । १ कांडमें ॥

अथगणपतिपूजनम् ॥ ॐगणानांत्वागणपति ठँ हवामहेइतिमंत्रेण । ॐभूर्भुवःस्वः भगवन्गणपति दैवतइहागच्छइहतिष्ठ सुप्रतिष्ठ वरदोभवममपूजांगृहाण ॥ पाद्यादिभिरर्चयेत् । भगवन्गणपतिदेवएतत्पाद्यादिभिर्गंधाक्षतादिभिश्चपूजितःप्रसन्नोभव ॥ पुनः । वक्रतुंडमहाकायकोटिसूर्यसमप्रभ । अविघ्नंकुरुमेदेवसर्वकार्येषुसर्वदा॥ इति ॥ अथपंचोपचारपूजनम्॥आवाहयाम्यहंदेवमोंकारंपरमेश्वरम्।त्रिमात्रंत्र्यक्षरंदिव्यंत्रिपदंचात्रिदैवकम् । त्र्यक्षरंत्रिगुणाकारं सर्वाक्षरमयंशुभम् । त्र्यणवंप्रणवंहंसंस्रष्टारंपरमेश्वरम् । अनादिनिधनंदेवमप्रमेयंसनातनम् ॥ परंपरतरंबीजं निर्मलंनिष्कलंशुभम् ॥

भा०टी०—गणानांत्वा इस मंत्रसे गणपतिका पूजन करे और प्रार्थना करे हे भगवन् गणपति देव इहां आओ और बैठो वरको देवो और पूजाको ग्रहण करो ॥ पाद्य अर्घ आचमनीय इत्यादिसे आगे लिखे षोडशउपचारसे पूजन करे । इस प्रकार ओंकारके मंत्रोंसे ओंकार पूजन कर्ना ।

शुक्लयजुर्वेद अध्याय २२ अनुवाक ७ मंत्र २२

ॐआब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्च्चसीजायं

तामाराष्ट्रेराजन्यःशूरइपव्योतिव्याधी
महारथो जायतान्दोग्ध्री धेनुर्वोढान
ड्वानाशुःसप्तिःपुरन्धिर्य्योषाजिष्णूरथे
ष्ठाःसभेयोयुवास्ययजमानस्यवीरोजा
यतान्निकामेनिकामेनःपर्ज्जन्योवर्षतुफ
लवत्त्योनऽओषधयःपच्यन्तांय्योगक्षे
मोनःकल्पताम् ॥

भा०टी०-(मंत्रार्थ) हेब्रह्मन् हे ब्रह्माजी आप कृपासे यज्ञको करना कराना पढना पढाना दान लेदेना इत्यादि षट्कर्म करनेवाले और ब्रह्मतेजवाळ ब्राह्मण होमे ॥ और हमारे राष्ट्रमें क्षत्री व्याधि कातरतासे रहित शूरवीर महारथ इस यजमानके हो और इस यजमानकी दुग्ध देनेवाली गौऊ होमे और शीघ्र गमनवाले घोडे और सुंदर रूपवाले होमे ॥ और पुरुष रथमें बैठनेवाले युवान सभा योग्य इस यजमानके संबंधि पुत्रादि होमे और हमारी प्रार्थनासे वृष्टि हो और फल युक्त ओषधीयां पके हमारेको योगक्षेम होवे ॥

अथ रक्षाविधानम् ॥ शुक्लयजु अध्याय ३ मंत्र ३० ॥

ॐमानःशर्ठसोअररुषोधूर्तिःप्रणक्त्यं
स्य । रक्षाणोब्रह्मणस्पते ॥

यजु० अध्याय ३४ मंत्र ५२ ॥

ॐयदावन्ध्नन्दाक्षायुणाहिरण्यꣳशतानीकायसुमनस्यमानाः॥तन्मुआवध्नामि शतशारदायाऽऽयुष्माञ्जरदष्टिर्यथासम् ॥ इतिपठन् ॥

भा०टी०-(मानः श ० सः) हे ब्रह्मण्यते हमारे अनिष्ट चिन्तक परंतु मारणेमें असमर्थ हमारे शत्रुकी धूर्ति नाम हिंसा आप मत करे किंतु हमारी रक्षाकरे अर्थात् असमर्थ शत्रुका क्या मारना वह आगे मृत होताहै (यदावध्नन्) दक्षकी संतान जो सुवर्ण शतानीक अर्थात् बहुत सेनायुक्त राजाको बंधते भये प्रसन्न चित्त होकर शतजीवनके लिये तिस प्रकार जैसे हम वृद्धावस्थाको प्राप्त होमें तद्वत् बांधते हैं ॥

अथ मातृपूजनम् ॥

गौरी १ पद्मा २ शची ३ मेधा ४ सावित्री ५ विजया ६ जया ७ ॥ देवसेना ८ स्वधा ९ स्वाहा १० मातरो ११ लोकमातरः १२ ॥ हृष्टिः १३ पुष्टि १४ स्तथातुष्टि १५ स्तथात्मकुलदेवता ॥ १६ ॥ श्रीकुलदेव्यंतर्गतगौर्यादिषोडशमातृभ्योनमः ॥ अथऋत्विजांवरणम् ॥ यथाचतुर्मुखोब्रह्मासर्ववेदधरःप्रभुः ॥ तथात्वंमम यज्ञेऽस्मिन्ब्रह्माभवद्विजोत्तम ॥ गृहीत्वातु कराङ्गुष्ठं

यजमानःपठेदिदम् ॥ अस्यकर्म्मणःप्रतिष्ठापनार्थं त्वंब्रह्मा भव (अहंभवामि ब्रह्मा ब्रूयात्)

भा०टी०-गौरीसे आदि षोडश१६ मात्रा भिन्नभिन्न अंक देकर लिखीहैं मूलमें॥ उन्की यथावत् षोडशोपचार पूजा करनेसे वह संतुष्ट होकर शुभको विधान कर्ता हैं ॥ ऋत्विक् होता आचार्य ब्रह्मादि वरणमें प्रथम ब्रह्माका वरण होताहै अर्थ जैसे चतुर्मुख संपूर्ण वेदविद्याके जाननेवाले ब्रह्माजी है तद्वत् आप मेरे यज्ञमें होमे यह कहे हस्तका अंगुष्ट पकड कर यजमान इस कर्मकी प्रतिष्ठाके लिये आप ब्रह्मा हो। होताहै यह ब्रह्मा कहै ॥

आचार्य्यस्तुयथास्वर्गेशक्रादीनांबृहस्पतिः । तथा त्वंममयज्ञेऽस्मिन्नाचार्योभवसुव्रत ॥ गृहीत्वातुक रांगुष्ठंयजमानःपठेदिदम् ॥ अस्यकर्म्मणःप्रतिष्ठा पनार्थत्वमाचार्योभव । अहंभवामि ॥ ऋग्वेदःपद्मप त्राक्षोगायत्र्यः सोमदैवतः । अत्रिगोत्रस्तुविप्रेन्द्रऋ त्विक्त्वंमेमखेभव ॥ गृहीत्वातुकरांगुष्ठंयजमानःप ठेदिदम् ॥ अस्यकर्मणःप्रतिष्ठापनार्थमृग्वेदीभव । अहंभवामि ॥

भा०टी०- जैसे स्वर्गमें इंद्रादिकोंका आचार्य्य (गुरु) वृहस्पतिजी हैं तद्वत् आप मेरे यज्ञमें आचार्य्य होवें गृहीत्वा तु इसका पूर्वोक्त अर्थ है यदि कोई कहै कि आचार्य्यको गुरु कैसे कहते हैं उत्तर जो उपनयन कर शौचता और वेद विद्या पढावे वह आचार्य अर्थात् गुरुको कहतेहैं प्रमाण भी यास्कजीने निरुक्तमें लिखाहै (आचार्य्यःकस्मा

दाचार्यआदाचारंग्राहयित्वा चिनोत्यर्थात्) याज्ञवल्क्य जी भी लिखते हैं "उपनीयददद्वेदमाचार्य्यःसउदाहृतः" इस प्रकार ऋग्वेदादिक चार वेदोंका वरण जानना ॥ स्वरूप ऋग्वेदका पद्मपत्रवत् नेत्र गायत्री छंद सोम देवता अत्रि गोत्र इत्यादि ॥

कातराक्षोयजुर्वेदस्त्रिष्टुभोत्रह्मदैवतः। भारद्वाजस्तुविप्रेंद्रऋत्विक्त्वंममखेभव॥ गृहीत्वातुकरांगुष्ठंयजमानःपठेदिदम्॥ अस्यकर्मणःप्रतिष्ठापनार्थंत्वंमेयजुर्वेदीभव(अहंभवामि)सामवेदस्तुपिंगाक्षस्त्रिष्टुभोविष्णुदैवतः। काश्यपेयस्तुविप्रेंद्रऋत्विक्त्वंममखेभव॥ गृहीत्वातुकरांगुष्ठंयजमानःपठेदिदम्॥ अस्यकर्मणःप्रतिष्ठापनार्थंत्वं सामवेदीभव (अहंभवामि)

भा०टी०-कैरता युक्त नेत्र त्रिष्टुप्छंद ब्रह्मदेवता भारद्वाज गोत्र इत्यादि यजुर्वेदका स्वरूपहै और पिंगलवर्ण नेत्र त्रिष्टुप् छंद विष्णुदेवता काश्यपगोत्र इत्यादि सामवेदका स्वरूप छंदादिक है ॥

अथाशीर्वादः॥

ऋग्वेदस्तुयजुर्वेदः सामवेदोह्यथर्वणः । ब्रह्मवाक्यैश्चतै नित्यं हन्यंतांतवशत्रवः॥ अपुत्राःपुत्रिणःसन्तुपुत्रिणः सन्तु पौत्रिणः। अधनाःसधनाः सन्तु संतुसर्वार्थसाधकाः ॥ विप्रहस्ताच्चगृह्णीयाद्यज्ञपुष्पफलाक्षतान्। चत्वारस्तववर्द्धन्तामायुःकीर्तिर्यशोबलम्॥ अथ कलशपूजनम् । ॐ ऋग्वेदायनमः यजुर्वेदायनमः सा

मवेदायनमः अथर्ववेदायनमः कलशायनमः वरुणा
यनमः रुद्रायनमः समुद्रायनमः गंगायैनमः यमुना
यैनमः सरस्वत्यैनमः कलशकुंभायनमः ॥

भा०टी०-ऋक् यजु साम अथर्वण यह ४ वेद ब्रह्मवाक्य पुराणादि सहित तुमारे शत्रुओंको नष्टकरे ॥ और जिन्के पुत्र नहीं वह पुत्रयुक्त हों और पुत्रोंवाले पौत्रोंसे युक्त हों ॥ निर्धन धनवान् हों धनवान् संपूर्ण कामना सिद्धकरनेवाले हो॥ यज्ञमें ब्राह्मणके हाथसे पुष्प फल अक्षत ग्रहण करे ४ चार वस्तु आयु १ कीति २ यश ३ बल ४ वृद्धिको प्राप्त हो ॥

ब्रह्मणानिर्मितस्त्वंहिमंत्रैरेवामृतोद्भवः ॥
प्रार्थयामिचत्वांकुंभवांछितार्थंतुदेहिमे ॥

शुक्लयजु०अध्याय ४ मंत्र० ३६

वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्यस्कम्भसर्ज्जनीस्त्थो वरुणस्यऽऋतसदन्यसि वरुणस्यऽऋतसदनमसि वरुणस्यऽऋतसदनमासीद ॥

भा०टी०-(वरुणस्योत्तंभनमसि) अर्थ-हे शम्प तुम वरुणके जलकी स्तंभन करनेवाली हे और वरुणकी तुम शिथिल शम्पा २ होवे और वरुणके सत्य स्थानमें हो और वरुणके सत्य स्थान होनेसे आप इहाँ स्थित होवें ॥ यह वेदमंत्रार्थ है ॥ १ ॥ ब्रह्माजीने अमृतोद्भव मंत्रोंसे आपको रचा और हम आपकी ---ना करते हैं की हमारेको वांछित अर्थ देवे ॥

अथ वास्तुपूजा ॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि यदुक्तं वास्तुपूजनं॥येनपूजा विधानेन कर्मसिद्धिस्तुजायते॥अनंतंपुण्डरीकाक्षं फणाशतविभूषितम्। विद्युद्वन्धूकसाकारं कूर्मारूढं प्रपूजयेत् ॥

शुक्लयजु अध्याय १३ मंत्र ६

ॐनमोस्तु सर्प्पेभ्यो येकेच पृथिवीमनु । येऽअन्तरिक्षे येदिवितेभ्यः सर्प्पेभ्योन मः॥वासुक्याद्यष्टकुलनागेभ्योनमः ॥

भा०टी०–इसके अनंतर वास्तुपूजा लिखतेहैं जिस्के करनेसे कर्मोंकी सिद्धि होतीहै॥ यह कर्मका अंग है कमलसदृश नेत्रवाला और शतफणोंसे सुशोभित विद्युतकांतियुक्त कूर्मदेवपर स्थित अनंत (शेष) की पूजन करे ॥ [नमोस्तु मंत्रार्थ] जो पृथ्वीमें रहतेहैं और जो आकाशमें तथा स्वर्गमें सर्प रहतेहैं तिन्हों संपूर्णोंके लिये यह प्रणाम बारंवार हो और वह रक्षा करे यहफलितार्थ है ॥

अथ योगिनीपूजा

ॐआवाहयाम्यहं देवींयोगिनीं परमेश्वरीं। योगाभ्यासेन संतुष्टापरध्यानसमन्विता ॥ १ ॥ दिव्यकुण्डलसंकाशा दिव्यज्वाला त्रिलोचना । मूर्तिमती ह्यमूर्ता च उग्रा चैवोग्ररूपिणी ॥ २ ॥ अनेकभावसं

युक्ता संसारार्णवतारिणी। यज्ञं कुर्वन्तु निर्विघ्नं श्रेयो यच्छन्तु मातरः ॥ ३ ॥ दिव्ययोगी महायोगी सिद्धयोगी गणेश्वरी । प्रेताशी डाकिनी काली कालरात्री निशाचरी । हुंकारी सिद्धवेताली खर्परी भूतगामिनी । उर्ध्वकेशी विरूपाक्षी शुष्कांगी मांसभोजनी ।फ्रूत्कारी वीरभद्राक्षी धूम्राक्षी कलहप्रिया । रक्ता च घोरा रक्ताक्षी विरूपाक्षी भयंकरी । चौरिका मारिका चंडी वाराही मुण्डधारिणी । भैरवी चक्रिणी क्रोधा दुर्मुखी प्रेतवासिनी । कालाक्षी मोहिनी चक्री कंकाली भुवनेश्वरी। कुण्डलातालकौमारी यमदूती करालिनी।कौशिकी यक्षिणी यक्षी कौमारी यंत्रवाहिनी॥ दुर्घटे विकटे घोरे कपाले विपलंवने।चतुःषष्टिःसमाख्यातायोगिन्योहि वरप्रदाः त्रैलोक्ये पूजिता नित्यं देवमानुषयोगिभिरिति ॥

भा०टी०-परब्रह्ममें खचित योगाभ्यासकर संतुष्ट परमेश्वरी देवी श्रीयोगिनीका आवाहन कर्ते हैं॥१॥ दिव्य कुंडलोंसे युक्त तेजयुक्त त्रिनेत्र मूर्तिवाली और मूर्तीसे रहित भयानक इत्यादि अनेक भावोंसे संयुक्त संसाररूपी समुद्रके पार उतारनेवाली योगिनी माता इस यज्ञको विघ्नरहित करे और हमारेको कल्याण देवे ॥ यह ६४ योगिनी संकटमें विपत्तीमें अर्थात् जहां भीतिहो वहां स्मरण की हुई वेरको देती संकट दूरकर्तीहै इस कारणसे देव मानुष योगिजनोंकर यह पूजनीय है अर्थात् संपूर्ण जगत् इन्की पूजा

अथ ब्रह्मपूजा

शुक्लयजु० अध्याय १३ मंत्र ३ ॥

ब्रह्म जज्ञानम्प्रथमम्पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेनआवः ॥ सबुध्न्याऽउपमाऽअस्यविष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्चविवः ॥ इति पाद्यादिभिर्ब्रह्माणमर्च्चयेत् ॥

अथ विष्णुपूजा

यजु० अध्याय ५ मंत्र २१ ॥

ॐविष्णोरराटमसिविष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसिविष्णोर्ध्रुवोसि । वैष्णवमसि विष्णवेत्वा ॥

भा०टी०-(मंत्रार्थ ब्र०) ब्रह्म सर्वव्यापि सूर्य प्रथम पूर्वदिशामें उदय होताहै फिर अपने प्रकाशसे चारोंतरफ मध्यवर्ती प्रकाश करताहै वह प्रकाशमान लोक वेनमेधावी आदित्य दिशाओंसे जानाजाताहै इस जगतविद्यमानका अधिष्ठाताहै और अमूर्त अदृश्यमान जगत्का कारणहै ॥ अर्थात् सूर्य भगवानही संपूर्ण लोकोंको दिशाको प्रकाशकर्ताहै ॥ विष्णोरराटमसि, इस्का अर्थ आगे लिखाहै शांतिपाठमें ॥ ॥ इति विष्णुं पाद्यादिभिरर्चयेत् ॥

अथ शिवपूजा

शुक्ल यजुर्वेद अध्या० १६ मंत्र ४१ ॥

ॐ नमः॑शम्भवाय॑ चमयोभवाय॑चन

मः॑शङ्करायच मयस्करायच नमः॑शि

वाय॑च शिवतरायच ॥

भा०टी०-(नमःशंभवायेति) नमस्कारहै शंमके देनेवाले तथा सुख कल्याणादिगुण देनेवाले शंकरजीको ॥

इति शिवं पाद्यादिभिरर्चयेत् ॥

॥ अथेंद्रपूजा ॥ यजु० अध्याय २० मंत्र ५० ॥

ॐ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳहवेहवेसु

हवꣳशूरमिन्द्रम् । ह्वयामिशक्रम्पुरुहूत

मिन्द्रꣳस्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः ॥

ॐइंद्रायनमः इति पूजयेत् ॥

भा०टी०-(त्रातारमिंद्र) रक्षाकरनेवाला जिससे इंद्रजीको कहतेहैं बुलावनेमें शोभन शूरवीर वह इंद्र हमारे कर बुलायाभया ना नष्ट होनेवाला धन और स्वास्ति हमारेको देवे हम प्रार्थना करतेहैं ॥

अथ वायुपूजा ॥ यजु० अ० २७ मंत्र ३२॥

वायोयेतेसहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि ॥

नियुत्वान्त्सोमपीतये ॥

यजु० अ०९ मंत्र ७।

ॐवातो वामनोवा गन्धर्वाः सप्तविंशतिः ॥ तेअग्रेश्वंमयुञ्जँस्तेऽस्मिन् जवमादधुः॥ ॐ वायवेनमः ॥ इतिपूजयेत्

भा०टी०(हेवायुदेव) जो तुमारे सहस्रसंख्यक रथसदृश रथ है उन्से युक्तहोकर आप सोमपानके लिये आओ हमप्रार्थना करतेहैं ॥

अथ धर्मपूजा यजु० अध्याय ३ मंत्र १८॥

ॐ अग्ने सपत्न दम्भंनमदंभ्धासोअदाभ्यम् । चित्रावसो स्वस्तितेपारमशीय ॥ धर्मायनमः ॥ इतिपूजयेत् ॥

भा०टी०-(अग्नेसपत्न) हेभगवन् अग्निदेव तुम शत्रुओंको नाशक रनेवाले हमारेको ना हिंसनकरते हमारी वृद्धिकरे हेचि त्रावसो हेरात्रि ! नाशहोनेवाली कल्याणदेवे. (रात्रिर्वैचित्रावसुरिति श्रुतिः) और तुमारे पारको सुखपूर्वक प्राप्त होयाकरें ॥

अथ यमपूजा ॥ शु०यजु० अध्याय २९ मं०॥१४॥

ॐ असियमो अस्यादित्यो अर्वन्नासित्रितोगुह्येन व्रतेन । असिसोमेन समया

विप्रुक्त आहुस्तेत्रीणिदिवि बंधनानि ॥इ
ति यमपूजा दक्षिणेकार्या ॥

अथ नवग्रहपूजा ॥

शु०यजु० अध्याय ३४ मं०३१ ॥

ॐ आकृष्णेन रजसावर्तमानोनिवेशयं
न्नमृतम्मर्त्यंञ्च ॥ हिरण्ययें नसवितारथे
नादेवोयातिभुवनानिपश्यन् ॥ ॐसूर्या
यनमः ॥ इतिसूर्यं पूजयेत् ॥

भा०टी०–आकृष्णेनेति ॥ सूर्यदेव रात्रिरूप रजसे वर्तमान वारंवार भ्रमण कर्ता तथा अपने२स्थानमें देवताओंको अमृत मनुष्यादिकोंको अन्न देताहुआ सुवर्णके रथसे १४ भुवनोंको देखता भया और आरोग्य देता भया फिरताहै उदय होताहै ॥१॥

शुक्लयजु०अध्याय १० मंत्र १८ ॥

इमंदेवाऽअसपत्नᳪसुवद्ध्वम्महतेक्षत्राय
महतेज्येष्ठ्यायमहतेजानराज्यायेन्द्र
स्येन्द्रियाय॥इमममुष्यपुत्रममुष्यैपुत्र
मस्यैविशऽएषवोमीराजासोमोस्माकम्ब्रा
ह्मणानाᳪराजा ॥ ॐसोमायनमःइतिपू० ॥

भा०टी०-इमंदेवा-देवो दानादिति-हे दानशील पुरुषो तुम इस चंद्रमाको शूरवीरताके लिये ज्येष्ठता राज्य ऐश्वर्यादिके लिये अमुक पुत्र इसकी सेवा करो यह चंद्रमा हम ब्राह्मणोंका राजा है॥ श्रौतार्थमें हे देवताओ यह संबंध करना ॥

शुक्लयजु० अध्याय ३ मंत्र १२

अग्निर्म्मूर्द्धादिवःककुत्पतिः पृथिव्याऽअयम् ॥ अपाᳬरेताᳬसिजिन्वति ॥ ॐ अंगारकाय०इतिपू० ॥

भा०टी०-अग्निर्मूर्द्धा-हे अग्निस्वरूप वा अग्नितत्व मंगल देव स्वर्ग आकाशमें सूर्यरूप होकर मूर्द्धवर्तिहो और ककुत बडे तेजस्वी और पृथिवीके पुत्र हो और तुमही जलवृष्टि रेतोत्पत्तिमें कारण हे ॥ (श्रौतार्थमें अग्निस्तुतिमें विनियुक्त है)

प्रमाण बृहज्जातके शिखिभूखपयोमरुद्गणानां वशिनो भूमिसुतादयः क्रमेण ॥

यजु० अध्याय १५ मंत्र ३॥

उद्बुध्यस्वाग्नेप्रतिजागृहित्वमिष्टापूर्तेसᳬसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्त्सधस्थेऽअध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत ॥४॥ ॐबुधायनमः इ० पू०

भा०टी०-उद्बुध्यस्व-हे बुधदेव अग्निवत् प्रकाशमान आप प्रसन्न हो आपकी प्रसन्नतासे यह यजमान इष्टमनोरथ

को प्राप्त होवे और इस लोकमें ऐश्वर्यादि भोग उत्तर लोक में देवताओंके साथ निवास करे यह हम प्रार्थना करते हैं (श्रौतमें अग्नि)

यजु० अध्याय २६ मंत्र ३॥

बृहस्पतेऽअतियदर्य्यो ऽ अर्हाद्युमद्विभा
तिक्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवसऽऋत
प्रजाततदस्मासुद्रविणन्धेहिचित्रम् ॥
ॐबृहस्पतयेनमः इ० ॥

भा०टी०–बृहस्पते–हे बृहस्पति देव अतिशयसे धन अर्थ स्वामिता अर्ह पूजा यज्ञकरनेवाले पुरुषमें धारण करे और बलसे जो रक्षाकरनेवाले तथा सत्यसे हैं उत्पत्ति जिनकी वा सत्य प्रजावाले पुरुषोंको अनेक प्रकार चित्र विचित्र धन देनेमें यह प्रार्थना करते हैं॥

यजु० अध्याय १९ मंत्र ७५॥

ॐअन्नात्परिस्रुतोरसम्ब्रह्मणाव्यपिवत्क्ष
त्रम्पयः सोमम्प्रजापतिः ऋतेनसत्यमि
न्द्रियविपानꣳ शुक्रमन्धसइन्द्रस्येन्द्रि
यमिदम्पयोमृतम्मधु ॥ ६ ॥ ॐशुक्रा
यनमःइति० ॥

भा०टी०-अन्नात्परिस्रुतः-हविलक्षणरूप अन्नका परिस्रुत रसमयी लक्षण ब्रह्मसे व्याप्त और क्षत्रसे व्याप्त सोम प्रजापति संबंधि पय इस सत्यसे युक्त इंद्रकी इंद्रिय अन्न यह शुक्रजीके संबंधसे युक्त हो यह प्रार्थना करते हैं ॥

यजु० अध्याय ३६ मंत्र १२

शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये । शँय्योरभिस्रवन्तुनः ॥ ॐशनैश्चरायनमः ॥ इतिपू० ॥

भा०टी०-शन्नोदेवी-सुखरूप हमारे कल्याणकारक देवस्वरूप रोगके विनाशके लिये भयके दूर करनेके वास्ते शनिदेवको स्तुति और प्रार्थना कर्ते हैं ॥ श्रौतमें वरुण संबंधि स्तुत्यमंत्रहै ॥

यजु० अध्याय २७ मं ३९ ॥

कयानश्चित्र ऽआभुवदूतीसदावृधःसखा ॥ कयाशचिष्ठयावृता ॥ ॐराहवेनमः ॥ इतिपू० ॥

भा०टी०-कयानश्चित्र-हे राहुदेव किस आगमनसे तुम हमारेको आनंद करते हैं और किससे हमारेको धन देते हैं वह हम उपाय करें (पूजा इति शेषः) (श्रौतमें इंद्र)

१ यह मंत्र उत्तरभागमें [illegible] अर्थ लिखा है [illegible] अर्थ [illegible] आगे लिखा देखलेवे ॥

यजु० अध्याय १९ मंत्र ३ ॥

केतुङ्कृण्वन्नंकेतवेपेशोमर्य्याऽअपेशसे।स मुषद्भिरजायथाः ॥ ॐकेतवेनमः॥ इतिपू०

ॐब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरांतकारी भानुः शशीभूमिसुतो बुधश्च॥गुरुश्चशुक्रः शनिराहुकेतवःसर्वेग्रहाः शांतिकराभवन्तु॥इतिनवग्रहपूजा ॥ त्र्यंबकं यजामहे इति त्र्यंबकपूजनम् ॥ अथकुशकण्डिकाप्रारम्भः॥ ततोहोमार्थं चतुरंगुलोच्छ्रितहस्तमात्रपरिमितां वेदिं कुर्यात् कुशैः परिसमूह्य तान्कुशानैशान्यांपरित्यज्य गोमयोदकेनोपलिप्य खादिरेण स्रुवेण चोल्लेखनंहस्तेनोद्धरणं जलेनाभ्युक्षणं कांस्यपात्रयुगलेन लौकिकंनिर्मथितं वाग्निमानीय स्थापयेत्।ततः पुष्पचंदनतांबूलवासांस्यादाय ॐअद्यकर्तव्यामुकशान्तिहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मकर्तुममुकगोत्रममुकशर्माणमेभिः पुष्पचंदनतांबूलवासोभिर्ब्रह्मत्वेनत्वामहंवृणे इति ब्रह्माणंवृणुयात् ॥ ॐवृतोस्मीति प्रतिवचनम् । यथाविहितंकर्मकुर्वित्याचार्येणोक्ते करवाणीतिप्रतिवचनम् । ततोग्नेर्दक्षिणतः शुद्धमासनंदत्वा तदुपरि प्रागग्रान्कुशानादायास्तीर्य्य अग्निं प्रदक्षिणं कारयित्वा

ऽस्मिन्कर्मणि त्वंमेब्रह्माभवेत्यभिधाय भवानीति तेनोक्तेतदुपरि ब्रह्माणमुदङ्मुखमुपवेश्य प्रणीता पात्रं पुरतः कृत्वा वारिणा परिपूर्य्य कुशैराच्छा द्य ब्रह्मणो मुखमवलोक्याग्नेरुत्तरतः कुशोपरिनिद ध्यात् ततः परिस्तरणं बर्हिपश्चतुर्थभागमादाया ग्नेरीशानांतंब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तं नैर्ऋत्याद्वायव्यन्तम ग्नितःप्रणीतापर्यन्तंततोग्नेरुत्तरतःपश्चिमदिशिपवित्र च्छेदनार्थंकुशत्रयंपवित्रकरणार्थंसाग्रमनन्तर्गर्भकुश पत्रद्वयंप्रोक्षणीपात्रमाज्यस्थालींसंमार्जनार्थंकुशत्रय मुपयमनार्थवेणीरूपकुशत्रयं समिधस्तिस्रः स्रु वः आज्यं प्रट्पंचाशदुत्तराचार्य्यमुष्टिशतद्वयाव च्छिन्नामतण्डुलपूर्णपात्रं ततः पवित्रच्छेदनकुशैः पवित्रेछित्त्वासपवित्रकरेणप्रणीतोदकंत्रिः प्रोक्षणीपा त्रेनिधायअनामिकांगुष्ठाभ्यांपवित्रेउत्तराग्रेगृहीत्वात्रि रुत्पवनं प्रोक्षणीपात्रंवामकरेणादाय । अनामिकां गुष्ठाभ्यांगृहीतपवित्राभ्यांतज्जलंकिंचित्रिरुत्क्षिप्यप्र णीतोदकेनप्रोक्षणीमभिषिच्य प्रोक्षणीजलेनासादि तवस्तुसेचनंकृत्वाग्निप्रणीतयोर्मध्येप्रोक्षणीपात्रंनिद ध्यात् आज्यस्थाल्यामाज्यंनिरूप्याधिश्रयणं त तः कुशंप्रज्वाल्याज्योपरिप्रदक्षिणंभ्रामयित्वावह्नौत त्प्रक्षिप्यस्रुवंत्रिःप्रताप्यसम्मार्जनकुशानामग्रैरंतरतो मूलैर्बाह्यतः स्रूवंसंमृज्यप्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्यपुनस्त्रिः

प्रताप्यदक्षिणतोनिदध्यात्आज्यस्याग्नेरवतारणंतत
आज्यंप्रोक्षणीवदुत्पूयावेक्ष्य सत्यपद्रव्येतन्निरसनंकृ
त्वापुनःप्रोक्षणीमुत्पूय ततउत्थायो पयमनकुशान्वा
महस्तेकृत्वाप्रजापतिंमनसाध्यात्वातूष्णीमग्नौ घृता
क्ताःसमिधस्तिस्रःक्षिपेत् ॥ उपविश्यसपवित्रप्रो
क्षण्युदकेनप्रदक्षिणक्रमेणाग्निंपर्युक्ष्यप्रणीतापात्रेपवि
त्रेनिधायपातितदक्षिणजानुःकुशेन ब्रह्मणांन्वारब्धः
समिद्धतमेऽग्नौस्रुवेणाज्याहुतीर्जुहोति ।.तत्तदाहुत्य
नंतरंस्रुवावस्थितघृतशेषस्यप्रोक्षणीपात्रेप्रवेशः ।
अथस्रुवपूजनम् ॥ ॐआवाहयाम्यहंदेवंस्रुवंशेवधिमु
त्तमम्। स्वाहाकारस्वधाकारवषट्कारसमन्वितम् ॥
अष्टांगुलंत्यजेन्मूलमग्रेत्यक्त्वादशांगुलं। कर्तव्यंगो
पदाकारंदंडस्याग्रेतुकंकणम् ॥ विष्णोःस्थानंप्रगृह्णी
याद्धूयतेचहुताशनम् ॥ पद्मयोनिसमादायहोता
सुखमवाप्नुयात् ॥ इतिस्रुवपूजनम् ॥

भा०टी०–कुशकंडिका आगे विवाहमें स्पष्टार्थ लिखी है इसलिये महाशयोंको उचित है की विवाहप्रकरणमें देखे ॥ और स्रुवको हस्तमें कंकण बंधकर पूजन कर्ना ॥

अथघृताहुतिः॥ॐप्रजापतयेस्वाहाइदंप्रजापतये इति
मनसा ॥ ॐइन्द्रायस्वाहाइदमिन्द्राय० ॥ इत्याघारौ
ॐअग्नयेस्वाहाइदमग्नये० ॥ ॐसोमायस्वाहा इदंसो

पा॰गृह्यसूत्रे ।

ॐ येतेशतंवरुणयेसहस्रंयज्ञियाःपाशावि
तताममहान्तः । तेभिर्नोअद्यसवितोतवि
ष्णुर्विश्वेमुंचंतुमरुतःस्वर्काःस्वाहा । इदं
वरुणायसवित्रेविष्णवेविश्वेभ्योदेवेभ्योम
रुद्भ्यःस्वर्केभ्यः॰ ॥

यजु॰ अध्याय २१ मंत्र १२ ॥

ॐ उदुत्तमंवरुणपाशमस्मदवाधमंविम
ध्यमꣳश्रथाय । अथावयमादित्यव्रते
तवानागसोऽअदितयेस्यामस्वाहा ।

इदंवरुणाय॰ । एताः सर्वप्रायश्चित्तसंज्ञकाः॥ॐ गण
पतयेस्वाहा । इदंगणपतये॰ । ॐ विष्णवेस्वाहा इदं
विष्णवे॰ । ॐ शम्भवेस्वाहा इदंशम्भवे॰।ॐ लक्ष्म्यै
स्वाहा इदंलक्ष्म्यै॰ ॥ ॐ सरस्वत्यैस्वाहा इदंसरस्व
त्यै॰ । ॐ भूम्यैस्वाहा इदंभूम्यै॰ ॥ ॐ सूर्यायस्वा॰
इदंसूर्याय॰ ॥ॐ चंद्रमसेस्वाहा इदंचंद्रमसे॰ ॥ ॐ
भौमायस्वाहा इदंभौ॰ ॥ ॐ बुधायस्वाहा इदंबु
धाय॰ ॥ ॐ बृहस्पतयेस्वाहा इदंबृहस्पतये॰ ॥
ॐ शुक्रायस्वाहा इदंशुक्राय॰॥ॐ शनैश्चरायस्वाहा

इदंशनैश्चराय० ॥ ॐराहवेस्वाहा इदंराहवे० ॥ ॐकेतवेस्वाहा इदंकेतवे० ॥ ॐव्युष्टचैस्वाहा० इदंव्युष्टचै० ॥ ॐउग्राय स्वाहा इदमुग्राय० ॥ ॐ शतक्रतवेस्वाहा इदंशतक्रतवे० ॥ॐप्रजापतयेस्वाहा इदंप्रजापतये०॥इतिमनसा प्राजापत्यं । ॐ अग्नयेस्विष्टकृतेस्वाहा इदमग्नयेस्विष्टकृते० । इतिस्विष्टकृद्धोमः । ततःसंस्रवप्राशनमाचमनं ततोब्रह्मणे दक्षिणादानम् ॥

भा०टी०—त्वन्नोअग्ने १ सत्वन्नो अग्ने २ येतेशतं ३ अयाश्चाग्ने ४ उदुत्तमं ५ यहपांच मंत्रोंका विवाहकी कुशकंडिकाके अन्तमें अर्थ लिखाहै इसलिये पुनःपिष्टपेषण नहिंकरते॥ और आगेके नामोक्तमंत्र २१ हैं इन्में सूर्यादि नवहैं ॥ और प्रजापतये स्वाहा यह मंत्र मनमें उच्चारण करना और सर्व स्पष्ट मुखसे उच्चारण करने ॥

ॐअद्यएतस्मिञ्च्छांतिहोमकर्मणिकृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदंपूर्णपात्रंप्रजापतिदैवतंअमुकगोत्रायामुकशर्मणेब्रह्मणेदक्षिणांदातुमहमुत्सृजे ॥ ॐस्वस्तीतिप्रतिवचनम् । ततोब्रह्मग्रंथिविमोकः ॥

यजु० अध्याय मंत्र

ततः ॐसुमित्रियानऽआपऽओषधयःसंतु इतिपवित्राभ्यांजलमानीयतेनशिरः संमृज्यॐदुर्म्मित्रियास्तस्मै

सन्तुयोऽस्मान्द्वेष्टियञ्चवयंद्विष्मः ॥ इत्यैशान्यां प्रणीतान्युब्जीकरणम् ।

भा०टी०-आज इस शांतिके होमरूप कर्ममें करना वा ना करना इसकी परीक्षारूप ब्रह्माके कर्मकी प्रतिष्ठालिये यह पूर्ण पात्र प्रजापतिसंबंधि अमुक गोत्रब्राह्मणको दक्षिणा देनेलिये देताहुं ॥ स्वस्ति ब्राह्मण कहे ॥ कुशनिर्मित ब्रह्माकी ग्रंथी खोलदेणी विवाहप्रकरणमें ब्रह्मादिकोंका लक्षण लिखाहै (पंचाशताभवेद्ब्रह्मा) इत्यादि । और सुमित्रिया १ दुर्मित्रिया २ इनदोनों मंत्रोंका अर्थभी स्पष्ट विवाहप्रकरणमें लिखा है ॥

ततःस्तरणक्रमेणवर्हिरुत्थाप्यघृतेनाभिघार्यहस्तेनै वजुहुयात् ।

यजु० अ० ८ मं० २१ ॥

ॐ देवागातुविदोगातुम्वित्वागातुमितु मनसस्पत इमंदेवयज्ञꣳस्वाहावातेधाःस्वाहा

इतिवर्हिर्होमः । ततःआचाराद्दशादिक्पालेभ्योदधिमाषवलिर्देयः क्षेत्रपालवलिदानंच ॥ ततःस्थालीपाकादिपक्वान्नेनगणपतिप्रमुखसूर्यादिग्रहेभ्यस्तत्तन्मंत्रैर्वलिर्देयः । ततोब्राह्मणभोजनम् ।

भा०टी०-स्मरणक्रमसे कुशाग्रहणकर घृतलगाय हाथसे हवन करे। देवागातु इसमंत्रसे इसका अर्थ विवाहप्रकरणमें लिखाहै ॥ फिर आचारसे दशादिक्पालोंको दधियुक्त माषों-

कीं बलीदेनी दश दिक्पालयहहे। इंद्र १ वह्नि २ धर्मराज३ नैर्ऋत ४ वरुण ५ मरुत ६ कुबेर ७ ईश ८ और पृथ्वी आकाशका स्वामी २। यह १०. अनंतर स्थालीपाकसे पकाहुआ पक्वान्नसे श्रीगणेशजीसे आदि सूर्यादि नवग्रह ओंकार सर्प योगिनी अर्थात जो २ पीछे स्थापन करेहैं उनके मंत्रोंसे सबको बलिदान करना॥

ॐअद्यकरिष्यमाणभोजनसांगतासिद्ध्यर्थमिदंदक्षिणाद्रव्यंतेभ्योविभज्यदातुमहमुत्सृजे ततोगुरवेदक्षिणादेया॥ ततः छायापात्रदानं। तदनंतरंपूर्णाहुतिः तद्यथा स्रुवेणपूगीफलादिकंगृहीत्वा॥

यजु० अध्याय ७ मंत्र २४

ॐमूर्द्धानंदिवोऽअरतिम्पृथिव्यावैश्वानरमृतआजातमग्निम्। कविꣳसम्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्तदेवाः स्वाहा॥ ततः स्रुवेण भस्मानीयदक्षिणानामिकागृहीतभस्मना ॐत्र्यायुषंजमदग्नेः। इति ललाटे। ॐकश्यपस्यत्र्यायुषम्। इति॥ ग्रीवायाम्।ॐयद्देवेषुत्र्यायुषम्। इति दक्षिणबाहुमूले ॐतन्नो अस्तुत्र्यायुषम्। इति हृदि॥

भा०टी०-प्रथम संकल्प ब्राह्मणोंको दक्षिणाका है। पीछे छायापात्र दान करना अनंतर फलपुष्प स्रुवमें स्थित घृतसे मूर्द्धानं इस मंत्रसे पूर्णाहुति करनी। यह मंत्रका अर्थ विवाह प्रकरणमें लिखाहै॥

यजमानपक्षेतन्नोइत्यस्यस्थाने तत्तेइतिविशेषः। ततोऽभिषेकः ॥ तच्चाम्रपल्लवकुशादिकेनकलशस्थजलमानीयआपोहिष्ठेत्यादिमंत्रेणयजमानमभिषिंचेत् ॥ आचार्यादीनां दक्षिणादेया ततोभूयसींदद्यात् । ॐआज्येन वर्द्धतेबुद्धिराज्येनवर्द्धतेयशः॥ आज्येनवर्द्धते आयुर्दर्शनंपापनाशनं । अथ विशेषपूजा। ग्रहागावोनरेंद्राश्चब्राह्मणाश्चविशेषतः। पूजिताः प्रतिपूज्यंतेसावधानाभवन्तुते । अथ अग्निविसर्जनम् । गच्छगच्छसुरश्रेष्ठस्वस्थानं परमेश्वर॥ यत्रब्रह्मादयोदेवास्तत्रगच्छहुताशन॥

भा०टी०-घृतसे बुद्धि बल यश आयु वृद्धिको प्राप्तहोती और पाप नष्ट होते हैं॥ आयुवृद्धिमें प्रमाण भावप्रकाश. चिकित्सा शास्त्रमें जैसे (स्वमाननं घृते पश्येद्यदीच्छेच्चिर जीवितुं) ग्रह गौआ ब्राह्मण राजा यह पूजन किए हुये विशेष फल देते हैं॥ गच्छ २ इस मंत्रसे अग्निका विसर्जन करना॥

आगतास्तुयथान्यायंपूजितास्तुयथाविधि । कृत्वा कृपांमयिदेवायत्रासंस्तत्रगच्छत ॥ यजमानहितार्थायपुनरागमनायच । शत्रूणांबुद्धिनाशाय मित्राणामुदयायच॥ यथाशस्त्रप्रहाराणां कवचंवारणंभ

वेत् । तद्वदेवाभिघातानांशांतिर्भवति वारणं ॥ अथ ग्रहादीनांविसर्जनम् ॥ यान्तुदेवगणाः सर्वेपूजामादायमामकीं । यजमानहितार्थायपुनरागमनायच ॥

ऋ० प्र० अष्टक अ० १ मं १ ॥

ॐअग्निमीळेपुरोहितंयज्ञस्यदेवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥

भा०टी०-भलीभांति आये हुये और पूजन किये हुये मुझपर कृपा कर अपने२ स्थानको देवगण सिधारे यजमानकी कुशलताके लिये तथा फिर आवे लिये ॥ जैसे खड्गादि शस्त्रोंके प्रहारसे रक्षा कर्नेवाला कवच (संजोया) होता है तद्वत् संपूर्ण विघ्नोंके दूर करने लिये शांति है ॥ अग्निमीळे यह मंत्र ऋग्वेदके आदिका है ॥

ॐ विष्णुस्तत्सदद्यामुकगोत्रोहममुकशर्माहंइदंसमिष्टंघृतपक्वंविष्णुदैवतंभगवद्विष्णुप्रीतये यथानामगोत्राय ब्राह्मणायाहंददे । ॐअद्यकृतैतत्समिष्टघृतपक्वदानप्रतिष्ठासांगतासिद्ध्यर्थंविष्णुप्रीतयेयथानामगोत्रब्राह्मणायदक्षिणांदातुमहमुत्सृजे।ॐअद्यतत्सद्विवाहांगत्वेनेदमिष्टघृतपक्वंविष्णुदैवतं कुलदेवताप्रीतयेसौभाग्यताप्राप्तयेयथानामगोत्राय ब्राह्मणायाहंददे। इतिकन्यापक्षे ॥ ततः सुपूजितंकंकणबंधनं ततस्तिलकंकुर्यात् । तदनंतरंसूर्यायार्घ्यदानं ॥ इति श्रीकात्यायनीशान्तिःसमाप्ता ॥ शुभं भूयात॥

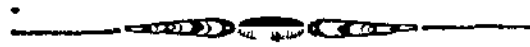
भा०टी०–अमुकगोत्रब्राह्मणको विष्णुप्रीतिलिये घृतपक्व अन्न देता हूं॥ और इसकी प्रतिष्ठाके लिये दक्षिणा देताहूं कन्यापक्षमें सौभाग्यतालिये यह पद कहना। फिर पूजन कर कंकण बंधना तिलक करना॥

इति श्रीकर्पूरस्थलनिवासिगौतमगोत्र (शोरि) अन्वयालंकृतश्रीअपारमहिमा.पं.घनैयारामंतत्पुत्रवैकुण्ठपीठाधिष्ठितश्रीतुलसीरामतत्पुत्रश्रीसकलजनवंद्यदैवज्ञदुनिचन्द्रतदात्मजशौर्य्यौदार्य्यधैर्य्याद्यालंकृतअधीतवेदवेदांगधर्मशास्त्रादिश्रीपंडितविष्णुदत्तवैदिककृतकात्यायनीशांतिटीका अद्रिवेदांकभूमिते १९४७ वैक्रमेमाधवेमासिकृष्णदशम्यां चंद्रवासरेसमाप्तिमगात् ॥ साचशुभावहास्यात् श्रीरामचंद्रप्रसादात् ॥

अथ शांतिसामग्री ।

मौली रोला पंचरंग आटा चावल गुढ केशर पुष्पधूप दीप नैवेद्य तांबूल सुपारी ७ बतासे मठ्ठिया घुंगनिया दालां ७ घृत तैल कुशा स्रुव पलाश समिधा पटढी यव तिल गोमय बटना कंकण रेत पत्र ग्रहजप। इति ॥

चतुर्थप्रकरणम्।



ऒंस्वस्ति श्रीगणेशायनमः ॥ ऒंवेदपुरुषायनमः ॥ श्रीः अथविवाहसामग्रीलिख्यते ॥ आटा गुड चावल मौली रोला केशर पुष्प नैवेद्य मेवा धूप दीप अट्टे ७ सुपारियां ११ दूर्वा चंदन पुष्पमाला २ आम्रके पत्र १०० पटडीया २ वेद १ चंदोया १ खारे २ वाचोकिया २ घृत प्रणीतापात्र प्रोक्षणीपात्र कांस्यपात्र २ मधुपर्क गौका दुग्ध दधी घृत शहत नालकेर १ धोती उपर्णा बालकनू । अर्धचौल अट्टे २ सिंधूर शूर्प १ लाजा अर्धशेर जंडीके पत्र शण शंख सुवर्ण वींडपानके २ पूर्णपात्र १ चावल अभिषेककेलिये गागर वा कुंभ वाकौरी १ समिधां पलाश वा वेरीकी १० सेर वटना शिलाबट्टा शर्करा वहारी १ साल्हगिरा ५ पर्णा १ कुशा समवस्त्र गज ४ स्रुवा १ आसन २ अर्धा हलपजाली मठिया ५ इति॥अथ चतुर्थदिनमें चतुर्थीकर्मकी सामग्री लि० आटा गुड मौली चावल केसर धूप दीप नैवेद्य सुपारिया ५ दूर्वा आम्रपत्र १० पटडीया २ चंदोया १ घृत प्रणीता प्रोक्षणी अर्धचावल पृथूदकपात्र कुनाली १ हलपजाली गोदुग्ध अर्धसेर चावलपूर्णपात्र १ वस्त्रगज १० सिंदू डांगा ४ शण सुवर्ण रेत स्रुवा कुशा समिधा चरुस्थाली इति चतुर्थीकर्मसामग्री ॥

१ अथकन्योद्वाहेयजमानकर्तृकप्रतिज्ञासंकल्पः ॐविष्णुर्विष्णुर्विष्णुः अद्यब्रह्मणोद्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टाविंशतिमेयुगे कलियुगेप्रथमचरणे अमुकसंवत्सरेऽमुकगोत्रेऽमुकायनेऽ

मुकपदेऽमुकमासेऽमुकतिथौनक्षत्रकरणयोगयुक्तेऽमु-
कवासरे अमुकगोत्रोत्पन्नोहं जन्मनामतःप्रसिद्धनाम-
तश्चामुकशर्माहं कृतकायिकमानसिकसांसर्गिकज्ञा
ताज्ञातसमस्तदोषपरिहारार्थं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त
फलावाप्तिकामःश्रीयज्ञपुरुषनारायणप्रीत्यर्थंतत्प्रसा-
दात्कायवाङ्मनोभिर्महापातकादिदोषनिवृत्तिपूर्वकै
हिकामुष्मिकेश्वरप्रसादानुरूपविभवयोगक्षेमप्राप्तयेच
अश्वमेधपुण्यजनकताकपुत्रीविवाहात्मकदानमहं क-
रिष्ये तन्निर्विघ्नतासिद्धये यथोपलब्धोपचारद्रव्यैः
गणपत्यादिनवग्रहपूजनमहंकरिष्ये ॥ इति ॥ पश्चा
त्गणेशादिपूजनं कुर्यात् ॥

२ अथ- यजमानकर्तृकशुभ्रचौलाधोतीपर्णानांदा
न संकल्पः ॥ अद्येत्यादि०पुत्रीविवाहकर्म्मणि क-
न्यादानप्रतिपत्त्यर्थमादाविमानि चतुष्टयवस्त्राणि प-
ट्टकार्पासादिसंपादितानि मांजिष्ठारिष्टादिनानारं-
जितानि बृहस्पतिदैवतानि कन्यावरयोर्वैवाहिकस-
मये परिधानयोग्यानि सदक्षिणानि अमुकगोत्रप्र-
वरायाऽमुकनामशर्मणे विष्णुरूपिणेवरायतुभ्यमहं
संप्रददे ॥ इतिशुभ्रचौलादिदानम् ॥

३ अथ—कन्यापितृकर्तृकवेदीदानसंकल्पः ॥ ३ ॥
ॐतत्सदद्येति० नानारागानुरूपयज्ञाधिष्ठातृपरमे-
[illegible] प्रीत्यर्थं तत्प्रसादात्

याज्ञिकभूमिदानजन्यनानास्वर्गादिफलप्राप्तये इ-
मानि रजतमुद्रिकानि चंद्रदैवतानिसदक्षिणानिक-
न्यावैवाहिकचतुष्टयवंशानीमंतस्तंभवेदिकान्तरभू-
मिप्रतिनिध्यात्मकानियथानामगोत्राय० इतिवेदी
दानसंकल्पः ॥

४ अथ—यजमानकर्तृकचतुर्थीदानसंकल्पःॐअद्ये
त्यादि० कृतेतत्पुत्रीविवाहचतुर्थीकर्मप्रतिष्ठार्थसां
गतासिद्ध्यर्थंचेमांरजतमुद्रिकांसदक्षिणांचंद्रदैवतां
अमुकगोत्राय अमुकशर्मणेब्राह्मणायतुभ्यमहंसंप्रद
दे० स्वस्तीति प्रतिवचनं सर्वत्र०इतिचतुर्थीदानं॥
५ अथ—यजमानकर्तृकउपाध्यायदक्षिणासंकल्पः॥
ॐअद्येत्यादि०कृतैतदग्निष्टोमादिकृतसमपुत्रविवाह
योगमंत्रोच्चारणादिकर्तव्यताककर्म्मप्रतिष्ठार्थ सांग-
तासिद्ध्यर्थंचेदंद्रव्यंरजतंचंद्रदैवतं अमुकगोत्रायाऽ
मुकशर्म्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहंसंप्रददे ॥ इति ॥
६ अथ—यजमानकर्तृककन्यायज्ञान्ते अन्नदानभू-
रिद्रव्यदानसंकल्पः ॥ ॐअद्येत्यादि० श्रीयज्ञपुरु-
षपरमेश्वरप्रीत्यर्थं तत्प्रसादादवगताऽनवगतसक
लदुरितोपदुरितशमनपुरस्सराक्षयफलावाप्तयेच व-
रवध्वोः पूर्णायुरादिसुखसंपत्तिसिद्धये प्रजापतिकं
दास्यमानान्नं तथाभूरिद्रव्यंताम्रंवारजतं सूर्यदैवतं
ना सदक्षिणं यथा२नाम गोत्रेभ्यो ब्राह्मणे

भ्यो विभज्यदातुमहमुत्सृजे ॥ इतिकन्यापितृकर्तृकनानाद्रव्यदानसंकल्पः ॥ शुभमस्तु ॥

७ अथ–बालककर्तृकविवाहप्रतिज्ञासंकल्पः ॐ तत्सदद्येति॰ जन्मलग्नतो वर्षलग्नतश्च तथा वैवाहिकलग्नतः खेटावेदतानिष्टफलनिरसनोत्तरेष्टफलप्राप्तिपुरस्सरसकलकर्मसिद्ध्यर्थं गार्हस्थ्यनानाकर्माधिष्ठानात्मकस्वविवाहकर्माहं करिष्ये ॥ तदंगत्वेनतन्निर्विघ्नतासिद्ध्यर्थआदौगणपत्यादिनवग्रहपूजनमहंकरिष्ये ॥ १ ॥ इति ॥

८ अथ–पत्नीप्रतिग्रहगोदानसंकल्पः ॥ ॐतत्सदद्येत्यादि॰श्रौतस्मार्तवैदिकेतिहासपुराणोक्तफलावाप्तिकामःश्रीपरमेश्वरनारायणादिविशेषेणविशिष्टभगवत्प्रीत्यर्थं तत्प्रसादात् जन्मराशितोनामराशितश्च जन्मलग्नतोवर्षलग्नतश्च जन्यजननजनिष्यमाणात्मकदोषत्रयनिरसनोत्तरजन्मलग्नतो विवाहलग्नतश्चानिष्टखेटावेदिताशुभदुरितक्रमनिवृत्तयेपत्नीपाणिग्रहणजन्यप्रतिग्रहाविशेषताकपुरस्सरभार्यात्रिवर्गकरणमित्यनेनप्रतिपादितधर्मार्थकामप्रातिपत्तयेचेमांगां सुवर्णरजतवस्त्रैः यथाशक्त्यलंकृतां कांस्यदोहोपयुक्तां सवत्सां मुक्तालांगूलभूषितां सुशीलां रुद्रदेवतां अमुकगोत्राय अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॥ ❀ अथद-

क्षिणासंकल्पः ॥ ॐ अद्यकृतैतद्गोदानप्रतिष्ठार्थ मिदंद्रव्यं रजतंवा सुवर्णं चंद्रदैवतंवाअग्निदैवतं यथा नामगोत्रायेत्यादि ॥

९अथ–गोदानाभावे दक्षिणादानसंकल्पः ॥ ॐअद्ये त्यादि सर्वं पूर्ववत्० इमांगांइत्यस्यंस्थाने गोदानप्र तिनिधिभूतमिदं द्रव्यं अमुकदैवतं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॥ दक्षिणापूर्ववत् ॥

१० अथ–उपाध्यायदक्षिणादानसंकल्पः ॥ ॥ ॐअद्येत्यादि० गतानवगतसकलदुरितोपदुरितक्ष यपुरस्सरसकलत्रस्वशरीरकल्याणोत्तरपूर्णायुरादि सुखसंपत्ति सिद्धिकामः कृतैतज्जन्मादिदशसंस्कारां तर्गतस्वविवाहात्मकमहत्संस्कारमंत्रोच्चारणकार यितव्यकर्तव्यताककर्म्मप्रतिष्ठार्थंच साङ्गतासिद्ध्य र्थम् इमाममुकद्रव्यमयीमुपाध्यायदक्षिणां अमुक दैवतां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणांदातुमहमु त्सृजे १ इति० ॥

११ अथ–विवाहे यजमानकर्तृकखट्वादानसंक ल्पः। तत्रकन्यापितासपत्नीकःकृतनित्यक्रियः कृमि जवस्त्रपरिधानपूर्वकोत्तराभिमुखः। आदौगोधूमचूर्णे नगणपत्यादीन्विधाय स्वस्तिवाचनपूर्वकं प्रतिज्ञा संकल्पंकुर्यात् ॥ ॐतत्सदद्येत्यादि देशकालपू

वैक० श्रुतिस्मृत्याद्युक्तफलावाप्तिपुरस्सरावगतान
गतसकलदुरितमहापातकक्षयानंतरज्ञाताज्ञातकृत
कायवाङ्मनःकृतसमस्तपातकोपपातकजन्मत्रयो
पार्जितपापक्षयकामः राजद्वारतोव्यवहारतश्चसुप्रति
ष्ठितैश्वर्यसुखावाप्तये च श्रीमद्भगवच्चरणारविंदप्रीति
जनककन्यादेहरोमसमसंख्याकल्पावच्छिन्नस्वर्गलो
कवासजनककन्योद्वाहांगभूतविचित्रवर्णवस्त्राद्याभर
णरीतिकांस्यलोहपैत्तलत्रपुसीसकमापपिष्टपक्वान्न
रजतसुवर्णरूप्याद्यनेकभूपणताम्राद्यनेकद्रव्ययु
क्तखट्वादानमहं करिष्ये ॥ ॥ ततः दक्षिणशिरसं
मुत्तरपादां तूलकोपधानादिपुरस्कृतां वस्त्राभरण
पात्राद्यलंकृतां खट्वां वरकन्यारोहणपूर्वकां पूर्व
दिक्पार्श्वेरक्तसूत्रोपबद्धां कन्यापितापत्न्यासह ग्रंथि
बंधनंकृत्वा खट्वातंतुगंधाक्षतपुष्पजलैः संकल्पं
कुर्यात् ॥ १२ अथ–ॐतत्सदद्येत्यादि देशकालौ
संकीर्त्य ० श्रुतिस्मृतिपुराणेतिहासेत्यादि प्रतिपा
दितफलावाप्तिकामोऽवगतानवगतसकलदुरितोपदु-
रितक्षयकामश्चनानापटतंतुसंख्यासमानानेककल्पा
वच्छिन्नवैकुंठलोकप्राप्तिकामः श्रीलक्ष्मीनारायणप्री
तिजनकंबहुअश्वमेधयज्ञफलसूचकस्वपुत्रीविवाहाङ्ग
भूतां इमां सतूलोपधानादिसंस्कृतां खट्वां उत्ताना
मांगिरोदेवतां बृहस्पतिदेवताकामितरक्तपीताद्यनेक

विधसुवर्णरजततंतुमिश्रितवस्त्रसंयुतां विश्वकर्मदे वताकैः यथापरिमितैः रीतिकांस्यलोहमयपात्रैः सपात्रितां चंद्राग्निसामुद्रदैवताकअनेकविधविर चितरजतसुवर्णभूषणविभूषितां प्रजापतिदैवताक विविधपक्वान्नाद्याधिकरणकां सूर्य्यचंद्रदेवताकयथा परिमितताम्ररजतमयैः द्रव्यैस्सदक्षिणाममुकगो त्राय अमुकप्रवरायामुकनाम्ने वराय तुभ्यमहं सं-प्रददे॥ स्वस्तीति प्रतिवचनं वरप्रत्युक्तिर्वा ॥ दक्षि णायाभिन्नसंकल्पः । ॐअद्यकृतैतत्खट्वादानप्रति ष्ठार्थमिदं ताम्ररजतद्रव्यं सूर्यचंद्रदैवतं अमुक॰ ॥ आचारात् कन्यादातासकलत्रःजलेनवरकन्यासहि तखट्वांसव्येन वेष्टनंकुर्यात् ततःसपत्नीकोयजमानः खट्वापश्चिमभागेपूर्वाभिमुखः सन् कन्यावरक्षिप्तधा न्यानिगृहीगृह्णीयात्सबांधवैः॥ अथधान्यप्रक्षेपेमंत्रः ॥ ॐविश्वामित्रो जमदग्निर्वसिष्ठो गौतमस्तथा । कश्यपोत्रिर्भरद्वाजोविष्णुर्ब्रह्मादयश्चये । तेसर्वेत्वां प्रयच्छंतुधनधान्यादिसंपदम्॥ॐसनकःसनंदनाद्या श्चयेनवोमातरस्तथा । देवाःसर्वेप्रयच्छंतुधनंधान्यं सदागृहे २ ॐचिरंजीवतुमेमाता चिरंजीवतुमेपिता॥ चिरंजीवतुमेभ्राता चिरंजीवंतुबांधवाः ३ ॐ दि वारक्षतुसूर्यायं रात्रौरक्षतुचंद्रमाः । वंशंरक्षतुभौमश्च धनधान्यादिसंपदाम् ४ पितृवंशंगुधोरक्षेत् मातृ

वंशंगुरुस्तथा । वंधुवर्गंचरक्षेत्तुंभृगुर्दैत्यपुरोहितः ५ अश्विन्यादीनिऋक्षाणि योगाविष्कंभकादयः। तिथयः प्रतिपद्याद्याः शुभंयच्छन्तुतेसदा६॥ ॐतेजोवृद्धिर्यशोवृद्धिर्वंशवृद्धिस्तथैवच । लोककीर्तिर्भवेत्तात धनधान्यंसदागृहे ॥ ७॥ ॐगंगाद्याः सरितः सर्वाः शोणाद्याश्चनदास्तथा । कृतंपापं प्रशाम्यंतु प्रयच्छन्तुसुखंचते ॥ ८॥ ततोयजमानः श्रीसूर्यायार्घ्यंदद्यात् ॥ इतिखट्वादानविधिः ॥

(अथ गोत्रोच्चारणम्)

ॐ श्रीमत्पंकजविष्टरो हरिहरौ वायुर्महेन्द्रोनलश्चंद्रोभास्करवित्तपालवरुणाःप्रेताधिपाद्याग्रहाः ॥ प्रद्युम्नो नलकूवरौ सुरगजश्चिंतामणिः कौस्तुभः स्वामीशक्तिधरश्चलांगलधरः कुर्वन्तु वो मंगलम्॥ १ ॥ श्लोकान्तेगोत्रमुच्चारयेयुः ३ गौरीश्रीकुलदेवताचसुभगाभूमिः प्रपूर्णाशुभा सावित्रीचसरस्वती चसुरभिःसत्यव्रतारुंधती । स्वाहाजाम्ववती च रुक्मभगिनी दुःस्वप्नविध्वंसिनी वेलाचांवुनिधेःसमीनमकरा कुर्वंतुवो मङ्गलम् ॥ २ ॥ गंगासिंधुसरस्वतीच यमुनागोदावरीनर्मदा कावेरी सरयुर्महेंद्रतनया चर्मण्वती वेदिका ॥ क्षिप्रावेत्रवती महासुरनदी ख्याता च यागंडकी पुण्याःपुण्यजलैः समुद्रस-

हिताःकुर्वंतुवो मङ्गलम् ॥ ३ ॥ लक्ष्मीःकौस्तुभपारिजातकसुराधन्वंतरिश्चंद्रमाधेनुः कामदुघा सुरेश्वरगजो रंभाचदेवांगना ॥ अश्वःसप्तमुखो विषं हरिधनुः शंखोमृतं चांबुधेरत्नानीति चतुर्दश प्रतिदिनं कुर्वन्तुवो मङ्गलम् ॥ ४ ॥ ब्रह्मावेदपतिः शिवःपशुपतिःसूर्योग्रहाणांपतिःशक्रोदेवपतिर्हविर्हुतपतिःस्कंदश्चसेनापतिः । विष्णुर्यज्ञपतिर्बलीरधःपतिः शक्तिःपतीनांपतिः सर्वेतेपतयः सुमेरुसहिताःकुर्वन्तु वो मङ्गलम् ॥ ५ ॥ इति सर्वोपयोगिगोत्रोच्चारणं ॥ इति श्रीगौतमान्वयालंकृत (शौरि) दैवज्ञममार्य श्रीढुनिचंद्रसंगृहीतं संकल्पप्रकरणं समाप्तं शुभं भू०॥

अथ विवाहरामटीकायां । कन्यासंकल्पविधिः ॥ हरिःॐम् ॥ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुःपुनातु अद्यतत्सद्ब्रह्म अथानन्तवीर्यस्य श्रीमदादिनारायणस्याऽचिंत्यापरिमिताऽनंतशक्तिसमन्वितस्य स्वकीयमूलप्रकृतिपरमशक्त्याप्रक्रीडमानस्य सच्चिदानन्दसन्दोहस्वरूपेस्वात्मनिसर्वाधिष्ठाने स्वाज्ञानकल्पितानां महाजलौघमध्ये परिभ्रम्यमाणानामनेककोटिब्रह्माण्डानामेकतमेऽस्मिन् ब्रह्मांडेऽव्यक्तमहदहङ्कारपृथिव्यप्तेजोवाय्वाकाशादिभिर्दशगुणोत्तरैरावरणैरावृते आधारशक्तिश्रीकूर्मवराहधर्मानन्ताष्टदिग्गजादिप्रतिष्ठिते . ऐरावतपुण्डरी

कवामनकुमुदाऽञ्जनपुष्पदन्तसार्वभौमसुप्रतीका
ख्याष्टदिग्दन्तिशुण्डादण्डोत्ताण्डितैतद्ब्रह्माण्डख-
ण्डयोरन्तर्गतभूर्लोकभुवर्लोकस्वर्लोकमहर्लोकजन-
लोकतपोलोकसत्यलोकाख्यानांसर्वज्ञसर्व
शक्तिसमन्वितसर्वोत्तमसर्वाधिपश्रीचतुर्मुखप्रभृ
तिस्वस्वलोकाधिष्ठातृपुरुषाधिष्ठितानामधोभागे
फणिराजस्य शेषस्य सहस्रफणामण्डलैकफणोपरि
सर्षपैककणायमानमहीमण्डलान्तर्गतातलवितल
सुतलतलातलरसातलमहातलपातालानां स्वस्वा
धिष्ठात्रधिष्ठितानामुपरितने सुमेरुमंदरमन्दराचल
निषधहिमगिरिशृङ्गवद्धेमकूटदुर्द्धरपारियात्र
शैलमहाशैलमहेंद्रसह्याद्रिमलयाचलविंध्यर्ष्यमू
कचित्रकूटमैनाकमानसोत्तरत्रिकूटोदयाचला
स्ताचलपर्य्यन्तानेकाभिधानाद्रिगणप्रतिष्ठितायां
जम्बूप्लक्षशाल्मलीकुशक्रौञ्चशाकपुष्कराख्य
सप्तद्वीपवत्यां लवणेक्षुसुरासर्पिर्दधिक्षीरशुद्धोदका
ख्यसप्तसागरसमन्वितायां समस्तभूरेखायां कमल
कदम्बगोलकाकारायां वर्तमाने कुवलयकोशान्त
र्गतदलवद्विराजमाने उत्तरकुरुहिरण्मयरम्यकभ
द्राश्वकेतुमालेलावृतहरिवर्षकिम्पुरुषभारता
ख्यनवखण्डवति जम्बुद्वीपे सर्वेभ्योप्यतिरिक्तसा
ख्यातिदेशादिभिरप्यभीष्टसुकृतक्षेत्रभूतहेतुनाभिक

पिततमे अङ्गवङ्गकलिङ्गकालिङ्गकाम्बोज-
सौवीर सौराष्ट्रमहाराष्ट्र बङ्गालोत्कलमगधमालव
नेपालकेरलचोरलगौडमलपाञ्चालसिंहलम
त्स्य द्रविड द्राविड कर्णाट राटव शूरसेन कौङ्कण
टोंकण पाण्ड्य पुलिंदान्ध्र द्रौण दशार्ण विदेह वि
दर्भ मैथिल कैकय कोशल कुन्तल मैन्धुव जावल
सार्वसिन्धु शालभद्र मध्यदेश पर्वत काश्मीर
पुष्टाहार सिंधु पारसीक गान्धार वाल्हीक (हूण)
प्रभृतिवहुविधदेशविशेषसंपन्ने दण्डकारण्य महा
रण्याद्वैतारण्य कामुकारण्य सैन्धवारण्य प्रभृत्य
नेकारण्यवति श्रीगंगा यमुना सरस्वती गोदावरी
नन्दालकनन्दा मन्दाकिनी कौशिकी नर्मदा सरयू
कर्मनाशा चर्मण्वती क्षिप्रा वेत्रवती कावेरी फल्गु
मार्कण्डेय रामगंगा शतद्रु विपाशैरावती चन्द्रभा
गा वितस्ता सिन्धु दृषद्वती प्रभृत्यनेकनदनदीवति
कुरुक्षेत्र हरिद्वार क्षेत्रमाल क्षेत्रादि वहुक्षेत्रान्विते
भारतखण्डे तत्रापि मध्यरेखाकुरुक्षेत्रादमुकदिग्भा
गेऽमुकनदीमध्ये श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्व
न्तरेऽष्टाविंशेकलौयुगे कलिप्रथमचरणेआर्य्यावर्ते
पुण्यवृहस्पतिक्षेत्रे शुभसंवत्सरेऽस्मिन्नमुकायनगत
सूर्ये अमुकर्तावामुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकतिथाव
मुकवासरे यथायोगकरणमुहूर्ते वर्तमाने चंद्रतारा

ऽनुकूलेपुण्येऽहनि अमुकगोत्रस्य अमुकसूत्रिणोऽमु
कशर्मणःप्रपौत्राय।१।अमुकगोत्रस्य यथोक्तप्रवरस्या
ऽमुकवेदिनोऽमुकशाखिनोऽमुकसूत्रिणोऽमुकशर्म्मणः
पौत्राय ॥२॥ अमुकगोत्रस्य यथोक्तप्रवरस्याऽमुक
वेदिनोऽमुकशाखिनोऽमुकसूत्रिणोऽमुकशर्म्मणः पु
त्राय ॥ ३ ॥ अमुकगोत्रस्य यथोक्तप्रवरस्याऽमुक
वेदिनोऽमुकशाखिनोऽमुकसूत्रिणोऽमुकशर्मणः प्रपौ
त्रीं १ अमुकगोत्रस्य यथोक्तप्रवरस्य अमुकवेदिनो
ऽमुकसूत्रिणोऽमुकशर्म्मणःपौत्रीं २ अमुकगोत्रस्या
मुकवेदिनोऽमुकशाखिनोऽमुकसूत्रिणोऽमुकशर्मणः
पुत्रीं ३ इत्येवं गोत्रप्रवरादिनिरूपणपूर्वकप्रपिता
महादिसंज्ञासंबंधकथनं त्रिरावर्त्य ३ अमुकगोत्राय
यथोक्तप्रवरायाऽमुकवेदिनेऽमुकशाखिनेऽमुकसूत्रिणे
अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय वरायअमुकगोत्रांयथोक्तप्रव
रामुकनाम्नीमिमां कन्यां यथाशक्त्यलंकृतां महत
वस्त्रद्वयावृतांविवाहदीक्षितां प्रजापतिदैवतकां गङ्गा
वालुकाभिःसप्तर्षिमण्डलपर्यन्तराशीकृतरेणुपुञ्जस्य
मध्याद्वर्षसहस्रावसाने एकैकवालुकापकर्षणेन सर्व
वालुकापकर्षणसम्मितकालपर्यन्तं सूर्यलोकनिवा
ससिद्ध्यर्थं यवैश्चन्द्रमण्डलपर्यन्तं कृतएव राशि
तो वर्षसहस्रावसाने एकैकयवापकर्षणेन सर्वयवाप
कर्षणसम्मितकालपर्यन्तं चंद्रलोकनिवाससिद्ध्य

र्थं मापैर्ध्रुवमण्डलपर्यन्तराशीकृतमापेभ्यो वर्ष सहस्रावसाने एकैकमापापकर्षणसंमितकालं याव द्विष्णुलोकरुद्रलोकध्रुवलोकनिवाससिद्ध्यर्थं गन्धर्वाप्सरोगणमण्डितहंसपारावतशुकसारिका रुतनादित किङ्किणीशतसमलंकृत दिव्यविमानेन मनोऽभिलषित देशगमन पूर्वक गिरि नदी नद सिं धुद्वीपदिव्यदेश नन्दन चैत्ररथ प्रभृति स्थानेषु स्वा भिलषित भोग्यविपयोपभोगार्थं मया सह दशपूर्वेषां दशावरेषां मद्वंश्यानामग्निष्टोमातिरात्रवाजपेय पु ण्डरीकाश्वमेध क्रतुशतफल जन्य ब्रह्मलोक निवा सार्थं पत्नीत्वेन तुभ्यमहं संप्रददे ॥ इतिशंखावस्थि तद्रव्ययुत जलेन सह कन्याहस्तं [सांगुष्ठं] वरहस्ते दद्यात् ॥ इतिनिवाहरामटीकाधृतकन्या संकल्पविधानम् ॥ श्रीः ॥ ॥

अथ संस्कारभास्करोक्तः संक्षेपतः कन्यासंकल्पः ततो दाता स्वदक्षिणे पत्न्यासह वरदक्षिणपार्श्वे भागे शुभासने उदङ्मुख उपविश्य आचम्य प्राणा नायम्य संवत्सरादि क्षेत्रादि देशकालौ संकीर्त्य एवं गुणविशेषेणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अस्मि न्पुण्याहे अस्याः कन्याया अनेनवरेण धर्मप्रजया उभयोः वंशयोर्वंशवृद्ध्यर्थं तथाच मम समस्तपितॄ णां निरतिशयसानंद ब्रह्मलोकावाप्त्यादि कन्यादान

कल्पोक्त फलावाप्तये अनेन वरेण अस्यां कन्याया मुत्पादयिष्यमाणसंतत्या दशपूर्वान्दशावरान्मांच एकविंशतिपुरुषानुद्धर्तुं ब्राह्मविवाहविधिना श्रील क्ष्मीनारायणप्रीतये कन्यादानमहं करिष्ये इति ॥ अत्र सर्वसंकल्पादिषु शर्म इत्यस्यस्थाने क्षत्रिय वैश्यविवाहे वर्मन् गुप्तक्रमेण कथनम् ॥ यत्र अद्ये-त्यादि० दृश्यते तत्र पूर्वमुक्तं सर्वं योजनीयम्॥गोत्रो च्चारणं श्लोकान्ते संकल्पविहितं प्रपितामहपूर्विका वंशसंख्या कथनीया इति परिभाषा ॥ अनुक्तं श्लो-कतः सर्वं ज्ञातव्यम् ॥ श्रीः ॥

अथ त्रैवर्णिकानां पूजनार्थं शुक्लयजुर्वेदोक्तं सुस्वर साहितं नवग्रहमंत्रविधानं लिख्यते ॥

अथ सूर्यकाण्डिका ॥

आकृष्णेनरजसावर्तमानोनिवेशयन्नमृतम्मर्त्यञ्च ॥ हिरण्ययेनसवितारथेनादेवोयातिभुवनानिपश्यन् ॥ १ ॥

अथ चंद्रमःकाण्डिका ॥

इमन्देवाअसपत्नꣳ सुवद्धम्महतेक्षत्राय महतेज्यैष्ट्यायमहतेजानराज्यायेन्द्रस्ये

अथषोडशोपचाराणिज्ञानमालायामुक्तानि॥ तद्यथा आवाहनम् १ आसनं२ पाद्यं ३ अर्घ्यं ४ आचमनीयम् ५ स्नानम् ६ वस्त्रम् ७ यज्ञोपवीतम् ८ गंधम् ९ पुष्पम् १० धूपम् ११ दीपम् १२ नैवेद्यं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनं १३ ताम्बूलम् १४ दक्षिणा १५ नमस्कारम् १६॥ इति षोडशोपचाराणि एवं गणपत्यादीन्सर्वान्पूजयेत्॥ अभावेद्रव्यस्य यथाशक्त्योपलब्धवस्तुभिः पुष्पाक्षतादिभिःश्रद्धायुक्तः पूजयेत्॥

तवर्णमगधश्चात्रेयगोत्रोद्भवो वाणेशानदिशः सुहृ
च्छनिभृगुः शुत्रुःसदाशीतगुः । कन्यायुग्मपतिर्दशा
ष्टचतुरःषण्नेत्रगःशोभनो विष्णुः मौरुप देवते श
शिसुतः कुर्या० ॥ ४ ॥ जीवश्चाङ्गिरगोत्रजोत्तरमु
खो दीर्घोत्तरासंस्थितः पीताश्वत्थसमिच्च सिन्धु
जनितश्चापोऽथमीनाधिपः । सूर्येन्दुक्षितिजप्रियो
बुधसितौ शत्रू समाश्चापरे सप्ताङ्कद्विभवः शुभःसुरगु
रुः कुर्या० ॥ ५ ॥ शुक्रोभार्गवगोत्रजः सितनिभःप्रा
चीमुखः पूर्वदिक्पश्चाङ्गोवृषभस्तुलाधिपमहाराष्ट्रा
धिपोदुम्बरः । इन्द्राणीमघवानुभौबुधशनीमित्रार्क
चन्द्रौरिपूषष्ठोद्विर्दशवर्जितोभृगुसुतःकुर्या० ॥ ६ ॥म
न्दःकृष्णनिभस्तुपश्चिममुखःसौराष्ट्रकःकाश्यपःस्वा
मीमकरकुम्भयोर्बुधसितौमित्रेसमश्चाङ्गिराः ॥स्थानं
पश्चिमदिक्प्रजापतियमौदेवौधनुष्यासनःषट्त्रिस्थः
शुभकृच्छनीरविसुतःकुर्या० ॥ ७ ॥ राहुःसिंहलदे
शजश्चनिर्ऋतिःकृष्णाङ्गशूर्पासनोयःपैठीनसिसंम्भवः
श्चसमिधोदूर्वामुखोदक्षिणःायःसर्पाद्यधिदेवतेचानिर्ऋ
तिप्रत्याधिदेवःसदाषट्त्रिस्थःशुभकृच्चसिंहिकसुतः
कुर्या० ॥ ८ ॥ केतुर्जैमिनिगोत्रजः कुशसमिद्वाय
व्यकोणेस्थितश्चित्राङ्गध्वजलाञ्छनोहिमगृहा योद
क्षिणाशामुखःत्रह्माचैवसचित्रचित्रसहितः प्रत्याधिदे
... ...नवग्रहपतिःकुर्यात्सदामंगल

न्द्रियाय ॥ इमममुष्यपुत्रममुष्यै पुत्र मस्यैविश ऽएषवोमीराजासोमोस्माकम्ब्रा ह्मणानाᳬंराजा ॥ २ ॥

अथ भौमकण्डिका ॥

अग्निर्म्मूर्द्धादिवः कुकुत्पतिः पृथिव्या ऽअ यम् । अपाᳬंरेताᳬंसिजिन्वति ॥ ३ ॥

अथ बुधकण्डिका ॥

उद्बुध्यस्वाग्नेप्प्रति जागृहित्वमिष्टापूर्ते सᳬंसृजेथामयञ्च ॥ अस्मिन्त्सधस्थे ऽअध्यु त्तरस्मिन्विश्वेदेवायजमानश्चसीदत ॥ ४ ॥

अथ बृहस्पतिकण्डिका ॥

बृहस्पते ऽअतियदर्य्यो ऽ अर्हाद्युमद्विभा तिक्रतुमज्जनेषु ॥ यद्दीदयच्छवस ऽऋत प्रजाततदस्मासुद्रविणन्धेहिचित्रम् ॥ ५ ॥

अथ शुक्रकण्डिका ॥

अन्नात्परिस्रुतोरसम्ब्रह्मणाव्यपिबत्क्षत्र म्पयः सोमम्प्रजापतिः ॥ ऋतेनसत्यमिं

न्द्रियंविपानꣳशुक्रमन्धसऽइन्द्रस्येन्द्रि
यमिदम्पयोमृतम्मधु ॥ ६ ॥

अथ शनिकण्डिका ॥

शन्नोदेवीरभिष्टयऽआपोभवन्तुपीतये
शंय्योरभिस्रवन्तुनः ॥ ७ ॥

अथ राहुकण्डिका ॥

कयानश्चित्रऽआभुवदूतीसदावृधः सखा
। कयाशचिंष्ठयावृता ॥ ८ ॥

अथ केतुकण्डिका

केतुङ्कृण्वन्नकेतवेपेशोमर्य्याअपेशसे । स
मुषद्भिरजायथाः ॥ ९ ॥ इति ॥

यश्चयस्य यदातुष्टः स तं यत्नेन पूजयेत् । ब्रह्मणै
षांवरोदत्तःपूजिताःपूजयिष्यत ॥ ग्रहाधीना नरें
द्राणामुच्छ्रायाः पतनानिच ॥ भावाऽभावौच जगत
स्तस्मात्पूज्यतमाग्रहाःइति। याज्ञवल्क्यस्मृतौ प्रथ
माध्याये ग्रहशांतिप्रकरणे उक्तम् । अतः षोडशो
पचारैर्गणपत्यादीन् संपूज्य विशेषेण पूजनीयाः ॥
सन्तुष्टाः सन्तश्चतेअनिष्टान् शमयंति ॥ २ ॥ प्रा
र्थनेयं विष्णुदत्तस्य ॥

अथषोडशोपचाराणिज्ञानमालायामुक्तानि॥ तद्यथा आवाहनम् १ आसनं२ पाद्यं ३ अर्घ्यं ४ आचमनीयम् ५ स्नानम् ६ वस्त्रम् ७ यज्ञोपवीतम् ८ गंधम् ९ पुष्पम् १० धूपम् ११ दीपम् १२ नैवेद्यं मध्येपानीयं उत्तरापोशनं हस्तप्रक्षालनं मुखप्रक्षालनं १३ ताम्बूलम् १४ दक्षिणा १५ नमस्कारम् १६॥ इति षोडशोपचाराणि एवं गणपत्यादीन्सर्वान्पूजयेत् ॥ अभावेद्रव्यस्य यथाशक्त्योपलब्धवस्तुभिः पुष्पाक्षतादिभिःश्रद्धायुक्तः पूजयेत् ॥

अथ नवग्रहमङ्गलाष्टकानि ॥ भास्वान्काश्यपगोत्रजोऽरुणरुचिर्यःसिंहराशीश्वरः षट्त्रिस्थोदशशोभनो गुरुशशीभौमेषुमित्रंसदा । शुक्रोमन्दरिपुः कलिङ्गजनितश्चाग्नीश्वरौ देवते मध्ये वर्तुलपूर्वदिग्दिनकरः कुर्यात्सदामङ्गलम् ॥ १ ॥ चन्द्रः कर्कटकप्रभुः सितनिभश्चात्रेयगोत्रोद्भवश्चाग्नेय्यांश्चतुरस्रवारुणमुखश्चापोप्युमाधीश्वरः । षट् सप्ताग्निदशैकशोभनफलो नोरिर्बुधार्कप्रियः स्वामी यामुनदेशजो हिमकरः कु० ॥ २ ॥ भौमो दक्षिणदिक्त्रिकोणयमदिग्विन्ध्येश्वरो रक्तभः स्वामी वृश्चिकमेषयोः सुरगुरुश्चार्कःशशीसौहृदः । ज्ञोरिः षट्त्रिफलप्रदश्च वसुधास्कन्दौ क्रमादेवते भारद्वाजकुलोद्भवः क्षितिसुतः कुर्या० ॥ ३ ॥ सौम्योदङ्म

तवर्णमगधश्चात्रेयगोत्रोद्भवो बाणेशानदिशः सुहृ
च्छनिभृगुः शत्रुःसदाशीतगुः । कन्यायुग्मपतिर्दशा
ष्टचतुरःपण्नेत्रगःशोभनो विष्णुः मौरुप देवते श
शिसुतः कुर्या० ॥ ४ ॥ जीवश्चाङ्गिरगोत्रजोत्तरमु
खो दीर्घोत्तरासंस्थितः पीताश्वत्थसमिच्च सिन्धु
जनितश्चापोऽथमीनाधिपः । सूर्येन्दुक्षितिजप्रियो
बुधसितौ शत्रू समाश्चापरे सप्ताङ्कद्विभवः शुभःसुरगु
रुः कुर्या० ॥ ५ ॥ शुक्रोभार्गवगोत्रजः सितनिभःप्रा
चीमुखः पूर्वदिक्पञ्चाङ्गोवृषभस्तुलाधिपमहाराष्ट्रा
धिपोदुम्बरः । इन्द्राणीमघवानुभौबुधशनीमित्रार्क
चन्द्रौरिपूपष्ठोद्विर्दशवर्जितोभृगुसुतःकुर्या० ॥ ६ ॥मं
न्दःकृष्णनिभस्तुपश्चिममुखःसौराष्ट्रकःकाश्यपःस्वा
मीमकरकुम्भयोर्बुधसितौमित्रेसमश्चाङ्गिराः ॥स्थानं
पश्चिमदिक्प्रजापतियमौदेवौधनुष्यासनःपट्त्रिस्थः
शुभकृच्छनीरविसुतःकुर्या० ॥ ७ ॥ राहुःसिंहलदे
शजश्चनिर्ऋतिःकृष्णाङ्गशूर्पासनोयःपैठीनसिसंम्भवः
श्वसमिधोदूर्वामुखोदक्षिणःयःसर्पाद्यधिदेवतेचनिर्ऋ
तिप्रत्याधिदेवःसदाषट्त्रिस्थःशुभकृच्चसिंहिकसुतः
कुर्या० ॥ ८ ॥ केतुर्जैमिनिगोत्रजः कुशसामिद्वाय
व्यकोणेस्थितश्चित्राङ्गध्वजलाञ्छनोहिमगुहा योद
क्षिणाशामुखःब्रह्माचैवसचित्रचित्रसहितः प्रत्याधिदे
वःसदाषट्त्रिस्थःशुभकृच्चबर्बरपतिःकुर्यात्सदामंगल

म् ॥ ९ ॥ इत्येतद्ग्रहमङ्गलाष्टनवकंलोकोपकारप्रदं पापौघप्रशमं महच्छुभकरंसौभाग्यसंवर्द्धनम् । यः प्रातः(शुद्धः)शृणुयात्पठत्यनुदिनं श्रीकालिदासो दित स्तोत्रंमंगलदायकंशुभकरं प्राप्नोत्यभीष्टंफलम् ॥ १०॥ इतिनवग्रहमङ्गलाष्टकानि ॥ पारस्करगृह्य सूत्रोक्तं कुशकण्डिकासूत्रम् ॥ अथातोगृह्यस्थाली पाकानां कर्म. परिसमुह्योपलिप्योल्लिख्योद्धृत्याभ्यु क्ष्याग्निमुपसमाधायदक्षिणतोब्रह्मासनमास्तीर्यप्रणी यपरिस्तीर्य्याऽर्थवदासाद्यपवित्रेकृत्वाप्रोक्षणीःसंस्कृ त्यार्थवत्प्रोक्ष्यनिरूप्यांज्यमधिश्रित्य पर्यग्निंकुर्या त्स्रुवंप्रतप्यसंमृज्याभ्युक्ष्यपुनःप्रतप्य निदध्यादाज्य मुद्वास्योत्पूयावेक्ष्यप्रोक्षणीश्चपूर्ववदुपयमनान्कुशा नादाय समिधोभ्याधायपर्युक्ष्यजुहुयादेपएवविधि र्यत्रक्वचिद्धोमः ॥ १ ॥अर्थात् सर्वत्रहोमएपएवविधि र्ज्ञातव्यइति ॥

(मंत्रार्थ आकृष्णेनेति) सुवर्ण मय रथसे भुवनोंको देखताभया अर्थात् कर्मभूमिमें स्थित मनुष्योंके पापपुण्यको साक्षि होकर देखता हुआ । कृष्ण मलीन रात्रिसे वर्तमान प्रतिदिन स्तुत्य सूर्य भगवान् देवताओंको और मनुष्यों- को परस्पर व्यापारमें प्रेरता हुआ उदयको प्राप्त होता है ॥

(मंत्रार्थ इमंदेवाइति) इहाँ इम शब्दसे प्रकृत होनेसे. सोमका परामर्श है ॥ संपूर्ण देवलागण इस चंद्रमाको उत्प- न्न कर्ते भये ॥ कैसेको शत्रु रहित और सौम्य सर्व प्रियको

किस प्रयोनजके लिये उत्पन्न कर्ते भये क्षत्रके लिये अर्थात् लोकपालोंको राजभावके लिये और सर्वोत्तमताके लिये और अतिशय युक्तको इस प्रत्यक्ष दृश्यको (अमुं) नित्य ब्रह्मस्वरूप होनेसे परोक्ष दृश्यको । सूर्यके पुत्रको अर्थात् सूर्यकी किरणोंसे चंद्रमाकी वृद्धि होनेसे सूर्यपुत्र कहा जाता है ॥ अमुष्य दिशाके पुत्रको अर्थात् पूर्व दिशासे उत्पन्न उदय होनेसे पुत्रता है ॥ अत्रि महर्षिजीके चक्षुसे उत्पन्न तेजको दिशाने धारण किया यह पुराणोंके अभिप्रायसे युक्तार्थ है ॥ किसलिये यह दिशाने धारण किया (अस्यैविशे) प्रजाके अनुग्रह अर्थात् अमृत रसकी उत्पत्ति कांति आनंदके लिये और यह चंद्रमा हम ब्राह्मण जातिका राजा है॥

(मंगलमंत्रका विनियोग)

अग्निर्मूर्द्धा इस मंत्रका विरूपाङ्गिरस ऋषि अग्नि देवता गायत्री छंद अग्निके उपस्थानमें विनियुक्त है (मंत्रार्थ अग्निर्मूर्द्धेति) यह भौम अत्यंत तेजवाला होनेसे अग्निका मूर्द्ध (मस्तक) है वा अत्यंत रक्तवर्ण होनेसे और आकाशका (ककुत) चिन्ह है । और वृष्टि कर्नेमें मुख्यहेतु होनेसे जलका वह स्वामीहै(प्र० चलत्यंगारको वृष्टिरिति) अर्थ मंगलके राश्यंतर होनेसे वर्षा होतीहै और पृथिवीका रेत बीजरूप है अर्थात् अपनी शक्तिसे पृथिवी जातको प्रीणन कर्ताहै (प्रमा० वृ. जा. अ. २ कालात्मा दिनकृन्मनस्तुहिनगो सत्वंकुजोज्ञोगिरः) अर्थात बलका अधिष्ठाता मंगल है ॥

(बुधमंत्रका विनियोग)

बुधमंत्रका परमेष्ठि ऋषि अग्निदेवता त्रिष्टुप् छंद चितिके उपस्थानमें विनियुक्तहै॥ (मंत्रार्थ) हे अग्ने उद्बुध्यस्व अर्था-

त प्रकाशहो हे बुधदेव तुम हमारे कर क्रियमाण इस कर्ममें सावधानहो ॥ और बुध अग्नि तुम दोनों इष्टापूर्त नामं यज्ञमें यजमानके संसर्गको करें। यह ग्रहयज्ञमें ऋत्विक्की प्रार्थनाहै ॥ और सर्वोत्कृष्ट इस पूजास्थानमें यह यजमान और संपूर्ण देवता स्थितहो । सहोपदेनसधसाधयोश्चयो श्चेति इस सूत्रसे सहके स्थानमें सध आदेश भया।

(बृहस्पतिके मंत्रकाविनियोग)

बृहस्पतिजीके मंत्रका गृत्समद ऋषि ब्रह्मा देवता त्रिष्टुप् छंदः बार्हस्पत्य ग्रहणमें विनियुक्त है ॥

अर्थ-हे बृहस्पति देव ऋत अर्थात् सत्य नानष्टहोनेवाली प्रजा (संतान) द्रविण (धन) हमको देवो कैसा धन कि जिस धनसे ईश्वरकी पूजा करे और जो लोकमें प्रकाशहो और दीप्तियुक्त जिससे यज्ञादि कर्म कियेजाय और जिस्की बलसे रक्षा कीजाय ऐसा गौवस्त्रसुवर्णादिरूप धनको दीजिये ॥ यह प्रार्थनावाक्यहै ॥

शुक्रजीके मंत्रका प्रजापति ऋषि अश्वि सरस्वती इंद्र- देवता जगती छंद सौत्रामणिनाम यज्ञमें पयके ग्रहणमें विनियुक्त है ॥

अर्थ-प्रजापति (ब्रह्मा) हविरूप अन्नसे परिस्रुत रसको पान कर्ता भया। कैसेको क्षत्रको (वा सोमरसको ब्रह्मा पान कर्ता भया) किसद्वारा पानकर्ता भया (ब्रह्मण) पर्पंचरहित मंत्ररूप वेदसे इस अन्नके सोमरूप रसको जो अन्नसे उत्पन्न भया (विपान) ब्रह्माजीका विशिष्टपान वह शुक्रबीजना नाश होनेवाला(इंद्रिय)इंद्रियोंका सार देवराज इंद्रका वीर्य्य पय क्षीर अमरमें कारण (मधु) पितृगणकी तृप्तिमें मुख्य हेतु होता भया ॥ परिस्रुतं यह द्वितीयाके अर्थमें प्रथमाविभक्ती है ॥

अर्थ–शनैश्चरजीके मंत्रका दध्यङ्ङाथर्वण ऋषि गायत्री छन्द जलदेवता शांतिकरणमें विनियुक्त है ॥

अर्थ–याज्ञवल्क्यादि विहित आदित्य प्रभव अपोंसे अभेदोपचारसे अपशब्दसे शनिका ग्रहण है (आपो देवी) शनिश्चरदेव हमारेको कल्याण हो किस अर्थके लिये वृद्धिद्वारा तृप्ति हेतु पानके लिये और कल्याणके योग्य जल अभिमुखको प्राप्त हो ॥ अपशब्दको बहुवचनांत होनेसे बहुवचनांत विशेषण जानने ॥

अर्थ–राहुजीके मंत्रका अग्नि ऋषि दूर्वेष्टका देवता अनुष्टुप्छन्द दूर्वेष्टकाके उपधानसे विनियुक्त है ॥

अर्थ–हे दूर्वे प्रतिकांड पर्व प्रतिपरुप ग्रंथियुक्त सर्वतो भावसे उत्पन्न भई तुम हमारेको शतसहस्र संख्यका पुत्र-पौत्रादिसे विस्तृत करो।

अथ–केतुजीके मंत्रका मधुच्छंद ऋषि अग्निदेवता निरुक्ता गायत्री छंद केतुके अभिमंत्रणमें विनियुक्त है ॥

अर्थ–हे केतुदेव ध्वजरूपको तुम प्राप्तहो किनसे जन्यमान गृहस्थियोंसे क्या कर्ता भया मनुष्योंको केतुज्ञानको कर्ता हुवा और (पेश) सौंदर्य और सुवर्णको कर्ता भया ॥ निघंटुः–प्रमाण. पेशकारी पेशसो मात्रामापादयेदिति ॥ कैसे मनुष्योंको जो अज्ञानी और निर्धन कुरूप उन्को सुवर्ण रूप सौंदर्य देता भया ॥ कित ज्ञाने इस धातुका केतुरूप है ॥ अकेतवे अपेशसे यह बहुवचनमें एकवचन है ॥

अथ पारस्करगृह्यसूत्रे प्रथमकाण्डे विवाहसूत्रम् ॥

तद्यथा

आवसत्थ्याधानंदारकालेदायाद्यकालएकेपांवैश्यस्य बहुपशोर्गृहादग्निमाहृत्य चातुष्प्राश्यपचनवत्सर्वं मरणिप्रदानमेकेपंचमहायज्ञाइतिश्रुतेरग्न्याधेयदेवताभ्यः स्थालीपाकꣳश्रपयित्वाऽज्यभागाविष्ट्वाज्याहुतीर्जुहोति ॥ त्वन्नोऽअग्नेसत्वन्नोऽअग्नेऽइमंमेवरुण तत्त्वायामि येतेशतमयाश्चाग्नऽउदुत्तमं भवतन्न इत्यष्टौ पुरस्तादेवमुपरिष्टात्स्थालीपाकस्याग्न्याधेयदेवताभ्योहुत्वाजुहोतिस्विष्टकृतेचायास्यग्नेर्वषट्कृतंयत्कर्मणोत्यरीरिचं देवागातुविद इति वर्हिर्हुत्वा प्राश्नाति ॥ ततोब्राह्मणभोजनम् ॥ २ ॥ षडर्घ्याभवन्त्याचार्यऽऋत्विग्वैवाह्योराजाप्रियःस्नातकइति प्रति सम्वत्सरानर्हयेयुर्यक्ष्यमाणास्त्वृत्विज आसनमाहार्याह साधुभवानास्तामर्चयिष्यामोभवन्तमित्याहरंति विष्टरंपाद्यंपादार्थमुदकमर्घ्यमाचमनीयंमधुपर्कंदधिमधुघृतमपिहितंकाꣳस्ये काꣳस्येनान्यस्त्रिस्त्रिःप्राहविष्टरादीनि विष्टरं प्रतिगृह्णातिवर्ष्मोस्मिसमानानामुद्यतामिवसूर्यः।इमन्तमभितिष्ठामि योमाकश्चाभिदासतीत्येनमभ्युपविशति पादयोरन्यंविष्टर आसीनायसव्यं पादम्प्रक्षाल्यदक्षिणंप्रक्षाल्यति ब्राह्मश्चेद्दक्षिणं प्रथमं

विराजोदोहोसि विराजोदोहमशीय मयिपाद्यायैविरा-
जोदोहऽइत्यर्घंप्रतिगृह्णात्यायस्थयुष्माभिःसर्वान्कामा
न्नवाप्नुवानीतिनिनयन्नभिमंत्रयतेसमुद्रंवःप्रहिणोमिस्वां
योनिमभिगच्छत अरिष्टास्माकंवीरामापरासेचिमत्प
यऽइत्याचामत्यामागन्यशसासॅ सृजवर्चसातंमाकुरु
प्रियंप्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनामिति
मित्रस्यत्वेतिमधुपर्कं प्रतीक्षते देवस्यत्वेति प्र-
तिगृह्णाति सव्येपाणौकृत्वा दक्षिणस्यानामिकयात्रिः
प्रयौति नमःश्यावास्यायां नशनेयत्तऽआविद्धं
तत्तेनिष्कृन्तामीत्यनामिकाङ्गुष्टेन च त्रिर्निरुत्क्षप-
यति तस्यात्रिःप्राश्नाति यन्मधुनोमधव्येनपरमेणरूपे-
णान्नाद्येन परमोमधव्योन्नादोसानीतिमधुमतीभिर्वा
प्रत्यृचंपुत्रायान्तेवासिनेवोत्तरतऽआसीनायोच्छिष्टंद-
द्यात् सर्वम्वाप्राश्नीयात्प्राग्वासंचरे निनयेदाचम्यप्राणा
न्संमृशति वाङ्मऽआस्येनसोःप्राणोक्ष्णोश्चक्षुःकर्ण-
योःश्रोत्रंबाह्वोर्बलमूर्वोरोजोरिष्टानिमेंगानितनूस्तन्वा
मेसहेत्याचांतोदकायशासमादाय गौरिति त्रिःप्राहप्र-
त्याह मातारुद्राणांदुहितावसूनाॅस्वसादित्यानाममृ-
तस्यनाभिः ॥ प्रनुवोचंचिकितुषेजनायमागामना
गामदितिंवधिष्ट॥ममचामुष्यचपाप्माहन ॅहनोमीति
यद्यालभेत यद्युत्सिसृक्षेन्ममचामुष्यचपाप्माहतः॥ ओ
मुत्सृजततृणान्यत्त्विति ब्रूयान्नत्वेवामाॅसोर्घःस्याद

धियज्ञमधिविवाहं कुरुतेत्येवब्रूयाद्यद्यप्यसकृत्संवत्स
रस्यसोमेनयजेतकृताघ्यांऽएवैनंयाजयेयुर्नाकृताघ्या
इतिश्रुतेः ॥२॥ चत्वारःपाकयज्ञाहुतोऽहुतःप्रहुतःप्रा-
शितऽइतिपंचसुबहिःशालायां विवाहेचूडाकरणऽउपन
यने केशान्तेसीमन्तोन्नयनऽइत्युपलिप्तऽउद्धतावोक्षि-
तेग्निमुपसमाधायनिर्मथ्यमेकेविवाहऽउदगयनऽआपूर्य
माणपुण्याहे कुमार्याःपाणिंगृह्णीयात्त्रिषुत्रिपूत्तरादिषु-
स्वातौमृगशिरसिरोहिण्यांवातिस्रोब्राह्मणस्यवर्णानुपू-
र्व्येणद्वेराजन्यस्यैकावैश्यस्य सर्वेषांशूद्राणामप्येके
मंत्रवर्ज्यमथैनां वासःपरिधापयति जरांगच्छपरिधत्स्व
वासो भवाकृष्टीनामभिशस्तिपावा ॥ शतञ्चजीवशर-
दःसुवर्च्चारयिंचपुत्राननुसंव्ययस्वायुष्मतीदंपरिधत्स्व
वासऽइत्यथोत्तरीयं याऽअकृतन्नवयंयाऽअतन्वतयाश्च
देवीस्तंतूनभितोततंथ तास्त्वादेवीर्जरसे संव्ययस्वायु
ष्मतीदंपरिधत्स्ववासऽइत्यथैनौसमंजयति समञ्जन्तु
विश्वेदेवाःसमापोहृदयानिनौ ।सम्मातरिश्वासंधातासं-
मुदेष्ट्रीदधातुनावितिपित्राप्रत्तामादायगृहीत्वानिष्क्रा-
मति यदेषिमनसदूरंदिशोनुपवमानोवा ॥ हिरण्यव
र्णोवैकर्णः सत्वामन्मनसांकरोत्वित्यसावित्यथैनौस
मीक्षयत्यघोरचक्षुरपतिघ्न्येधिशिवापशुभ्यःसुमनाःसु-
वर्चाः ॥ वीरसूर्देवकामास्योनाशन्नोभवद्विपदेशञ्चतु
ष्पदे॥ सोमः प्रथमोविविदेगंधर्वोविविदऽउत्तरः। तृती-

योऽअग्निष्टेपतिस्तुरीयस्तेमनुष्यजाः ॥ सोमोददद्गंध-
र्वायगंधर्वोददद्ग्नये । रयिंचपुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो
इमाम् ॥ सानःपूषाशिवतमामेरय सानऽऊरूउशती
विहर यस्यामुशंतः प्रहरामशेपं यस्यामुकामा
बहवोनिविष्ट्या इति ॥ ४ ॥ प्रदक्षिणमाग्निंपर्य्या
णीयैकेपश्चादग्नेस्तेजनींकट्वा दक्षिणपादेनप्रवृत्योप-
विशत्यन्वारब्धआघारावाज्यभागौमहाव्याहृतयःस-
र्वप्रायश्चित्तं प्राजापत्यं स्विष्टकृच्चैतन्नित्यं सर्वत्र-
प्राङ्महाव्याहृतिभ्यःस्विष्टकृदन्यच्चेदाज्याद्धविःसर्व
प्रायश्चित्तं प्राजापत्यान्तरमतेदावापस्थानं विवा-
हे.राष्ट्रभृतइत्थं जयाभ्यातानांश्चजानन्येनकर्मणेच्छे
दितिवचनाच्चित्तंचाचित्तिश्चाकूतश्चाकूतिश्च विज्ञातंच
विज्ञातिश्च मनश्चशक्वरश्च दर्शश्चपौर्णमासं च बृहच्च
रथन्तरंचप्रजापतिर्जयानिंद्राय वृष्णेप्रायच्छदुग्रःपृत
नाजयेषु । तस्मैविशःसमनमंतः सर्वाः स उग्रः सइह
व्योहभूवस्वाहेत्यग्निर्भूतानामधिपतिः समावत्विंद्रोज्ये·
ष्ठानांयमः पृथिव्या वायुरन्तरिक्षस्य सूर्य्योदिवश्चंद्र
मानक्षत्राणां बृहस्पतिर्ब्रह्मणो मित्रःसत्यानां वरुणोपां
समुद्रः स्रोत्यानामन्नं साम्राज्यानामधिपतिस्तन्माव
तुसोमओषधीनां सविताप्रसवानां रुद्रःपशूनांत्व
ष्टारूपाणांविष्णुःपर्वतानांमरुतोगणानामधिपतयस्ते
मावन्तुपितरः पितामहाःपरेवरेततस्तततामहाः । न

मावन्त्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधा यामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या ँ स्वाहेति सर्वत्रानुष ज्त्यग्निरेतुप्रथमोदेवताना ँ सोस्यैप्रजांमुञ्चतुमृत्यु पाशात् ॥ तदय ँ राजावरुणोनुमन्यतांयथेय ँस्त्रीपौ. त्रमघन्नरादोत्स्वा०॥इमामग्निस्त्राथतांगार्हपत्यः प्रजाम स्यैनयतुदीर्घमायुः। अशून्योपस्थाजीवतामस्तुमाता पौत्रमानंदमभिविबुध्यतामिय ँ स्वाहा।स्वस्तिनोअग्ने दिवापृथिव्याविश्वानिधेह्ययथायदत्र यदस्यांमहिदिवि जातंप्रशस्तंतदस्मासुद्रविणंधेहिचित्र ँ स्वाहा ॥ सुग न्नुपन्थांप्रदिशन्नएहिज्योतिष्मद्धेह्यजरन्न आयुः। अपै तुमृत्युरमृतंमआगाद्वैस्वेतोनाअभयंकृणोतुस्वाहेतिप रंमृत्यवितिचैकेप्राशनान्ते ॥ ९ ॥ कुमार्याभ्राताश मीपलाशमिश्राँल्लाजानंजलिनाञ्जलावावपति तांजुहो तिस ँहतेन तिष्ठत्यर्यमणंदेवंकन्या अग्निमयक्षत सनो अर्यमा देवःप्रेतोमुञ्चतुमापतेस्वाहा ॥ इयन्नार्युपब्रूते लाजानावपंतिका। आयुष्मानस्तुमेपतिरेधन्तां ज्ञात योममस्वाहा ॥ इमाँल्लाजानावपाम्यग्नौसमृद्धिकरणं ममतुभ्यञ्चसंवननंतदग्निरनुमन्यतामिय ँस्वाहा ॥ इत्यथास्येदक्षिण ँहस्तंगृह्णातिसांगुष्ठंगृभ्णामितेसौभ गत्वायहस्तंमयापत्याजरदष्टिर्यथासः। भगोअर्यमास वितापुरंधिर्मह्यन्त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ अमोहम स्मिसात्व ँसात्वमस्यमोऽअहं। सामाहमस्मिऋक्त्वं

द्यौरहंपृथिवीत्वं । तावेहिविवहावहैसहरेतोदधावहै । प्रजांप्रजनयावहै पुत्रान्विंदावहैबहून् । तेसन्तुजरदष्टयः सप्रियौरोचिष्णूसुमनस्यमानौ । पश्येमशरदःशतंजीवमेशरदःशत॰शृणुयामशरदः शतमिति ॥ ६ ॥ अथैनामश्मानमारोहयत्युत्तरतोग्नेर्दक्षिणपादेनारोहेममश्मानमश्मेवत्व॰स्थिराभव । अभितिष्ठपृतन्यतोववाधस्वपृतनायतऽइत्यथगाथांगायति सरस्वतिप्रेदमवसुभगेवाजिनीवति । यांत्वाविश्वस्यभूतस्यप्रजायामस्याग्रतः । यस्यांभूत॰ समभवद्यस्यांविश्वमिदंजगत्।तामद्यगाथांगास्यामियास्त्रीणामुत्तमंयश इत्यथपरिक्रामतस्तुभ्यमग्नेपर्यवहत्सूर्य्यांवहतुनासह॥पुनःपतिभ्योजायांदाग्नेप्रजयासहेत्येवंद्विरपरं लाजादिचतुर्थं॰ शूर्पकुष्टया सर्वांल्लाजानावंपतिभगायस्वाहेतित्रिःपरिणीतांप्राजापत्य॰हुत्वा ॥७॥अथैनामुदीचीं॰सप्तपदानिप्रक्रामयत्येकमिषे द्वेऊर्जे त्रीणिरायस्पोषाय चत्वारिमायोभवाय पंचपशुभ्यः षडृतुभ्यः सखे सप्तपदीभवसामामनुव्रताभव विष्णुस्त्वानयत्वितिसर्वत्रानुषजति । निष्क्रमणप्रभृत्युदकुंभ॰ स्कंधे कृत्वा दक्षिणतोग्नेर्वाग्यतः स्थितोभवत्युत्तरत एकेषां त त एनांमूर्द्धन्यभिषिंचत्यापः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तास्तेकृण्वन्तुभेषजमित्यापोहिष्ठेतिचतिसृभिरथैना॰सूर्यमुदीक्षयति तच्चक्षुरित्यथा

स्यैदाक्षिणा ॰ समाधित्हृदयमालभतेममव्रतेतेहृदयंद
धामिममचित्तमनुचित्तंते अस्तु।ममवाचमेकमनाजु
पस्वप्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तुमह्यमित्यथैनामभिमंत्रयते
सुमङ्गलीरियंवधूरिमा ॰ समेतपश्यत । सौभाग्यम
स्यैदत्वायाथास्तंविपरेतनेतितांद्दढपुरुषउन्मथ्यप्रा
ग्वोदग्वानुगुप्तांगारआनडुहेरोहितेचर्मण्युपवेशयती
हगावोनिपीदंत्विहाश्वा इहपूरुषाः। इहोसहस्रदक्षिणो
यज्ञ इहपूषानिपीदंत्वितिग्रामवचनंचकुर्युर्विवाहश्म
शानयोर्ग्रामंप्रविशतादितिवचनात्तस्मात्तयोर्ग्रामप्रमा
णमितिश्रुतेराचार्यायवरंददातिगौर्ब्राह्मणस्यवरो ग्रामो
राजन्यस्याश्वोवैश्यस्याधिरथ ॰ शतंदुहितृमतेस्त
मितेध्रुवंदर्शयति ध्रुवमसिध्रुवंत्वापश्यामिध्रुवैधिपो.
ष्येमयिमह्यंत्वादाद्बृहस्पतिर्मयापत्याप्रजावती संजी
वशरदःशतामिति। सायदिनपश्येत् पश्यामीत्येवब्रू
यात्त्रिरात्रमक्षारालवणाशिनौस्यातामधः शयीया
ता ॰ संवत्सरन्नमिथुनमुपेयातां द्वादशरात्र ॰ षड्
रात्रत्रिरात्रमन्ततः ॥ ८॥ उपयमनप्रभृत्यो
पासनस्यपरिचरणमस्तमितानुदितंतयोर्दध्नातण्डुलैर
क्षतैर्वाग्नयेस्वाहा प्रजापतयेस्वाहेति साय ॰ सूर्या
यस्वाहाप्रजापतयेस्वाहेतिप्रातः पुमां ॰ सौमित्राव-
रुणौपुमा ॰ सावश्विनावुभौ । पुमानिन्द्रश्चसूर्यश्च
पुमा ॰ मंवर्ततांमयिपुनः स्वाहेति पूर्वामर्भकामा॥९॥

राज्ञोक्षभेदेनद्धविमोक्ष्ये यानविपर्यासेन्यस्यां वा व्यापत्तौ स्त्रियाश्चोद्वहने तमेवाग्निमुपसमाधाय आज्यꣳसंस्कृत्येहरतीरितिजुहोतिनानामंत्राभ्यामन्यद्यानमुपकल्प्य तत्रोपवेशयेद्राजानꣳ स्त्रियं वा प्रतिक्षत्रेऽइतियज्ञांतेनान्वाहार्यमिति चैतयाधुर्यौदक्षिणाप्रायश्चित्तिस्ततो ब्राह्मणभोजनम् ॥ १० ॥

अथ चातुर्थ्यकर्मणिपारस्करसूत्रम् ।

तद्यथा–

चतुर्थ्यामपररात्रेभ्यन्तरतोऽग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो ब्रह्माणमुपवेश्योत्तरतउदपात्रंप्रतिष्ठाप्यस्थालीपाकꣳ श्रपयित्वाज्यभागाविष्ट्वाज्याहुतीर्जुहोत्यग्नेप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकाम उपधावामि यास्यैपतिघ्नीतनूस्तामस्यैनाशय स्वाहा ॥ वायोप्रायश्चित्तेत्वंदेवानां ० यास्यै प्रजाघ्नीतनूस्तामस्यै नाशयस्वाहा॥सूर्यप्रायश्चित्तेत्वंदेवानां ० यास्यैपशुघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ चंद्रप्रायश्चित्ते ० यास्यैगृहघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा॥गंधर्वप्रा ० यास्यैयशोघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहेतिस्थालीपाकस्य जुहोति प्रजापतये स्वाहेतिहुत्वा हुत्वे तासामाहुतीनामुदपात्रे सꣳस्रवान्तसमवनीयततएनांमूर्द्धन्यभिषिंचतियातेपतिघ्नीप्रजाघ्नीपशुघ्नीगृहघ्नी

यशोग्नीर्निंदितातनूर्जारघ्नी ततएनांकरोमिसाजी येत्वंमयासहासावित्यथैनाᳬ स्थालीपाकं प्राशयति प्राणैस्तेप्राणान्त्संदधाम्यस्थिभिरस्थीनिमाᳬ सैर्माᳬसानि त्वचात्वचामिति तस्मादेवंविच्छ्रोत्रियस्य दारेणनोपहसमिच्छेदुतह्येवंवित्परोभवतिताभुदुह्यथर्तुप्रवेशनं यथा कामीवा काममाविजानितोᳬसंभवामेतिवचनादथास्यै दक्षिणाᳬसमधिहृदयमालभते यत्तेसुशीमे हृदयं दिविचंद्रमसि श्रियं। वेदाहंतन्मांतद्विद्यात्पश्येमशरदः शतं जीवेमशरदः शतᳬश्रृणुयामशरदःशतमित्येवमतऊर्ध्वम् ॥ ११ ॥ इतिश्री कर्पूरस्थलनिवासी गौतमगोत्र (शोरि) अन्वयालङ्कृतदैवज्ञदुनिचन्द्रात्मजपण्डितविष्णुदत्त वैदिकसंगृहीतं चतुर्थप्रकरणं समाप्तम् ॥ शुभमस्तु श्रीरामचंद्रप्रसादात् ॥

(समाप्तमिदं चतुर्थं प्रकरणम्)

अथ पंचमप्रकरणम् ।

ॐनमोगणपतये ।

अथविवाहपद्धतिर्लिख्यते । तत्रादौ युग्मकेन्मङ्गलाचरणम् ॥

संधिविग्रहमन्त्रेन्द्रो रुद्रदेवतनूद्भवः ।
भूमिपालशिरोरत्नरञ्जितांघ्रिसरोरुहः ॥ १ ॥

भा०टी०-ओंस्वस्ति श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ विवाहप द्धतिकी व्याख्या भाषामें कर्तेहैं ॥ प्रथम (मङ्गलाचरणं शिष्टाचारात्फलदर्शनात् श्रुतितश्चेति)श्रुत्यादि विहित मङ्गलाचरणको होनेसे विघ्नविनाशनके लिये लिखतेहैं ॥ गणेशं गुरुं पद्मनाभं महेशं कुमारं महेन्द्रं रमां शारदांच ॥ ग्रहां स्तुङ्गगान्वीर्ययुक्तांस्तथैव नमस्कृत्य सर्वान्सुटीकां करोमि ॥ १ ॥ याकृता रामदत्तेन निवाहुरामशर्म्मणा। ताम्विलोक्योपकाराय सर्वेषां क्रियते मया ॥ २ ॥ व्याख्यानृगिरया सैवधर्मकामार्थसिद्धिदा । प्रहृत्यरागद्वेषौ च द्रष्टव्यासुविचक्षणैः॥ ३॥ यदशुद्धमसम्बद्धमज्ञानाच्चकृतंमया। विद्वद्भिः क्षम्यतांसर्वं बालत्वादयमञ्जलिः ॥४॥ विवाहपद्धतेर्व्याख्याकृता यत्नाद्विलोक्यताम् ॥ उल्लसिष्यन्तिदुष्यन्ति सन्तोऽसन्तश्चभूतले ॥ ५ ॥

सन्धिविग्रहकृच्छ्रीमद्रुद्रेश्वरसहोदरः। महन्महत्तरः श्रीमान्विराजतिगणेश्वरः ॥ २ ॥ युग्मकम् ॥

भा० टी० (सन्धिविग्रह इति) सन्धि जो परस्पर मिलावट अर्थात् मेल विग्रह अर्थात् युद्ध इन्का जो मन्त्र सम्यक् विचार तिस्में इन्द्र ईश्वर अर्थात् तीक्ष्णबुद्धिद्वारा संधिविग्रहके यथार्थ ज्ञानमें समर्थ रुद्रदेव जो महादेव तिस्का पुत्र-प्रमाण जैसे अथर्व वे० (नमस्तेऽस्तु लम्बोदरायएकदन्ताय विघ्ननाशिने शिवसुताय वरदमूर्तये नमः)इति इहां यद्यपि तनूद्भवसे और सपुत्र लियाजाताहै तथापि रूढि (प्रसिद्धि) से क्षेत्रज पुत्रमें भी वर्तताहै सरसिज(कमल)वत् भाव यहहै कि सरोवरमें जो उत्पन्नहो वह पाटलि अर्थात् गुलाब जो पृथ्वीपर पैदा होताहै इस्कोभी कहतेहैं॥ सरसिज (कमल)

१ पद्धति । २ टीका इति शेषः ॥

अक्षरार्थसे कहा जाताहै तथापि प्रसिद्धिसे प्रमाण जैसे (स्थलारविन्दश्रियम्) फिर कैसेहैं भूमिपाल राजा लोक इन्के प्रति दिनराजकार्य तिन्में विघ्नका संदेह उस्के निवृत्त कर्नेके लिये प्रणाम कररहे राजाओंकेसे मुकुट रत्नोंसे विचित्रित हुएहैं चरणकमल जिनके ॥ १ ॥

(संधि इति) तारक दैत्यके वधमें संधिविग्रह कर्नेवाला श्रीमान् वीरेश्वर अर्थात् वीरपुरुषोंका स्वामी और युद्धमें लगानेवाला जो स्वामि कार्तिकजी इन्के भाई और महान् जो व्यास वसिष्ठादि उन्में जो बडे ब्रह्मादिक उन्का पूज्य और गणोंका स्वामी श्रीगणेशभगवान् विराजमान अर्थात् शोभताहै ॥ २ ॥ युग्मका लक्षण साहित्यदर्पणमें लिखाहै (द्वाभ्यां तु युग्मकं ज्ञेयं) अर्थ दो श्लोकोंसे एकार्थ कहनेसे युग्म होताहै ॥

श्रीमतारामदत्तेनमन्त्रिणातस्यसूनुना ।
पद्धतिःक्रियतेरम्याधर्म्या वाजसनेयिनाम् ॥ ३ ॥

भा०टी०—श्रीमान् शोभायुक्त संहिता पद क्रम जटा घन और वेदार्थमें चतुर श्रीगणेशनाम कर स्वपिताके पुत्र रामदत्तजी मैं शुक्लयजुर्वेद माध्यन्दिनी शाखा वाजसनेयी संहिता कात्यायन सूत्रवाले जो त्रैवर्णिक अर्थात् ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इनकी धर्मयुक्त मनोहरतासे शोभित विवाहकी पद्धति प्रगट कर्तेहैं इससे शूद्रका विवाह वेदोक्तमंत्रोंसे नहीं चाहिये प्रमाण याज्ञ० स्मृतिवाक्य–ब्रह्मक्षत्रियविट्शूद्रा वर्णास्त्वाद्यास्त्रयो द्विजाः । निषेकादिश्मशानांतास्तेषां वै मंत्रतःक्रियाः ॥ नतु शूद्रस्य ॥ स्त्रीशूद्रोऽनुपनीतश्च वेदमंत्रान्

तत्रक्रमः ॥ तावत्पूगीफलोपवीतदानं तत्रकन्याभ्राताप्रुरोधाअन्योब्राह्मणोवाकश्चित् ॥

भा०टी०-(तत्रक्रमः) तिसपद्धतिमें जो शास्त्रक्रम अर्थात् मंत्रपूर्वक ब्राह्मण सूत्रविहित मर्यादा वही मुख्यहै नहि अपने मुखसे रचित वा न्यून अधिक अन्यथा वेदविरुद्ध होनेसे प्रत्यवाय होताहै ॥ अथकन्यादानका फल लिखतेहैं ॥ भूमिदानं वृषोत्सर्गो दानं गजसुवर्णयोः । उभयतो वदनागौश्च तुलाया दानमुत्तमम् ॥ कन्यादानं जीवदानं शरणागतपालनम् । वेददानं महाराज महादानानि वै दश ॥ तत्रापि च महाबाहो कन्यादानमनुत्तमम् । कन्यादानात्परं दानं न भूतं न भविष्यति ॥ यह मार्तण्डमें लिखाहै ॥ अर्थ-भूमी १ वृषोत्सर्ग २ हस्ति३सुवर्ण ४ उभयतोमुखीगौ ५ तुला६कन्या ७ शरणागतकी रक्षा ८ जीवदान ९ वेददान १० यह महादानहैं तिसमेंभी कन्यादान अधिकहै ॥ अन्यच्च विधिवत्कन्यकादानमश्वमेधसमं कलौ । गोविंदराज ऐसे कहतेहैं अर्थ अन्य युगोंमें अश्वमेध और कलियुगमें कन्यादान यह दो सदृशहै॥अन्यच्च तिस्रः कोट्योर्धकोटी च तीर्थानां वायुरब्रवीत् । दिविभुव्यंतरिक्षेच कलौ ते सन्ति जान्हवी ॥ वेदतंत्रप्रणीतायायानि मन्त्राणि सर्वशः । वेदमातुर्जपे तेषां फलं प्रोक्तं कलौ युगे॥पद्मपुराणमें यह लिखाहै।अर्थ सुगमहै॥चिंतामणीनां गिरयःकल्पवृक्षाःसहस्रशः । व्रजाश्च कामधेनूनांतत्र गच्छेद्दुहितृदः॥कांचनानि च हर्म्याणि नद्यः पायसकर्दमाः॥ फलान्यमृतकल्पानितत्रगच्छेद्दुहितृदः ॥ यह मार्कण्डेयका वचनहै ॥ ऐसा महाफलका दाता कन्यादान तीनप्रकारका है ॥ प्रथमवाग्दान अर्थात् सगाई वा कुडमाई द्वितीय कन्यादान अर्थात् पाणिग्रहण वा विवाह तृतीय गृह्यादि पारि

बर्हदान प्रमाणभी जैसे वृद्धमनुजी "वरंसम्पूज्य खार्जूरं फलं दत्वामुखे तथा । तस्मिन्कालेऽग्निसान्निध्ये पितातुभ्यं प्रदास्यति॥ इति प्रतिज्ञयायच्च कन्याभ्रात्रादिनाचसा।वाचायद्दीयते तुल्ये वाग्दानं प्रथमं स्मृत ॥ वरं संपूज्य विधिना वेद्यामग्निं विधाय च। दात्रा प्रदीयते यच्च कन्या संकल्प्य वाग्यतः ॥ द्वितीयं कन्यकादानं तत्तु प्रोक्तं मनीषिभिः । वधूवरौ च खट्वायां मण्डपे संनिवेश्यच ॥ पारिबर्हं महद्दत्वा जलेन च विसर्जनम् । तृतीयंकन्यकादानं व्यासाद्या मुनयो जगुः" अर्थ सुगमहै ॥

(तच्चकन्याभ्रातेति) कन्याका भाई वा पुरोहित अथवा अन्य ब्राह्मण संगाई करै मनुजीभी लिखते॥ ऋत्विक् पुरोहितः पुत्रो भार्य्या भृत्यः सखा तथा । एतद्द्वारा कृतं यच्च तत्कृतं स्वयमेवहि ॥ अर्थ–इन द्वारा जो किया जाय वह आपही किया होताहै॥

उदङ्मुखः प्रत्यङ्मुखो वा उपविश्य प्राङ्मुखस्य वरस्य गन्धाक्षतैरर्चितस्य मुखदत्तखार्जूरादिफलस्य स्वयंपूगीफलयज्ञोपवीतमादाय ॥

भा०टी०–उत्तराभिमुख वा पश्चिमामुख स्थित होकर पूजन करै इसमें प्रमाण मनुजीका लिखतेहैं । पूज्यश्च प्राङ्मुखो यत्रोदङ्मुखः पूजको भवेत् । अर्चयेद्देवमभित इति प्रत्यङ्मुखश्चसः) यह वाक्य जो है कि(प्रत्यङ्मुखंस्थापयेत्तु देवं पूज्यं तथैवच । पूजकः सन्मुखस्तत्र इति धर्मानुशासनम्) कहते हैं कि यद्यपि पूज्य होनेसे वरको प्रत्यङ्मुख होना उचितहै तथापि (प्रत्यङ्मुखं स्थापयेत्तु देवं पूज्यं वरं विना ॥ वरस्तु प्राङ्मुखःपूज्यः पूजकः स्यादुदङ्मुखः) इस व्यासस्मृतिप्रमाणसे तथा (प्रत्यङ्मुखान्पूजनीयदेवा

स्तत्संमुखः स्थितः । अर्चयेन्नित्यमेवेत्थं विधिरित्येव सम्मतः ॥ स्थित्वाचाभिमुखंनार्चेच्छम्भुं जामातरं तथा। इंद्रं चोदङ्मुखं स्थाप्य स्वयं प्राङ्मुखसंस्थितः ॥ उदङ्मुखोर्चयेद्दाता वेदिस्थं प्राङ्मुखं वरम्)॥यह पराशरजीके वचनसे वर को प्राङ्मुख बैठाय गंधाक्षतसे पूजन कर मुखमेंखर्जूर (छुहारे) का फलदेवे (नारिकेलफलं चैव तदन्तर्भक्ष्यमुत्तमम्॥ खर्जूरादि फलं राजन् विवाहे मङ्गलप्रदम् ॥) इस भृगुजीके वचनसे विवाहादिक सब मंगलकार्यमें खर्जूरादि फल देना सिद्ध होताहै। (स्वयमिति) आप पुगीफल (सुपारी) यज्ञोपवीतको लेकर कन्याका भ्राता वा पुरोहितादिमान्य पुरुष जो आगे लिखेंगे वह कहकर वरण करे अर्थात् सगाई वा कुडमाईकरे वर कैसा चाहिये वह लिखतेहैं(ययोरेव समं वित्तं ययोरेवसमं कुलं।तयोर्विवाहो मैत्रीच न तु पुष्टविपुष्टयोः)॥ यह महाभारतमें लिखाहै अर्थ–जिनका धन कुल आचरणादि समहो उनका विवाह कर्ना चाहिये लक्षण वरके जैसे गोविंदराजजीने कहेहैं(सुशीलश्चारुबुद्धिश्च व्यवहारपटुःक्षमी॥ उदारो वाक्पटुर्वाग्मी गुणयुक्तो वरो मतः ॥ परस्परात्तसंबंधकुलजातो महाकविः । कान्तःसुलक्षणः श्रीमान् मातृपितृयुतोवरः)॥ इत्यादिलक्षणसम्पन्न वर चाहिये ॥

तस्मिन्कालेऽग्निसांनिध्येस्नातः स्नाते ह्यरोगिणि ॥ अव्यङ्गेऽपतितेक्लीवेपितातुभ्यं प्रदास्यतीतिपठित्वा हस्तेदद्यात् ।

भा॰टी॰–(तस्मिन्कालेति) तिस प्रसिद्धकाल विवाह समयमें अग्निके समीप साक्षिद्वारा वाताश्मरी कुष्ट मेहमहोदर भगन्दर इत्यादि रोगरहित–यथा 'वाताश्मरी कुष्ट मेहमहोदरभगंदराः ॥ अर्शश्च ग्रहणी चैव महारोगाः सुदुस्तराः'॥ इनके भेद चिकित्साशास्त्रमें लिखे हैं मूल विरुद्ध

होनेसे नहि लिखे जाते हैं इनसे रहित और व्यंग जो योनिज और जातिज दोप्रकारका उस्से रहित अर्थात् धृता (धरेल) त्रिवाहिता (दासी) यह तीन स्त्री निषिद्ध होती है इन्के लक्षण जो विधवा स्त्री प्रीतिपूर्वक सुंदर वाणी और पुष्कल भोजनद्वारा घरमें स्त्रीभावनासे रक्षितहो उस्को धृता (धरेल) कहते हैं ॥ और जो पूर्व विवाही हो अनन्तर मरजाने पतिके फिर. कन्याभावसे जो विवाहीजाय उस्को विवाहिता स्त्री कहते हैं॥ अर्थात् पुनर्भू॥ दासी उस्को कहते हैं कि प्रथम घरमें भृति (नौकरी) कर्तीहो फिर यौवन सुंदरतासे कामवश होकर जो स्वीकार की जावे॥ इन स्त्रियोंसे उत्पन्न संततिको अपने कुलमें जो मिलाना वह योनिव्यंग कहाताहै॥ और अपनि जातिका हीन जातिसे सम्बन्धको जातिव्यंग कहते हैं॥ इनसे रहित तुमको और चक्षु चरण कटि इन्का भंग और अंधता पंगु प्रभृतिया देहव्यंग उन्से रहित और अपतितको (ब्रह्महा मद्यपस्तेनस्तथैव गुरुतल्पगः। एते महापातकिनो यश्च तैः सह सम्वसेत्॥ ब्रह्महत्यादिके पापे जातिभ्रंशकरे तथा। वृषलीगमनेत्यर्थं सावित्रीविरहेपि च॥ अभक्ष्यभक्षणे चैव पतितो भवति ध्रुवम्॥)इत्यादि कालादर्शादि निरूपित पतनादिसे रहित और क्लीब अर्थात् नपुंसकतासे रहितको प्र०॥ भस्मनि होमकरणात्षंढे कन्याप्रदानतः। कुलधर्मपरित्यागान्नरके नियतं वसेत्॥ याज्ञवल्क्यजी वरके लक्षणमें भी लिखतेहैं॥(एतैरेव गुणैर्युक्तः सवर्णः श्रोत्रियो वरः। यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वे युवा धीमान् जनप्रियः) इति प्रथमाध्याये॥ अर्थ पूर्वोक्तगुणोंसे युक्त सवर्णी अर्थात् ब्राह्मणीसे ब्राह्मण क्षत्रियाणीसे क्षत्री इत्यादि वेदके जाननेवाला और यत्नसे पुंस्त्वमें परीक्षा कियाहो। युवा और सर्व

प्रियहो ॥ ❀ इत्यादि दोषसे रहित तुमारेको पिता कन्यादान देवेगा यह प्रतिज्ञाको उच्चस्वरसे कहकर वरके हाथ पूगीफल यज्ञोपवीत कन्याका भ्राता अथवा पुरोहित वा ब्राह्मणद्वारा देवे ॥इति वाग्दानविधिःसमाप्तः॥ शुभंभू० श्रीः ॥ श्रीः ॥ भावयह है कि कन्याका भाई आप वा पुरोहितसे अर्थात् जिसपर अपना दृढ विश्वासहो उस्के द्वारा सगाई करे ॥

और कन्यासे वर दुगुणा अथवा डेढा अर्थात् कन्या ८ वरसकी बालक १६ वरसका होना चाहिये ना मिलनेपर ऐसा तो कन्या ८.वर्षकी बालक १२ वर्षसे कम (न्यून) ना होना चाहिये ॥ अन्यथा जो लोभ मोहादिके वशसे बाधनी देख कर आठवर्षके बालकके गलेमें १६ वर्षकी कन्याको चमेडदेवे उस्कोभी प्रत्यक्ष फल मालूम होना चाहिये.कि बालक पुष्ट नहीं होता और शुष्कवदन बलरहित प्रजोत्पादनमें असमर्थ होताहै उस्की संतान उस्से निर्वल होती है इत्यादि बहुत दोषहैं जिन महाशयोंके देखनेकी इच्छा हो वह मैंने एक चिकित्साशास्त्रकी दिनरात्री ऋतुचर्यादि बहुत प्रकारको युक्त स्वस्थपुरुष नामकर ग्रंथ. घनायाहै उस्के देखले ॥ प्रार्थनेयं वैदिकाविष्णुदत्तस्य ॥

यजु० अध्याय १७ मंत्र ३

ॐ ऋतवस्थाऽऋतावृधा ऋतुष्यस्था ऋतावृधा। घृतश्च्युतोमधुश्च्युतोविराजो नामकामदुघाऽअक्षीयमाणाः ॥

इतिपठित्वाशिरस्यक्षतादिकंदद्याद्वरः । भ्रातृव्यतिरिक्तपक्षे पितेत्यत्रदातेत्युच्चारयेत् ॥

भा०टी-(ऋतवस्था इति) भोकन्याके देनेवाले तुम ऋत-नाम सत्यमें तिष्ठित होनेवालेहो अर्थात् सत्य प्रतिज्ञा युक्त रहें। (ऋजुष्ये सन्मार्गे तिष्ठन्तीति ऋजुष्यस्थाः) अर्थात् सन्मार्गमें स्थितहो (ऋता सत्या अवधयो मर्य्यादाः समया वा येषांते) अर्थात् मर्यादा पालक हो ॥ घृतश्च्युतः बहुत होनेसे जिस्के घरमें घृत गिरताहै ॥ मधुश्च्युतः मधूनि मधुराणि गुडशर्करानि श्च्यवयान्ति अर्थात् बहुत मधुर रसवाले तुम होवो विशेषेण राजन्ते इति विराजः सुशोभितहो कामदुघा कामनाके पूर्ण कर्नेवाले हो नाम प्रसिद्धहो अक्षीयमाणाः नहि नष्टभये धनादि जिनके,ऐसे आप होवे ॥ इस मंत्रसे वर आशीर्वाद देकर जो वाग्दान करे उसके शिरपर अक्षताको धरदे ॥

अथसर्वेभ्यो वेदाध्ययनश्रवणक्रियाव्यतिरिक्तक्रियानिवृत्तयेऽक्षतानिदत्वा सहस्तस्वरेणाभावे तारस्वरेण वेदोच्चारणं कुर्य्यात् ॥

भा०टी०-(अथ सर्वेभ्य इति) ग्रंथके आदिमें मंगल कर्ना चाहिये इस शिष्टाचारसे अथ शब्दका मंगल और निषेकादि संस्कारोंसे अनंतर यह दो अर्थहै ॥ प्रमाण (अथ मंगलानन्तरारम्भ प्रतिज्ञाधिकार समुच्चयेषु) विवाहके आरम्भमें हस्तस्वर सहित वेद उच्चारण करे प्र० याज्ञवल्क्यशिक्षामें ॥ हस्तस्वरेण योधीते स्वरवर्णार्थसंयुतमित्यादि बहुत लिखाहै ॥

अभावमें ऊंचेस्वरसे कंठस्वर वा हस्तस्वरसे यथाबुद्धि करना चाहिये।तारस्वरसे उच्चारण कर्नेभी प्र०याज्ञवल्कय' में यथा ॥ स्वरस्तु द्विविधः प्रोक्तो वेदोच्चारणकर्मणि । कण्ठस्वरोहस्तस्वरो गौणमुख्यप्रभेदतः ॥ तारस्वरेणतावेव भवे

तामिति निश्चयः।वेदस्योच्चारणं कुर्याद्यथाविधि च वेदवित् ॥ सर्वविघ्नविनाशाय सर्वारम्भेषु सिद्धये ॥ अर्थ-हस्तस्वर और कण्ठस्वर गौणमुख्यन्यायसे दो भेद है वह दोनों हि ऊंचे स्वरसे कहे जातेहैं विघ्नके नाश और सर्वसिद्धि लिये आदिमें वेदोच्चारण कर्ना चाहिये।अक्षत देकर अन्यकार्यसे निवृत्तहो वेदभगवान्का उच्चारण और श्रवण कर्ना सर्वपुरुषको चाहिये ॥

शुक्लयजुर्वेद० संहिता वाजसनेयी अध्याय २३ मं० १९ ॥

गणानान्त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणान्त्वाप्रियपतिꣳहवामहे ॥ निधीनान्त्वा निधिपतिꣳहवामहेवसोमम। आहमजानिगर्ब्भधमात्वमजासि गर्ब्भधम् ॥ १ ॥

भा०टी०- (गणानान्त्वेति) (हेममवसो) मेरेधन श्रीगणेशदेव (गणानांपतिं) गणोंके स्वामी(त्वां) तुमको(हवामहे)बुलावतेहैं (प्रियाणां) इंद्रादि देवताका जो (प्रियपतिं) तारकादिदैत्योंके वधसे प्रियकार्तिकयादि उनके विघ्नके नाश कर्नेमें समर्थ (त्वां) तुमको (हवामहे) बुलावतेहैं (निधीनांनिधिपतिं)निधी जो धनादि उनमें जो निधि अर्थात् अनंतफल देनेवाली योगासिद्धि उनकेस्वामी तुमको बुलातेहैं (हेगणपते अहं त्वया अजानि)हेगणेशदेव मुझको तुमने उत्पन्नकिया। कैसामैंहुं (गर्भधं)मातेकेगर्भसे पैदाहुआ (अज) हेअनादि (त्वं) तुम (गर्भधमाऽसि) गर्भसे नहीं-

भयेहो। भाव गर्भद्वारा परतंत्रतासे मैं जीव और आप गर्भादिरहित स्वतन्त्रतासे प्रकाशहुये ईश्वरहै इसलिये सर्वजगत बनानेमें समर्थ हो इति ॥

यजुः शु० अध्याय १६ मन्त्र २५ ॥

ॐनमोगणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवोनमो नमोव्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमो नमोगृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्श्चवो न मोनमोविरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्श्चवो नमः ॥

भा०टी०-(नमोगणेभ्यो) तुम गणनाम समूहोंको और गणोंके स्वामी याको नमस्कारहै (व्रातेभ्यो) व्रातनाम राशिभूत तुमको और (व्रातपतिभ्यो) राशिभूतोंके स्वामी तुमको प्रणामहै ॥ (नमोगृत्सेभ्यो) नमस्कारहै विघ्नके कर्नेवाले याको वा विषयमें लंपटाको वा बुद्धिवालो तुमको (गृत्सपतिभ्योनमः) और उन्के पालनेवाले तुमको प्रणामहै (नमो विरूपेभ्यो) प्रणामहै अनेकरूपवालो वा कुत्सित रूपवालो वा विशिष्ट रूपवालोंको (विश्वरूपेभ्यश्चवोनमः) संपूर्णरूपवालो तुमको प्रणामहै ॥ इति गणेशस्तुतिः ॥

शुक्ल० यजु० अध्याय० ३४ मन्त्र ४९ ॥

सहस्तोमाः सहच्छन्दसऽआवृतःसहप्र माऽऋषयः सप्तदैव्याःपूर्वेषाम्पन्थामनु

दृश्युधीराऽअन्वालेभिरे रथ्योनरश्मीन्॥

भा०टी०-(सहस्तोमा) (सप्तऋषयः) अर्थात् भरद्वाज १ कश्यप २ गौतम ३ अत्रि ४ विश्वामित्र ५ जमदग्नि ६ वसिष्ठ ७ यह सातऋषि (पूर्वेषां) प्राचीनोंके (पन्थानं) मार्गको (अनुदृश्य)देखकर (अन्वालेभिरे) सृष्टिको उत्पन्नकर्तेभये कैसे ऋषि (सहस्तोमाः) सृष्टिकर्नेकी इच्छावाले (सहच्छन्दसः) छन्द अर्थात् वेदसहित ज्ञानवान् (आवृतः) आशब्दसे कर्म उससे युक्त अथवा अपने जो कर्म श्रद्धा सत्यप्रधान उनसे युक्त अर्थात् तपरूप कर्मोंके अनुष्ठान कर्नेवाले (सहप्रमाः) यथार्थ ज्ञानयुक्त प्रमाण (यथार्थ ज्ञानंप्रमा) (दैव्याः) जो ब्रह्माकि प्रथम दैवीसृष्टिहै और ईश्वरतासे सृष्टिकर्नेमें समर्थ (धीराः) ज्ञानसृष्टियुक्त (कथं) कैसें (अन्वालेभिरे) सृष्टिकर्तेभये (रथ्योनरश्मीन्) रथ्य जो सारथि जैसे रश्मियोंसे ॥ भावहै किउत्तमसारथि वांछितदेशकी प्राप्ति लिये और घोडोंके बांधनेलिये रश्मिओंको बनाताहै। तैसे वह ऋषि कारणोंसे सृष्टि रचतेभये ॥ इति मङ्गलस्तुतिः॥

यजु० अध्याय ३४ मंत्र ५॥

यज्जाग्रंतोदूरमुदैति दैवंतदुसुप्तस्यतथैवैति । दूरङ्गमञ्ज्योतिषाञ्ज्योतिरेकन्तन्मेमनःशिवसंङ्कल्पमस्तु ॥

भा०टी०-(यज्जाग्रतः) जो जाग्रतअवस्थामें इन्द्रियोंसे (दूरमुदैति) दूरको जाताहै कैसाहै (दैवं)दैवस्वरूप (तदुसुप्त

स्यतथैवेति) स्वप्नावस्थामें भी सूक्ष्मेंद्रियोंसे स्वरचित विषयोंमें भ्रमताहै (दूरंगमं) दूरगामी (ज्योतिषांएकं) इंद्रियोंमें प्रधान ज्योति प्रकाश कर्नेवाला प्र०भगवत्गीताका.(इन्द्रियाणांमनश्चास्मि) (तन्मेमनः) ऐसा मुझका मन (शिवसंकल्पमस्तु) सत्वप्रधान वृत्तिवाला अथवा ब्रह्मलोकादिकोंमें वसनेवाला होवे ॥

यजु० अध्याय ३४ मंत्र ६ ॥

येनकर्म्माण्यपसो मनीषिणोयज्ञेकृण्वन्ति विदथेषुधीराः। यदपूर्व्वंयक्षमन्तः प्प्रजानान्तन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु ॥

भा०टी०-(येनकर्माणि) (येन) जिस मनकर्के (अपसो मनीषिणः) अप अर्थात् कर्ममें कुशल प्रमाण निघंटु । २ ।१ (अप इति कर्मनाम)(यज्ञेकर्म्माणि कृण्वन्ति) यज्ञमें कर्मोंको विस्तृत कर्तेहैं कैसेहैं (विदथेषुधीराः)यज्ञादिकोंमें जोपण्डित है वा यज्ञ साधन ज्ञानमें (यदपूर्व) जो अपूर्व अर्थात् नित्य वा अद्भुत (यक्ष्मं)पूजनेयोग्य (प्रजानामन्तः) देहोंके अन्तर वर्तनेवाला वह मन शिवसंकल्प युक्तहो ॥ ६ ॥

यजु० अध्याय० ३४ मन्त्र ७ ॥

यत्प्रज्ञानमुतचेतोधृतिश्चयज्ज्योतिरन्तरमृतम्प्रजासु । यस्म्मान्नऽऋतेकिञ्चन कर्म्मक्क्रियते तन्मेमनंःशिवसंङ्कल्पमस्तु ॥

भा०टी०-(यत्प्रज्ञानमिति) (यत्प्रज्ञानं) जो मन बुद्धिरूप (उत)समुच्चयसे (चेतः) चेतनतासे स्मरणात्मक ज्ञान(धृतिश्च) धैर्यरूप(ज्योतिरन्तः)इंद्रियोंके प्रकाश कर्नेवाला (प्र० सुखंदुःखंधृतिरधृतिःसंशयंविपर्ययकामःसर्वमनएवेति श्रुतिः प्रजासु अमृतं) विनाशि शरीरोंमें जो अमृत अर्थात् नित्य (यस्मान्न ऋतेकिंचनकर्म क्रियते) जिसके विना कोईकाम नहि कियाजाता वह मेरा मन शिवसंकल्पवाला होवे ॥

शुक्लयजुर्वेद अ० ३४ मन्त्र ८ ॥

येनेदम्भूतं भुवनम्भविष्यत्परिगृहीत ममृतेनसर्वम् । येनयज्ञस्तायते सप्त होतातन्मेमनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

भा०टी०-(येनेदमिति) (येनेदम्भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतं)जिसने वर्तमान भूतभविष्यत् तीनकालमें संपूर्ण भुवनकोश जानाहै कैसेने (अमृतेन) नित्यने (येनसप्तहोता यज्ञस्तायते) जिस मनने सप्तहै होता जिस्में ऐसा अग्निष्टोम नाम यज्ञ विस्तृतकरीदा वह मेरा मन शिव संकल्पवाला होवे ॥

यजु अध्याय ३४ मंत्र ९ ॥

यस्मिन्नृचः सामयजूं षियस्मिन्प्रतिष्ठितारथनाभाविवाराः । यस्मिंश्चित्तं सर्वमोतम्प्रजानान्तन्मेमनः शिवसङ्कल्पमस्तु ॥

भा०टी०-(यस्मिन्नृचः) (सामयजू ऽषि) अर्थात् जिस्में ऋक् यजु सामवेद (प्रतिष्ठिताः)आश्रितहै (रथनाभौआरा इव) रथके चक्रकी नाभिये आरकीन्याई (यस्मिन्) सर्वं प्रजानां चित्तं ओतं) जिसमे संपूर्णप्रजाका चित्त सम्बद्ध है ऐसा मेरा मन शिवसंकल्प युक्तहोवे ॥

यजुर्वेद०शु० अध्याय० ३४ मंत्र० १० ॥

सुषारथिरश्वानिवयन्मनुष्यान्नेनीयते भीशुभिर्वाजिनऽइव । हृत्प्रतिष्ठन्यदजि रञ्जविष्ठन्तन्मेमनः शिवसङ्कल्पमस्तु॥१०॥

भा०टी०-(यन्मनुष्यान्नेनीयते) जो मन मनुष्यलोकसे लेकर सर्वदेव दानव ऋषि इत्यादि स्थूल सूक्ष्म जीवोंको श्रेष्ठ और निषिद्ध कर्ममें लगाताहै किसकी तरह (सुषारथिर्भीशुभिर्वाजिनः अश्वानिव) श्रेष्ठसारथि रश्मिसे वेगवाले अश्वोंको मार्गसे निवृत्त और जैसे प्रवृत्त करे (यत्हृत्प्रतिष्ठं) जो मन हृदय गतहै (अजिरं) नित्यहै (यविष्ठं) अतिशय वेगवाला वह मेरा मन शिवसंकल्प युक्त होवें१०॥ इति शिवसंकल्पव्याख्या सम्पूर्णा ॥ शुभम् ॥

अथ स्वस्तिवाचनम् ।

यजु० अध्याय २५ कं० १८ ॥

स्वस्तिनऽइन्द्रोवृद्धश्रवाः स्वस्तिनः

पूषाविश्ववेदाः ॥ स्वस्तिनस्ताक्ष्योऽरिष्टनेमिःस्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु ॥ १ ॥

भा०टी०-बडीकीर्तिवाला इन्द्र हमारे अविनाशि शुभको देवे और सर्वधनोंका स्वामी पूषा हमको स्वस्तिदेवें नहीं नष्टभई चक्रधारा वा पक्ष जिस्के ऐसा रथ वा गरुड हमको स्वस्तिको दे और देवताओंका गुरु बृहस्पतिजी हमको स्वस्ति अर्थात् कल्याणको देवे ॥

यजु० अध्याय ३६ । कंडि० २६ ॥

पयः पृथिव्याम्पयऽओषधीषुपयोदिव्यन्तरिक्षेपयोधाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तुमह्यम् ॥ २ ॥

भा०टी०-वे अग्निदेव तुम पृथिवीमें पय नाम रसको धारण करो और ओषधी अन्नादिमेंभी रसको दे (ओषध्यः फलपाकान्ता) इति इसमकार स्वर्गमें और अंतरिक्ष आकाशमें रसको स्थितकर परंतु मेरेलिये दिशा और विदिशा पयस्वती नाम रसयुक्त हो मैं यह प्रार्थना कर्ताहुं ॥

यजु० अध्याय ५ कंडि० २१ ॥

विष्णोरराटमसि विष्णोःश्नप्त्रेस्थो विष्णोःस्यूरसिविष्णोर्ध्रुवोसि । वैष्णवमसिविष्णवेत्वा ॥ ३ ॥

भा०टी०-हे दर्भरूप विष्णु तुम हविर्धान मण्डपके ललाटस्थानहो हेरराटचन्त तुम विष्णुनाम हविर्धान मण्डपके (श्नप्त्रेस्त्थः) ओष्ठकी सन्धिरूपहो हेलस्यूजानि अर्थात् वृहत्सूची तुम विष्णुनाम हविर्धान मण्डपकी सूचीहो हे रज्जुग्रन्थि तुम हविर्धानकी ध्रुवनाम ग्रंथिहो हेहविर्धान तुम विष्णुसंबंधिहो इसलिये अर्थात् विष्णुसंबंधि होनेसे आपकी स्तुतिकर्ताहुवा स्पर्श कर्ताहुं ॥ ६ ॥

यजुं० अध्याय १४ कंडिका २० ॥

अग्निर्देवतावातोदेवतासूर्य्यो देवताच
न्द्रमादेवतावसवोदेवतारुद्रादेवतादित्या
देवतामरुतोदेवताविश्वेदेवादेवतावृहस्प
तिर्देवतेन्द्रोदेवतावरुणोदेवता ॥ ४ ॥

भा०टी०-हे हविर्धान और जो तुम अग्नि वायु सूर्य चंद्रमा वसु ८ रुद्र ११ आदित्य १२ मरुत ४९ विश्वेदेवा १३ बृहस्पति इन्द्र वरुण इत्यादि देवतास्वरूपहो इसलिये आपकी स्तुति वा स्पर्श कर्ता हुं ॥

यजु० अध्याय ३६ कंडिका १७ ॥

द्यौःशान्तिरन्तरिक्षᳬशान्तिः पृथिवीशा
न्तिरापःशान्तिरोषधयःशान्तिः वनस्प
तयःशान्तिर्विश्वेदेवाःशान्तिर्ब्रह्मशा

न्तिःसर्वंᳫशान्तिःशान्तिरेवशान्तिःसामा
शान्तिरेधि ॥ ५ ॥

भा०टी०-स्वर्गरूप जो शांति और आकाशरूप जो शांति पृथिवीरूप जो शांति जलरूप जो शांति औषधीरूप जो शांति वृक्षरूप तथा सर्वदेवरूप और शांतिस्वरूप जो शांति वह मेरेको हे गणेशदेव आपकी प्रसन्नतासे होवे ॥

यजुर्वेद अध्याय ३० । अनु० १ मं० ३ ॥

विश्वानिदेवसवितर्दुरितानिपरासुव ॥
यद्भद्रन्तन्नऽआसुव ॥ ६ ॥

भा०टी०-हे अंतर्यामी सूर्यदेव तुम मेरे संपूर्ण पापको दूर लेजाओ अर्थात् नष्ट करो और जो कल्याण है वह मुझको देवो ॥ सूर्यभगवान्को अन्तर्यामी होनेमें प्रमाण (आदित्यचन्द्रावनिलोऽनलश्च द्यौर्भूमिरापो हृदयं यमश्च । अहश्चरात्रिश्च उभेचसन्ध्ये धर्मोपि जानाति नरस्य वृत्तम्) इति नीतौ (सूर्य आत्माजगतस्तस्थुषश्च इतिश्रुतिः) ॥

यजुर्वेद अध्याय १६ अनु० ७ मं० ४८ ॥

इमारुद्रायतवसे कपर्दिनेक्षयद्वीरायप्रभं
रामहेमतीः ॥ यथाशमसद्द्विपदेचतुष्पप
देविश्वम्पुष्टङ्ग्रामेऽअस्मिन्ननातुरम्॥७॥

भा०टी०-(तवसे) बलवान्(कपर्दिने) जटिल (क्षयद्वीरा) शूरवीरोंकु क्षयशूरवीरोंके नाश करनेवाले और(द्विपदे)दुर्मों

केदेनेवाले(चतुष्पदे)च पायनाम पशुओंके देनेवाले जो महादेव उनसे जैसे इस ग्राममें सुख और संपूर्ण लोक सुखी नीरोग होवे तैसे मतिको समर्पण कर्तेहैं अर्थात् प्रार्थना कर्ते हैं ॥ ७ ॥

यजु० अध्याय २ मंत्र १२ ॥

एतन्तेंदेवसवितर्य्यज्ञम्प्राहुर्व्बृहस्पतये ब्रह्मणे ॥ तेनयज्ञमवतेनयज्ञपतिन्तेनुमामव ॥ ८ ॥

भा०टी०–हे सर्वान्तर्यामी सूर्यदेव यह किया हुआ यज्ञ तुमारे लिये यजमान लोक कहते हैं किंच तुमारेसे प्रेरित देवोंके यज्ञमें जो ब्रह्मा बृहस्पति उस्के लियेभी कहतेहैं और अपना जान यज्ञरक्षा करो और ब्रह्मारूप जो मैं मुझकी भी रक्षा करो ॥ ८ ॥

सुप्रतिष्ठितावरदाभवन्तुदेवाः ॥ १० ॥ इतिस्वस्तिवाचनम् ॥

भा०टी०– सत्कारकिये हुए देवता लोकभी वरके दाता होवें ॥ १० ॥ इतिश्री०

ॐकारपूर्वहियोगोपासनंयानिनित्यानिकर्माणिइत्यादिश्रुतिसे ॐपूर्वकसर्वमंत्रोंकाउच्चारणकर्नाचाहिये ॥

इति श्रीकर्पूरस्थल निवासी दैवज्ञ दुनिचंद्रात्मज(शोरी) पं०विष्णुदत्तकृतटीकायां पंचमप्रकरणं समाप्तिमगात् ॥

(इति पंचमप्रकरणम्)

अथ विवाहविधौ षष्ठं प्रकरणम् ।

ओंस्वस्ति श्रीगणेशाय नमः ॥ अथविवाहः॥ तत्रकन्याहस्तेनषोडशहस्तपरिमितंमण्डपंविधायतद्दक्षिणस्यांदिशिपश्चिमांदिशमाश्रित्यमण्डपसंलग्नमुत्तराभिमुखंकौतुकागारंचमण्डपाद्बहिरैशान्यांजामातृचतुर्हस्तपरिमितांसिकतादिपरिष्कृतांवेदीञ्चकारयेत् ॥

भा०टी०–स्वस्तिवाचनके अनन्तर विवाहविधि लिखते हैं कि कन्याहस्तपरिमाणके सदृश १६ हाथका मण्डप बनाकर उसकी दक्षिणकोणमें पश्चिमदिशाको लै अर्थात् निर्ऋतिकोणमें उत्तराभिमुख जाना आनेके लिये और कुलरीति करनेके लिये कौतुकागार बनावे और मण्डपके बाहर साथ मिलता ईशानकोणमें जामातृ(जुवाई) के चारहस्त परिमिता तुष (तुह) केश (रोम) शर्करादि निषिद्ध वस्तुओंसे राहित अर्थात् शुद्ध अग्निस्थापनके लिये चारथंभोंवाली वेदीको बनवावे ॥ और विवाहमें तिलकनाम मण्डल रचना (विवाहादौ लिखेन्नित्यं तिलकंनाममण्डलं) इस कात्यायनजीके प्रमाणसे–तिलकमण्डलका लक्षण लिखतेहैं ॥ (सूर्यादयो ग्रहा यत्र राजन्ते मध्यसंस्थिताः । इन्द्रादयः प्रतिदिशं स्वस्थभावेन्यवस्थिताः । बहिःस्थितसुराच्यं स सर्वतोभद्रमुच्यते ॥ विघ्नराजो भवेद्यत्र मध्येनान्यस्तुकश्चन । सुमहत्सुन्दरश्चैव तिलकं नाम मण्डलम् । गृहारामप्रतिष्ठायां दुर्गाहोमे नवग्रहे । सर्वतोभद्रकं कुर्यान्मण्डपे तिलकं लिखेत् ॥ ३ ॥)इत्यादि वेदी बनानेकेभी बहुत प्रमाणहैं परंतु विस्तारके भयसे लिखे नहिं जाते ॥

विवाहदिनेकृतनित्यक्रियेणजामातृपित्रामातृपूजापूर्वकंआभ्युदयिकश्राद्धंकर्तव्यम् ॥कन्यापितास्नातःशुचिःशुक्लांबरधरःकृतनित्यक्रियोमातृपूजाभ्युदयिकेकृत्वाअर्हणवेलायांमण्डपेप्रत्यङ्मुखःप्राङ्मुखंवरमूर्द्धजानुंतिष्ठंतंसंबोध्य ॥ ततःस्वस्तिवाचनंगणेशकलशादिपूजनंचकृत्वा ॥

भा०टी०–विवाहके दिन वरके पिताने नित्यक्रियासंध्योपासन पंचमहायज्ञादि मातृपूजा पूर्वक आभ्युदयिक (नांदीश्राद्ध) कर्ना चाहिये ॥ कन्याका पिताभी स्नानकर पवित्रहो नित्यक्रिया कर धोतवस्त्र धार षोडशमातृपूजा नांदीमुखश्राद्धकर पूजनकालमें मण्डपमें पश्चिमाभिमुखहो ऊर्द्धजानु प्राङ्मुख बैठे वरको संबोधन कर स्वास्तिवाचन कलशपूजन गणेशादि पूजन करे॥विवाहमें अवश्य नांदीमुख श्राद्धके कर्नेमें प्रमाण (.कन्यापुत्रविवाहेतु प्रवेशेनववेश्मनि ॥ चूडाकर्मणिबालानां नामकर्मादिके तथा ॥ सीमन्तोन्नयनेचैव पुत्रादिमुखदर्शने) इत्यादि बहुत प्रमाणहै (सर्ववृद्धौहि पितरःपूजनीयाःप्रयत्नतः) इति शातातपः। इसकी प्रक्रियाश्राद्धविवेकमें लिखीहै ॥ याज्ञवल्क्यजी सूक्ष्मतासे लिखतेहैं ॥ एवंप्रदक्षिणावृत्कोवृद्धौ नान्दीमुखान्पितृन्। यजेत दधिकर्कन्धुमिश्रान्पिण्डान्यवैःक्रियेति ॥ प्रथमाध्याये श्राद्धप्रकरणे।

[1]साधुभवानास्तामितिप्रजापतिर्ऋषिर्ब्रह्मादेवतायजुश्छंदोवरार्चनेविनियोगः। ॐसाधुभवानास्ताम

१ अर्हणवेलायांसमयज्योतिषशास्त्रोक्तजानना।

चयिष्यामोभवंतमितिस्यात् । ॐअर्चयेतिवरेणो
क्ते वरोपवेशनार्थंशुद्धमासनंदत्वाविष्टरमादाय ॐवि
ष्टरो विष्टरो विष्टरइत्यनेनोक्तेॐविष्टरःप्रतिगृह्यतामि
तिदातावदेत् । ॐविष्टरंप्रतिगृह्णामीत्यभिधायवरो
विष्टरंगृहीत्वा ॥

भा०टी०–साधुभवान् इस मंत्रका प्रजापति ऋषि ब्रह्मा देवता यजुछंद वरके पूजनमें विनियोग है विनियोग विना मंत्रोच्चारणमें दोष लिखतेहैं (विनियोगंविनामंत्रः पङ्के गौरिवसीदति) इसलिये मंत्रोच्चारणके प्रथम विनियोग करना चाहिये इसका लक्षण जैसे (ऋषिछंदोदेवतानां कर्मणि विनियोजनं । विनियोगः स आदिष्टो मंत्रेमंत्रे प्रयुज्यते) (मंत्रार्थ)आप साधु–श्रेष्ठवृत्तिवाले होमें हम तुमारेको पूजन कर्तेहैं ॥ पूजनीय पट् ६ पुरुष होतेहैं जैसे पारस्करजी लिखतेहैं (षडर्घ्या भवन्त्याचार्य ऋषित्वग्वैवाह्यो राजा प्रियः स्नातकइति प्रतिसंवत्सरानर्हयेयुर्यक्ष्यमाणास्त्वृत्विजइति) याज्ञवल्क्यस्मृतिमें जैसे (प्रतिसंवत्सरंत्वर्घ्या स्नातकाऽचार्य्यपार्थिवाः ॥ प्रियोविवाह्यश्चतथा यज्ञंप्रत्यृत्विजःपुनः) अर्थात् स्नातक १ गुरु २ राजा ३ मित्र ४ वर ५ ऋत्विक् ६ यह पूज्य होतेहैं ॥ पूजनकरें ऐसे वर कहनेके अनंतर बैठने लिये वरको शुद्धआसन देकर विष्टरको हाथमेंले विष्टरो विष्टरो विष्टरः । ऐसे कहकर विष्टर ग्रहण कीजिये दातावरको यह कहे । विष्टरग्रहण कर्ताहुं ऐसे वरकह विष्टर हाथमें ले आगेका मंत्र पढे ॥ ॥ विष्टरका लक्षणलिखेहैं(पंचाशन्नामभेद्ब्रह्मा तदर्धेनतुविष्टरः । ऊर्द्धकेशोभवेद्ब्रह्मालम्बकेशस्तु विष्टरः ॥ दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः ॥ विष्टरं सर्वयज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम् ॥)

विवाहदिनेकृतनित्यक्रियेणजामातृपित्रामातृपूजापूर्वकंआभ्युदयिकंश्राद्धंकर्तव्यम् ॥कन्यापितास्नातःशुचिःशुक्लांबरधरःकृतनित्यक्रियोमातृपूजाभ्युदयिकेकृत्वाअर्हणवेलायांमण्डपेप्रत्यङ्मुखःप्राङ्मुखंवरमूर्द्धजानुंतिष्ठंतंसंबोध्य ॥ ततःस्वस्तिवाचनंगणेशकलशादिपूजनंचकृत्वा ॥

भा०टी०–विवाहके दिन वरके पिताने नित्यक्रियासंध्योपासन पंचमहायज्ञादि मातृपूजा पूर्वक आभ्युदयिक (नांदीश्राद्ध) कर्ना चाहिये ॥ कन्याका पिताभी स्नानकर पवित्रहो नित्यक्रिया कर धौतवस्त्र धार षोडशमातृपूजा नांदीमुखश्राद्धकर पूजनकालमें मण्डपमें पश्चिमाभिमुखहो ऊर्द्धजानु प्राङ्मुख बैठे वरको संबोधन कर स्वस्तिवाचन कलशपूजन गणेशादि पूजन करे॥विवाहमें अवश्य नांदीमुख श्राद्धके कर्नेमें प्रमाण (कन्यापुत्रविवाहेतु प्रवेशेनववेश्मनि ॥ चूडाकर्मणिबालानां नामकर्मादिके तथा ॥ सीमन्तोन्नयनेचैव पुत्रादिमुखदर्शने) इत्यादि बहुत प्रमाणहै (सर्ववृद्धौहि पितरःपूजनीयाःप्रयत्नतः) इति शातातपः। इसकी प्रक्रियाश्राद्धविवेकमें लिखीहै ॥ याज्ञवल्क्यजी सूक्ष्मतासे लिखतेहैं ॥ एवंप्रदक्षिणावृत्कोवृद्धौ नान्दीमुखान्पितॄन्। यजेत दधिकर्कन्धुमिश्रान्पिण्डान्यवैःक्रियेति ॥ प्रथमाध्याये श्राद्धप्रकरणे।

साधुभवानास्तामितिप्रजापतिर्ऋषिर्ब्रह्मादेवतायजुश्छंदोवरार्चनेविनियोगः। ॐसाधुभवानास्ताम

१ अर्हणवेलावासमयज्योतिषशास्त्रोक्तजानिये।

र्चयिष्यामोभवंतमितिस्यात् । ॐअर्चयेतिवरेणो
क्ते वरोपवेशनार्थंशुद्धमासनंदत्वाविष्टरमादाय ॐवि
ष्टरो विष्टरो विष्टरइत्यनेनोक्तेॐविष्टरःप्रतिगृह्यताभि
तिदातावदेत् । ॐविष्टरंप्रतिगृह्णामीत्यभिधायवरो
विष्टरंगृहीत्वा ॥

भा०टी०-साधुभवान् इस मंत्रका प्रजापति ऋषि ब्रह्मा देवता यजुछंद वरके पूजनमें विनियोग है विनियोग विना मंत्रोच्चारणमें दोष लिखतेहैं (विनियोगंविनामंत्रः पङ्के गौरिवसीदति) इसलिये मंत्रोच्चारणके प्रथम विनियोग कर्ना चाहिये इसका लक्षण जैसे (ऋषिछंदोदेवतानां कर्मणि विनियोजनं । विनियोगः स आदिष्टो मंत्रेमंत्रे प्रयुज्यते) (मंत्रार्थ)आप साधु-श्रेष्ठवृत्तिवाले होमे हम तुमारेको पूजन कर्तेहैं ॥ पूजनीय षट् ६ पुरुष होतेहैं जैसे पारस्करजी लिखतेहैं (षडर्घ्या भवन्त्याचार्य ऋत्विग्वैवाह्यो राजा प्रियः स्नातकइति प्रतिसंवत्सरानर्हयेयुर्यक्ष्यमाणास्त्वृत्विजइति) याज्ञवल्क्यस्मृतिमें जैसे (प्रतिसंवत्सरंत्वर्घ्याः स्नातकाऽचार्य्यपार्थिवाः ॥ प्रियोविवाह्यश्चतथा यज्ञंप्रत्यृत्विजःपुनः) अर्थात् स्नातक १ गुरु २ राजा ३ मित्र ४ वर ५ ऋत्विक् ६ यह पूज्य होतेहैं ॥ पूजनकरें ऐसे वर कहनेके अनंतर बैठने लिये वरको शुद्धआसन देकर विष्टरको हाथमेंलै विष्टरो विष्टरो विष्टरः । ऐसे कहकर विष्टर ग्रहण कीजिये दाताबरको यह कहे । विष्टरग्रहण कर्ताहुं ऐसे वरकह विष्टर हाथमें ले आगेका मंत्र पढे ॥ ॥ विष्टरका लक्षणलिखेहैं(पंचाशताभवेद्ब्रह्मा तदर्धेनतुविष्टरः । ऊर्द्धकेशोभवेद्ब्रह्मालम्बकेशस्तु विष्टरः ॥ दक्षिणावर्तको ब्रह्मा वामावर्तस्तु विष्टरः ॥ विष्टरं सर्वयज्ञेषु लक्षणं परिकीर्तितम् ॥)

वर्ष्मोऽस्मीत्याथर्वणऋषिर्विष्टरोदेवताऽनुष्टुप्छन्दःउ
पवेशनेविनियोगः ॥ ॐवर्ष्मोऽस्मिसमानानामुद्यता
मिवसूर्यः । इमंतमभितिष्ठामियोमाकश्चाभिदासति
इत्यनेनआसनेउत्तराग्रविष्टरोपरिवरउपशति ॥

भा०टी०-(वर्ष्मोऽस्मि) इसमंत्रका अथर्वणऋषि अनुष्टु-
प्छन्द विष्टर देवता वरके बैठनेमें विनियोग है ॥ (मंत्रार्थ)
जैसे नक्षत्रतारागणमें मध्यसे सूर्य भगवान् श्रेष्ठहै तद्वत्
अपनि जातिसे हम श्रेष्ठहै जो मेरा तिरस्कार कर्नेको यत्न
कर्ता है उस्को और इस विष्टरको पादमें रखकर स्थित हैं
इस मंत्रसे उत्तराभिमुख विष्टरपर बैठजावे ॥

ओंपाद्यंपाद्यंपाद्यमित्यनेनोक्तेपाद्यंप्रतिगृह्यतामिति
दातावदेत् ।पाद्यंप्रतिगृह्णामीत्यभिधायवरः । ओंवि
राजोदोहोसिविराजोदोहमशीयमयिपाद्यायैविराजो
दोहः ॥ इतिदक्षिणंचरणंप्रक्षाल्यानेनैवक्रमेणवामच
रणप्रक्षालनम् ॥

भा०टी०-पाद्यं पाद्यं पाद्यं ऐसे अन्यपुरुषके कहने अनं-
तर पाद्यग्रहण कीजिये यह दाता कहे पश्चात् पाद्यको ग्रह-
ण कर्ताहुं यह वर कहे ॥ विराजो दोहोसि इस मंत्रका
प्रजापति ऋषि अनुष्टूप्छन्द जलदेवता पादको प्रक्षालनमें
विनियोग है (मंत्रार्थ) हे जल तुम विशिष्टदीप्ति परमा-
त्माका दोहनाम रस साररूप हो इस लिये हे जल ! आप-
को ग्रहण कर्तेहैं किंच हे विराजोदोह अर्थात् मंत्रसंस्कृत
जल मेरे चरणके प्रक्षालन योग्यहो॥मंत्रपाठ सहित दक्षिण
पाद धोवे।अनंतर वामपाद धोवे । यहां मंत्रके अंतमें विधान

नहिं ॥ और ब्राह्मण वरका प्रथम दक्षिणपाद प्रक्षालन कर्ना (धोना)और क्षत्री वैश्योंका प्रथम वामचरण प्रक्षालन कर्ना चाहिये, प्रमाण०गृह्यसूत्रे (सव्यंपादं प्रक्षाल्य दक्षिणं प्रक्षालयति ब्राह्मणश्चेद्दक्षिणं प्रथमं) और भी (ब्राह्मणो दक्षिणं पादं पूर्वं प्रक्षालयेत्सदा । क्षत्रादिः प्रथमं वाममितिधर्मानुशासनम्) यह पद्मपुराणमें लिखाहै ॥

ततःपूर्ववद्विष्टरान्तरंगृहीत्वाचरणयोरधस्तादुत्तराग्रंवरःकुर्यात्। ततो दूर्वाक्षतफलपुष्पचंदनयुतार्घपात्रंगृहीत्वायजमानः ॥ ॐअर्घइत्यादिविष्णुर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दोविष्णुर्देवताअर्घदानेविनियोगः । ॐअर्घोऽर्घोऽर्घइत्युक्तेऽन्येनार्घःप्रतिगृह्यतामिति दातावदेत्। ॐअर्घप्रतिगृह्णामीत्यभिधाय । वरोयजमानहस्तादर्घंगृहीत्वा । आपःस्थइत्यादिमंत्रस्यसिन्धुद्वीपऋषिरापोदेवताअनुष्टुप्छन्दोर्घाक्षतादिधारणेविनियोगः ॥ ॐआपःस्थयुष्माभिःसर्वान्कामानवाप्नुवानीतिशि रसिकिञ्चिदक्षतादिकंधृत्वा ॥

भा०टी०–पूर्वोक्तवत् और विष्टरको उत्तराग्र चरणोंके नीचे रखकर इसके अनंतर दूर्वा (नवीनतृण) अक्षत तण्डुल चंदन,पुष्पयुक्त। यजमान अर्घपात्रको लेकर ॥ ॐअर्घ इस मंत्रका विष्णुऋषि त्रिष्टुप्छंद विष्णुदेवता अर्घके दानमें विनियोगहै ॥ यथार्थज्ञान होनेसे उत्तम दान होताहै इसलिये विष्टर पाद्य अर्घ्य आचमनीय आदिका तीन तीनवार उच्चारण कर्ना चाहिये प्रमाणभी गृह्यसूत्रमें-जैसे लिखाहै (अन्यस्त्रिस्त्रिः प्राह विष्टरादीनि) अर्घ ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ है

यजमानवाक्यके अनंतर अर्घको वर स्वीकार कर यजमानके हाथसे लेकर॥ आपःस्थइस मंत्रका सिंधुद्वीपऋषि आपोदेवता अनुष्टुपछंद अर्घ अक्षतधारणमें विनियोगहै॥(मंत्रार्थ) हे जलदेवता जिस हेतुसे तुम अमृत दुग्ध दधि मधु फल पुष्प पत्र यव अन्नादि सर्ववस्तुमें व्याप्तहै इस लिये तुमारे आश्रयहो हम संपूर्ण कामनाको प्राप्तहोंमे इस मंत्रसे किंचित् शिरमें अक्षत धारण करे॥

समुद्रंवइत्यादिमंत्रस्याथर्वणऋषिबृहतीछन्दोवरुणा देवताऽर्घजलप्रवाहेविनियोगः । ॐसमुद्रंवः प्रहिणोमिस्वांयोनिमभिगच्छत । अरिष्टास्माकंवीरामापरासेचिमत्पयः ॥ ४ ॥ इत्यर्घपात्रस्थजलमैशान्यांत्यजन्पठेत् । ततआचमनीयमादाययजमानआचमनीयमाचमनीयमाचमनीयमित्यन्येनोक्तेआचमनीयंप्रतिगृह्यतामितिदातावदेत् ॥ आचमनीयंप्रतिगृह्णामीत्यभिधायवरोयजमानहस्तादाचमनीयं गृहीत्वा ॥

भा०टी०–समुद्रंव इस मंत्रका अथर्वण ऋषि बृहती छंद वरुण देवता अर्घजलके गेरनेमें विनियुक्तहै (मंत्रार्थ) हे जलदेवता सिद्ध किया अर्थ जिन्होंने ऐसे तुमको समुद्रमें प्राप्त करताहूं॥ अर्थात् कारणताको प्राप्तकर्ताहैं इसलिये मेरे करप्रेरित तुम (स्वांयोनिं) अर्थात् समुद्रको प्राप्त होमे किञ्च तुमारे प्रसन्नतासे हमारे भाई शूरवीर और हमारे पुत्र (अरिष्टा) अर्थात् आरोग्य रहे और मेरी पूजाके योग्य जल मत नष्टहो अर्थात् सदा रहे और मैंभी पूजाको प्राप्त होमा ॥ इस मंत्रको ईशानदिक्में

त्यागन कर्ता जलको पढे इसके अनंतर आचमनीयको यजमान लेकर ॥ आचमनीय इस मंत्रका आपस्तम्ब ऋषि उष्णिक्छन्द जलदेवता आचमनीयके देनेमें विनियोगहै ॥ यह आचमनीयहै ३ ऐसे अन्य पुरुषके वचनसे आचमनीय ग्रहण करो यह दाता वरको कहे । पश्चात् वर आचमनीय ग्रहण कर्ताहुं यह कहकर यजमानहाथसे आचमनी लेकर ॥

आमागन्निति परमेष्ठीऋपिर्बृहतीछन्दआपोदेवताअ. पामुपस्पर्शनेविनियोगः ॥ ॐआमागन्यशसासꣳ सृजवर्च्चसातम्माकुरुप्रियंप्रजानामधिपतिंपशूनाम रिष्टंतनूनां ॥ इत्यनेनसकृदाचामेत्द्विस्तूष्णींआचा मेत् । ततोयजमानःकांस्यपात्रस्थदधिमधुघृतानि समादायान्येन कांस्यपात्रेण पिधाय कराभ्यामादा य।मधुपर्केति मधुच्छन्द ऋपिर्बृहतीछन्दो मधुभुक् देवता मधुपर्कदाने विनियोगः ॥ ॐमधुपर्को मधुप र्को मधुपर्क इत्यनेनोक्ते ॐमधुपर्कःप्रतिगृह्यतामि तिवदेत् ॐमधुपर्कं प्रतिगृह्णामीत्यभिधायैववरः । ॐमित्रस्येति प्रजापतिर्ऋपिःपंक्तिच्छन्दो मित्रोदेव ता मधुपर्कदर्शने विनियोगः । ॐमित्रस्यत्वा चक्षु पाप्रतीक्ष्य इतिदातृकरस्थमेव मधुपर्कं निरीक्ष्य दे वस्यत्वेति ब्रह्माऋपिर्गायत्रीछन्दः सविता देवता म धुपर्कग्रहणे विनियोगः ॥

यजुर्वे० अ० ६ मं १

ॐ देवस्यत्वासवितुःप्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्याम्पूष्णोहस्ताभ्यांप्रतिगृण्हामि । इत्यभिधायवरोमधुपर्कंगृहीत्वावामहस्तेकृत्वा॥

भा०टी०-आमागन् इस मंत्रका परमेष्ठी ऋषि-बृहती छंद जलदेवता जलके स्पर्शन कर्नेमें विनियोगहै॥ (मंत्रार्थ) हे वरुणदेव तुमारे आश्रित मुझको आप यशस्वि अर्थात् यशसंयुक्त करो किश्च ब्रह्मतेजसे युक्त करो अर्थात् क्षत्री वैश्यकोभी स्वतेजसे युक्त करो॥ और महात्मा पुरुषोंकी मित्रतासे तथा पशुओंका मालिक और सुखी करो इस मंत्रसे वर एक आचमन करे फिर दो चुपचाप (तूष्णींसे) आचमन करे अनंतर यजमान कांस्यपात्रमें दधि मधु घृतको पाकर ऊपरसे अन्य कांस्यपात्रसे बंद कर हाथमें लेवे मधुपर्क इसमंत्रका मधुच्छन्दऋषि, बृहती छंद मधुभुग्देवता, मधुपर्कके देनेमें विनियोगहै॥ मधुपर्कके बनानेमें पराशरजी लिखतेहैं। कि (सर्पिरेकगुणंप्रोक्तं शोधितंद्विगुणंमधु । मधुपर्कविधौप्रोक्तं सर्पिषा च समं दधि) अर्थात् घृत एक गुणा शहत दो गुण दधि एक गुण होना चाहिये। मधुपर्कग्रहण करे, अनंतर ग्रहण कर्ता हूं यह वर यजमानसे कहे। मित्रस्य इसमंत्रका प्रजापति ऋषि, पङ्क्तिछंद मित्रदेवता मधुपर्कदर्शनमें विनियुक्तहै (मंत्रार्थ) हेमधुपर्क तुमारेको मित्रदेवके नेत्रोंसे देखता हुं॥ इस मंत्रसे दाताके हाथमेंही स्थित मधुपर्कको देखे॥ देवस्यत्वा इसमंत्रका प्रजापतिऋषि गायत्रीछन्द सूर्यदेवता मधुपर्कके ग्रहण कर्नेमें विनि-

युक्तहै ॥ (मंत्रार्थ) हेमधुपर्क सवितानामदेवता की, आज्ञासे हम तुमारेको, अश्विनीकुमारकी बाहु तथा पूष्णः, अर्थात सूर्यदेवके हाथोंसे ग्रहण कर्तेहैं ॥ आशय यहहै कि सूर्यदेवकी कृपासे, अश्विनीकुमारने दियाहै बली जिनको ऐसे बाहुओंसे तद्वत् सूर्यके हाथोंसे ग्रहण कर्ताहै ॥ इसमंत्रको पढकर वर मधुपर्क ग्रहण कर बामहाथमें रखकर ॥

ॐनमःश्यावेतिप्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दःसविता देवतामधुपर्कालोडनेविनियोगः ॥ ॐनमःश्यावास्यायान्नशनेयत्तआविद्धंतत्तेनिष्क्रन्तामीतिअनामिकयात्रिःप्रदक्षिणमालोड्य अनामिकाङ्गुष्ठाभ्यांभूमौ किञ्चिन्निक्षिप्यपुनस्तथैवद्भिःप्रत्येकंनिक्षिपेत् । तत आचारान्मधुपर्ककिञ्चित्कन्यायैद्रष्टुंदद्यात् ॥ ॐ यन्मधुनइत्यस्यकौत्सऋषिर्जगतीछन्दःमधुपर्कोदेवतामधुपर्कप्राशनेविनियोगः ॐयन्मधुनोमधव्यंपरमꣳरूपमन्नाद्यं ॥ तेनाऽहंमधुनोमधव्येनपरमेणरूपेणान्नाद्येनपरमोमधव्योन्नादोसानि २ इत्यनेनवारत्रयंमधुपर्कप्राशनंप्रतिप्राशनान्तेचैतन्मंत्रपाठः ॥ ततोमधुपर्कशेषमसंचरेदेशेधारयेत् ॥

भा॰टी॰–नमःश्यावेति इस मंत्रका प्रजापति ऋषि गायत्रीछंद सवितादेवता मधुपर्कके आलोडनमें विनियोगहै ॥ (मंत्रार्थ) हेजठराग्ने कापिश अर्थात् धूम्रवर्णहै जिसका, और अन्नके पचानेवाले तुमको प्रणाम कर्ते हैं और जो मैंने भो-

जनकालमें निषिद्ध पदार्थ भक्षण किया वह निकालताहूं ॥ इसमंत्रको पढ़ अनामिकासे तीनवार प्रदक्षिणा क्रमसे आलोडन कर और अनामिका अंगुष्ठसे पृथिवीपर किंचित् २ तीनवार मधुपर्क गेरे अनन्तर लोकाचारसे मधुपर्क किंचित् कन्याके लिये देखनेको भेजे । यन्मधुन इसमंत्रका कौत्सऋषि जगती छंद मधुपर्कदेवता प्राशनकर्नेमें विनियुक्तहै (मंत्रार्थ) हे देवगणो ! जो मकरंदका परम उत्कृष्टरूप (अन्नाद्यं) अर्थात् अन्नादिवत् प्राणधारक तिसपर उत्कृष्ट अर्थात् शरीरमें व्याप्त सर्वरूपको प्राप्त हुए रसकर्के मैं सबसे श्रेष्ठमधुपर्कके योग्य अन्तके भोगनेवाला होमा ॥ इसमंत्रको पढ तीनवार मधुपर्क प्राशनकर मंत्रपाठके अनंतर प्राशन कर्ना ॥ शेष रहा मधुपर्क शुद्धभूमि जिसपर पाद ना आवे वहां गेरदेवे ॥ इस स्थान सूत्रकारके बहुत मतहै कि-शेष मधुपर्क जो पूर्वस्त्रीका पुत्रहो उसको देना वा पूर्वदिशा असंचर स्थानमें गेरदेना वा संपूर्ण आप पीना अथवा शेष अपने विद्यार्थीको देना यथासूत्रं (मधुमतीभिर्वा प्रत्यृचं पुत्रायान्तेवासिन उच्छिष्टं दद्यात्सर्वं वाप्राश्नीयात्प्राग्वासंचरेनिनयेदिति) ॥

ततस्त्रिराचामेद्वरः वाङ्मआस्येअस्तु॥नसोर्मेप्राणोऽस्तुअक्ष्णोर्मेचक्षुरस्तुकर्णयोर्मेश्रोत्रमस्तुबाह्वोर्मेबलमस्तुऊर्वोर्मेओजोऽस्तुअरिष्टानिमेऽङ्गानितनूस्तन्वामेसन्तु ॥ इतिप्रत्येकंसर्वगात्राणिसंस्पृशेत् ॥

भा०टी०-सजलहाथसे अंगन्यासकरे (-मंत्रार्थ) वाक् (वाणी) देवता मेरे मुखमें हो और नासिकामें प्राण हो नेत्रोंमें चक्षुरिंद्रिय हो कर्णोमें श्रोत्रेंद्रिय हो बाहुमें बलहो और

रुवोंमें ओजहो तथा मेरे संपूर्ण अंग अरिष्ट अर्थात् आरोग्य हो. इस मंत्रसे एक २ अंगके क्रमसे स्पर्श कर्ना ॥ अब जैसे अंगुलीसे चाहिये वह क्रमलिखते हैं ॥ कराग्र अंगुली तीन १ तर्जनि अंगुष्ठ २ मध्यमा अंगुष्ठ ३ अनामिकांगुष्ठ ४ अंगुष्ठकनिष्ठिका ५ सर्वांगुलि निमीलन ६ यह क्रमपूर्वक रीतिहै ॥

ततोयजमानद्वारागौर्गौर्गौरितिपाठः ॥ अत्र वरयजमानाभ्यांतृणच्छेदनमाचारोनतुविधिः ॥ अतएवप द्धतिषु ॥ ततोवरस्तृणंयजमानेनसहगृहीत्वाऽग्रिममंत्रंपठेत् ॥ मातारुद्राणामितिमंत्रस्यत्रह्माऋपिस्त्रिष्टुप्छन्दः शौरिर्देवताऽभिमन्त्रणेविनियोगः ॥ ॐमातारुद्राणांदुहितावसूनाꣳस्वसादित्यानाममृतस्यनाभिः ॥ प्रनु वोचंचिकितुपेजनायमागामनागामदितिंवधिष्टममचाऽमुष्यचपाप्माहतः ॥ ॐउत्सृजततृणान्यत्तूद्धृत्योत्सृजेतइतिब्रूयात् ॥ उत्सृजेत्तुतामितितृणंछिन्द्यादित्युत्सृजेतत्यजेत ॥

भा०टी०-तदनंतर यजमानद्वारा गौर्गौर्गौः यह तीनवार कहाना इहां वर यजमानका तृणछेदन आचार है नहि विधि इसलिये पद्धतिओंमें वर यजमानके साथ अग्रिम मंत्र पढे॥ मातारुद्राणां इस मंत्रका ब्रह्मा ऋषि त्रिष्टुप्छंद सौरि देवता अभिमंत्रणमें विनियोगहै (मंत्रार्थ) श्रीमहारुद्रजी नन्दिकेश्वररूप कर ऋषियोंसे भयभीत हुए गौके गर्भद्वारा प्रगट भये इसलिये रुद्रोंकी माताहै॥ देवताओंको समुद्रमं-

थनसे श्रांतहुओंको देखकर विष्णुने समुद्रमंथनद्वारा उत्पन्नकी । इसलिये विष्णु और विष्णुके अंश होनेसे वसुवोंकि पुत्रीहै ॥ इसलिये वैष्णवी सुरभी माता यह कहते हैं और नारायणके पुत्र होनेसे आदित्यनाम देवोंकी भगिनी है ॥ (नारायणाद्द्वादशादित्या इतिश्रुतेः) अमृत दुग्धकी नाभिअर्थात् उत्पत्तिस्थानहै॥ और मेरे कर अवध्यगौहै परंतु मेरे और यजमानके पापही नष्टहो । हिंसा करनेमें प्रायश्चित्त लिखाहै । (ब्राह्मणं गां तथा कन्यां हन्यादज्ञानतोपि यः । निरये भुज्यते तावद्यावदिन्द्राश्चतुर्दश) इसलिये त्याग देनी चाहिये ॥ औं मनमें कह कर (उत्सृजततृणान्यत्तु) यह ऊंचे स्वरसे कहे शंका कर्ते हैं कि गवालम्भभी गौणपक्ष है तो कैसी व्यवस्था चाहिये।इसपर उत्तर कि गवालम्भनको अस्वर्ग्य और लोकविरुद्ध होनेसे और यह वार्ता नाममात्र कहनेसेभी प्रायश्चित्ति होनेसे निषेधहै॥प्रमाण. (याज्ञवल्क्य स्मृति । अ. १ अस्वर्ग्यं लोकविद्विष्टं धर्ममप्याचरेन्नतु) अर्थ जो अंतमें दुःखदायक और लोकविरुद्ध धर्मको भी ना करे और यह महापातकहै जैसे मनुजी लिखतेहैं(नपरं पानकं घोरं कलौगोहत्ययासमं)नाममात्रसे प्रायश्चित्त पाराशरजी कहतेहैं (कलौ वाङ्मात्रगोमेधो निरये प्राप्नुयान्नरं । पितृभिःसहधर्मात्मा नैवकुर्यादतश्चतम्) और कलियुगमें यह वर्जितहै (गोमेधोनरमेधश्च विवाहे गोर्वधस्तथा। परक्षेत्रेसुतोत्पत्तिः कलावेतानि वर्जयेत् ॥) इस लिये गौको त्यागदो यह तृणको भक्षण करे और हमारेको पुष्टि हो ॥

ततोवेदिकायांतुपकेशशर्कराभस्मादिरहितांचतुरस्र भूमिंकुशैःपरिसमूह्यतानैशान्यांपरित्यज्यगोमयोद

केनोपलिप्यस्फ्येनस्रुवेणवाप्रागग्रप्रादेशमितमुत्त रोत्तरंक्रमेणत्रिरुल्लिख्योल्लेखनक्रमेणानामिकांगुष्ठा भ्यांमृदमुद्धृत्यजलेनाभ्युक्ष्यतत्रतूष्णींकांस्यपात्र स्थंविहितंवह्निंप्राङ्मुखःप्रत्यङ्मुखमुपसमाधाय तद्रक्षार्थंकञ्चिन्नियुज्यकौतुकागाराद्वरःकन्यामानी यमण्डपउपवेश्यअथैनांवासःपरिधापयति ॥

भा०टी०-गोरुत्सर्गानन्तर कुशकण्डिका लिखतेहैं-तुष केश शर्करा (रेत) भस्मादि निषिद्धं वस्तुसे रहित चारों कोणसे हस्तपरिमाण वेदी बना उसको सवत्सा गौके गोबरसे लेपन कर खड्ग वा स्रुवेसे पूर्वाभिमुख प्रादेशमात्र दक्षिणसे उत्तरकी तरफ तीनवार लिख और रेखा क्रमसे तीनवार अनामिकाअंगुष्ठसे मृत्तिका निकाल शुद्ध जलसे अभ्युक्षण कर अनंतर कांस्यपात्रमें अग्नि रखकर ऊपरसे बंदकर तूष्णीं हो प्रत्यङ्मुख बैठ प्राङ्मुख अग्निस्थापन कर उसके रक्षाके लिये समिधा रखे। और कौतुकागारसे वर कन्याको लेकर मण्डपमें बैठाल कन्याको वस्त्र पहनावे आगेके मंत्रसे।

ॐजरांगच्छेतिमंत्रस्यप्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दस्तं तवोदेवतावस्त्रपरिधानेविनियोगः॥ॐजरांगच्छपरि धत्स्ववासोभवाकृष्टीनामभिशस्तिपावा । शतंच जीवशरदःसुवर्च्चारयिञ्चपुत्राननुसंव्ययस्वायुष्मती दंपरिधत्स्ववासः ॥ इतिमंत्रेणपरिधानवस्त्रंपरिधाप येत् वरः ॥ अथोत्तरीयंवासःसमादायवरोऽग्रिममं त्रेणपरिधापयेत् । याऽअकृन्तन्नवयन्याअतन्वत

याश्चदेवीइत्यादिमंत्रस्यप्रजापतिर्ऋषिर्जगतीछंदोवि धात्र्योदेवतावस्त्रधारणेविनियोगः ॥ॐयाअकृन्तन्नव यन्याअतन्वतयाश्चदेव्यस्तन्तूनभितस्ततंथ । ता स्त्वादेवीर्जरसेसंव्ययस्वायुष्मतीदंपरिधत्स्ववासः ॥ इतिमंत्रेणअहतवासोधौतंवासोत्रेणाच्छादयेतितिश्रु त्यनुसारेणवरोप्येताहशंवाससीअत्रपरिधत्तेपरिधा स्यैइत्यादिमंत्राभ्याम् ॥

भा०टी०-(जरांगच्छ) इस मंत्रका प्रजापतिऋषि त्रिष्टुप् छन्द तन्तुदेवता वस्त्रके पहनानेमें विनियुक्तहै। (मंत्रार्थ) हे आयुष्मती अर्थात्संपूर्णायुयुक्त तुम हमारे साथ निर्दोष जरा अर्थात् बुढापनको प्राप्तहो ॥ और मेरे मनको अच्छी प्रतीत होनेवाली हो और क्रूरता कपटताको त्याग श्वशुरादि संबंधियोंसे संकुचित होकर सौम्यस्वभाववाली हो ॥ वा स्त्रियोंके मध्यसे तुम श्रेष्ठ हो और शतवर्ष अर्थात् पूर्णायु पर्यन्त मेरे साथ प्राणधारण करो यह पूर्वोक्तसे जानना चाहिये ॥ और पतिव्रता हो धर्मसे बडे तेजवाली होकर धन और पुत्रको प्राप्त हो ॥ यह मेरे करके दिया हुआ वस्त्र धारण कर ॥ इहां परिधत्स्वपद प्रथम, आशंसामें दूसरा प्रेरणामें होनेसे पुनरुक्ति दोष नहि ॥ इस मंत्रसे वर कन्याको अधोवस्त्र पहनावे ॥१॥ याअकृन्तन् इस मंत्रका प्रजापति ऋषि जगती छंद विधात्रीदेवता वस्त्रके धारणमें विनियुक्तहै (मंत्रार्थ) जो देवि इस वस्त्रको कातती भई और जो वयति अर्थात बिनती भई और जो २ देवी सूतको तनुती भई तुरी वेमादिसे उस २ सामर्थ्यके देनेवाली देवीलोग निर्दोष दीर्घकाल जीवनके लिये तुमारेको वस्त्र

पहनाती है ॥ इस हेतसे हे आयुष्मति इस वस्त्रको उत्तरीय होनेसे धारण करो ॥ इस मंत्रसे नवीन वस्त्र आप धोता हुआ धारण करावे। न कि रजकादिसे धौत होवे इस श्रुति अनुसार वरभी अधोवस्त्र उत्तरीयवस्त्रको धारण करे परिधास्यै इत्यादिमंत्रोंसे ॥

परिधास्यै इत्यादिमंत्रस्याथर्वणऋषिस्त्रिष्टुपछन्दः तन्तवोदेवता वासःपरिधानेविनियोगः—। ॐपरिधास्यैयशोधास्यैदीर्घायुत्त्वायजरदष्टिरस्मिः। शतञ्जीवामिशरदः पुरूचीरायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये। इति पठित्वावरःपरिधत्ते (अथोत्तरीयमाच्छादयतीति सूत्रम्)ॐयशसेत्यादिमंत्रस्यप्रजापतिर्ऋषिर्जगतीछन्दोविधात्र्योदेवतावासोधारणेविनियोगः॥ ॐयशसामाद्यावापृथिवीयशसेन्द्रावृहस्पती।यशोभगश्चमाविदद्यशोमाप्रतिपद्यतामितिपठित्वोत्तरीयंपरिधत्ते॥ ततःकन्यायावरस्यचद्विराचमनम्।

भा०टी०-(परिधास्यै) इस मंत्रका अथर्वणऋषि त्रिष्टुप्छन्द तन्तु देवता। वस्त्रके धारणमे विनियोग है (मंत्रार्थ) हे वस्त्रदेवता तुमारेको अनेक श्रेष्ठवस्त्र धारणके लिये तथा यशकीर्तिके लिये और निर्दिष्ट चिरकाल जीवनके लिये। तुमारी कृपासे पूर्णायुके भोगनेवाला मैं बहुपुत्र धनादि युक्त धनके देनेवाले तुमको धारण करताहूं और तुमारे संबंधसे शतवर्ष जीवित रहा इसमंत्रको पढकर अधोवस्त्र धारण करे॥ आगेके मंत्रसे उत्तरीय जैसे यशसा इस मंत्रका प्रजापतिऋषि जगतीछन्द विधात्री देवता वस्त्रधारणमें

विनियोग है ॥ (मंत्रार्थ)हे वस्त्रदेवता यशसे युक्त आकाश पृथिवी तथा यशयुक्त इंद्र बृहस्पति तद्वत् यशयुक्त सूर्य मुझको जाने और उन्हकर सम्पादन किया यश मुझको प्राप्तहो इसमंत्रसे उत्तरीय धारण करे अनंतर कन्या और वरको दोवार आचमन करना चाहिये एक अधोवस्त्र धारण कर द्वितीय उत्तरीय धारण कर प्रमाण जैसे याज्ञवल्क्य-स्मृति अध्याय (आचांतः पुनराचामेद्वासो विपरिधाय च)॥ अर्थ- आचमन कियाहुआ फिर आचमन करे वस्त्रको धारण करकेभी इति ॥

ततःकन्याप्रदेनपरस्परं समञ्जेथामितिप्रेपितयोःपरस्परंसम्मुखीकरणम् ॥ समञ्जंत्वितिमंत्रस्यअथर्वणऋषिरनुष्टुप्छन्दोविश्वेदेवादेवतामैत्रीकरणेविनियोगः ॥ ॐसमञ्जन्तुविश्वेदेवाःसमापोहृदयानिनौ ॥ सम्मातरिश्वासंधातासमुदेष्ट्रीदधातुनः ॥इतिवरःपठेत् ॥ ततःकन्याप्रदकर्तृकग्रन्थिबन्धनम् ॥ हस्तलेपनंशाखोच्चारणम् ॥ ८२ पृ

भा०टी०-अनंतर यजमानद्वारा कन्यावरकी मैत्री करानी समंजंतु इस मंत्रका अथर्वण ऋषि अनुष्टुप्छन्द विश्वेदेवा देवता मैत्री करनेमे विनियुक्तहै ॥ (मंत्रार्थ) हे, कन्ये संपूर्ण देवता तथा शुद्ध जलसे तुह्मारे हमारे मनको गुणातिशय-द्वारा संस्कार करे अर्थात् दुष्टवासनासे रहित शुद्ध करे तद्वत् अनुकूल प्रजापति और उपदेशके करनेवाली सावित्री (गायत्री) देवताभी, हमारी तुमारी बुद्धि धर्म अर्थ काम मोक्षमे लगावे ॥ इस मंत्रको वर पढे ॥ ❀ शंका करतेहैं की वरको कन्या इस शब्दसे कहना उचित नहि कि

उनकी जो पुरुष स्त्रीको माता वा भगिनी वा कन्या कहे उसको प्रायश्चित्त करना लिखाहै। उत्तर– यद्यपि तुम्हारा कथन सत्यहै तथा इसकाल पर्यन्त और स्त्रियोंकीवत् यह भी कन्याही थी वरकाभी कुछ संबंध नहींथा और वाग्दानके अनंतरभी कन्याही कही जाती है यथा प्रमाण. (वरदानोचिताकन्या) फिर पाणिग्रहणके अनंतर यह वधूशब्दसे कही जावेगी (स्वस्वत्वनिवृत्ति पूर्वकपरस्वत्वोपादानात्) इस न्यायसे हम सूत्रकारकाभी प्रमाण देते हैं.(सुमङ्गलीरियंवधूरिमाऽसमेतपश्यत ॥सौभाग्यमस्यैदत्वायाथास्तंविपरेतनेति) और नारदस्मृतिकाभी प्रमाण जैसे (दशवर्षा भवेत्कन्या सम्प्रदानेवधूर्भवेत् । साङ्गुष्ठग्रहणेभार्य्या पत्नीचातुर्थकर्मणि ॥) अनंतर यजमानद्वारा द्रव्य पुष्प अक्षतादि कन्याके वस्त्रमें रखकर बांध. वस्त्रको वरके वस्त्रसे बांधे जिसको लोक गठचीतन कहते है प्रमाणभी जैसे योगियाज्ञवल्क्यजीका (कन्यकासुदशेपार्श्वे द्रव्यपुष्पाक्षतानिच। निक्षिप्यतानिसंबद्धा वरवस्त्रेणसंयुजेत् ॥ वस्त्रैः संयोज्य तौपूर्वकन्यादानंसमाचरेत् । दानेनयुक्तयोः पश्चाद्विदध्यात्पाणिपीडनम्) इति। अनंतर हाथोंमें कन्याके उद्वर्तन (उवटना लगाना.)॥

अथकन्यादानम् ॥दाताशंखस्थदूर्वाक्षतफलपुष्पचंन्दनजलान्यादाय ॥ अथकन्याप्रदःजामातृदक्षिणकरोपरिकन्यादक्षिणकरंनिधाय ॥ दाताऽहंवरुणोराजाद्रव्यमादित्यदैवतम् ॥ विप्रोसौविष्णुरूपेणप्रतिगृह्णात्वयंविधिः॥ इतिदातापठेत् ॥ गोत्रोच्चारणंच कुर्यात् ॥ विप्रातिरिक्तपक्षेविप्रोसावित्यत्रवरोसावि

तिपठेत् ॥ ॐस्वस्तीतिवचनमुक्त्वाद्यौस्त्वाददातु पृथिवीत्वाप्रतिगृह्णात्वितिमंत्रेणकन्याहस्तंवरःप्रति गृह्णीयात् ॥ ततःकन्याप्रदःअद्यकृतैतत्कन्यादान यथोचितफलावाप्तयेकन्यादानप्रतिष्ठार्थमिदंहिरण्य मग्निदैवतममुकगोत्रायाऽमुकशर्मणेब्राह्मणायवरायद क्षिणांतुभ्यमहंसम्प्रददे इतिदक्षिणांगोमिथुनंवादद्या त् ॥ ततःस्वस्तीतिवरःप्रतिब्रूयात् ॥

(अथ क्षेपकम्).

कन्यादानानंतरंकन्यापितावधूवरौप्रार्थयते. ॥ तत्रा दौवरप्रार्थना ॥ तद्यथा ॥ कन्यां लक्षणसंपन्नांकन काभरणैर्युताम्।दास्यामिविष्णवेतुभ्यंब्रह्मलोकजिगी षया ॥ ऋषयः सर्वभूतानांसाक्षिणःसर्वदेवताः।इमां कन्यांप्रदास्यामिपितॄणांतारणायच ॥ कन्यादानंम हादानंसर्वदानेषुदुर्लभम्॥तदद्यदैवयोगेनत्वंगृहाणवरो त्तम ॥ गौरींकन्यामिमांविप्रयथाशक्तिविभूषिताम्। गोत्रायशर्मणेतुभ्यंदत्तांविप्रसमाश्रय ॥ ममवंशसमु द्भूताअष्टवर्षाणिपालिता। तुभ्यंविप्रमयादत्तापुत्रपौ त्रप्रवर्धनी ॥

अथ कन्यामीश्वरं च प्रार्थयते ॥

कन्येममाग्रतोभूयाःकन्येमेदेविपार्श्वयोः॥कन्येमेपृष्ठ तो भूयास्त्वद्दानान्मोक्षमाप्नुयाम् ॥ त्रैलोक्यनाथ

देवेशसर्वभूतदयानिधे । दानेनानेनमेप्रीतोभवशांतिंप्रयच्छमे ॥ श्रुत्वाकन्याप्रदानंचपितरःप्रपितामहाः ॥ विमुक्ताःसर्वपापेभ्योब्रह्मलोकंव्रजंतिते ॥ इति संप्रार्थ्य प्रतिज्ञावचनं वरेण कुर्यात् ॥ धर्मेचार्थेचकामेचत्वयेयमतिचारतः । नत्याज्याज्याहुतिरिवभूमौसंसारभूतिदा ॥ यस्त्वयाधर्मश्चरितः कर्तव्यश्चानयासह ॥ धर्मेचार्थेचकामेचत्वयेयंनातिचरितव्या॥ वरः॥ अहंनातिचरामीहयदुक्तंभवताततः॥ धर्मार्थकामकैःकार्यैर्देहच्छायेवसर्वदा ॥ नातिचरामीतिवरोवदेत् ॥

(अथ दशमहादानमंत्राणि)

कन्यार्थेकनकं धेनुंदासीरथंमहीगृहम् । महिष्यश्वगजाःशय्यामहादानानिवैदश ॥ सुवर्णमंत्रः॥ हिरण्यगर्भसंभूतंसौवर्णंचाङ्गुलीयकम् । सर्वप्रदंप्रयच्छामिप्रीणातुकमलापतिः॥क्षीरोदमथनेपूर्वमुद्धृतंकुण्डलद्वयम्॥श्रियासहसमुद्भूतं ददेश्रीःप्रीयतामिति॥कांचनंहस्तवलयंरूपकांतिसुखप्रदम्॥विभूषणंप्रदास्यामिविभूषयतुतेसदा ॥ अथधेनुदानमंत्रः ॥ यज्ञसाधनभूतायाविश्वस्याघौघनाशिनी । विश्वरूपधरोदेवःप्रीयतामनयागवा ॥ अथदासीदानमंत्रः । इयंदासीमयातुभ्यंश्रीवत्सप्रतिपादिता । सर्वकामकरीभोग्यायधेष्टंभद्रमस्तुमे ॥ अ :र [illegible] त्र ॥ रथायरथनाथा

य नमस्तेविश्वकर्म्मणे । विश्वरूपायदेवायअरुणाय नमोस्तुते ॥ पृथिवीदानमंत्रः ॥ सर्वेषामाश्रयादेवी वराहेणसमुद्धृता । अनंतसस्यफलदाअतःशांतिप्रय च्छमे ॥ गृहदानमंत्रः । इदंगृहंगृहाणत्वंसर्वोपस्कर संयुतम् । तवविप्रप्रसादेनममसंतुमनोरथाः ।गृहंमम विभूत्यर्थंगृहाणत्वंद्विजोत्तम । प्रीयतांमे जगद्योनि र्वास्तुरूपी जनार्दनः॥अथमहिषीदानमंत्रः ॥ महिषी यमरूपात्वंविश्वामित्रविनिर्मिते । पूजिताहरमे पापं सर्वदानफलप्रदे ॥ अथाश्वदानमंत्रः ॥ महार्णवसमु त्पन्नउच्चैःश्रवसपुत्रक । मयात्वं विप्रमुख्यायदत्तोहय सुखीभव ॥ गजदानमंत्रः ॥ गजेंद्र मत्तमातंगदै त्यसैन्यविनाशक । तवदानेनमेशांतिः सर्वदास्तु महत्सुखम् ॥ अथशय्यादानम् ॥ यथानकृष्ण शयनं शून्यं सागरजातया । तथाशक्त्या ममाप्य स्त्वशून्या जन्मनिजन्मनि ॥ इति ॥ अन्यान्यपिदे यानि ॥ अथताम्रपात्रदानम्॥परापवादपैशुन्यादभ क्ष्यस्यचभक्षणात्॥ उत्पन्नपापं दानेन ताम्रपात्रस्य नश्यतु ॥ अथ कांस्यपात्रदानम् ॥ यानिपापानिका म्यानिकामोत्थानि कृतानिच ॥ कांस्यपात्रप्रदाने न तानिनश्यंतुमेसदा ॥ अथरौप्यपात्रदानम्॥ अग म्यागमनंचैव परदाराभिमर्शनम् । रौप्यपात्रप्रदा नेनतत्पापमेव्यपोहतु॥

अथ तांबूलदानमंत्रः ॥

पूरितंपूगपूगेन नागवल्लीदलान्वितम् । पूर्णेन चूर्ण पात्रेण कर्पूरपिष्टकेनच ॥ सपूगखंडनं दिव्यं गंधर्वाप्सरसां प्रियम्। ददे देव निरातंकं त्वत्प्रसादात्कुरुष्व माम् ॥ दीपदानमंत्रः ॥ दीपस्तमो नाशयति दीपः कीर्तिं प्रयच्छति । तस्माद्दीपप्रदानेन मम वंशप्रवर्धनम् ॥इति॥ अत्र अन्येपिकन्यावान्धवाः यथासंभवं द्रव्यं वरवध्वर्थंप्रयच्छंति केचनहोमांतेप्रयच्छंति । इयंदेशाचारतो व्यवस्था ज्ञातव्येति शम् ॥

इति क्षेपकम् ॥

भा०टी०-वस्त्रग्रंथि बंधनके अनंतर कन्यादान लिखते हैं यजमान शंखमें दूर्वाक्षता फलपुष्प चंदन जल लेकर दाता वरके दक्षिण हाथपर कन्याका दक्षिण हाथ राखे पूर्वोक्त (मंत्रार्थ)वरुणरूप में यजमान और सूर्य संकल्प रूप यह द्रव्य विष्णुरूप वर यहं विधि ग्रहण करे इस मंत्रको दाता पढे स्वस्ति हो ऐसे कहे (मंत्रार्थ) आकाश तुह्मारेको देताहै और पृथ्वी ग्रहण कर्ती है। इस मंत्रसे कन्याका हाथ वर ग्रहणकरे अनंतर आज किये कन्यादानकी शास्त्रविहित स्वर्गादि प्राप्तिके लिये यह सुवर्ण अग्निदेव संबंधि अमुक शर्मादि वरको दाक्षिणासे देताहै वा गौ दो वत्ससहित देताहै ॥ इसके अनंतर तुमको कल्याण हो ऐसे वर कहे और संकल्पकी विधि वृद्धपाराशरजी लिखते हैं (कन्यादानसमारम्भेदाताशङ्खे समाददेत् । दूर्वाक्षतफलं पुष्पं चंदनं जलमेयच) इत्यादि संपूर्ण विधानको विस्तारके भ-

यसे नहीं लिखते ॥ और संकल्प पूर्व कन्यादानका लिखा हुआ है ॥ स्वस्तीति (इसस्थान आचारसे और संबंधि पुरुषभी सुवर्ण कर रजत ताम्र गौ महिषी ग्राम पृथ्वी यौतुक होनेसे कन्याको यथाशक्ति देतेहैं ॥ कई होमके अनंतर कई २ वधू वरके विसर्जन अनंतर खट्टादि दान कर्तेहैं ॥ यह सब अपने२ देशाचारसे व्यवस्था जाननी जिस देशमे जैसे हो तैसेही करना इससे मुनियोंके मतभी बहुत लिखते हैं (कन्याप्रदानन्तुविधायतातस्तद्दक्षिणांगोमिथुनंसुवर्णं।दत्वाप्रदद्याद्वरणंवरार्थं वस्त्राणि पात्राणि विभूषणानि ॥ तत्रैवदेयानिबहुश्रुताजगुर्वाल्मीकजाबालिपराशराद्याः।होमान्तआहुर्भृगुनारदाद्या विसर्जनेऽन्यासमरीचिकौत्साः) इत्यादि ॥ और देशाचारमें प्रमाण (ग्रामवचनंच–कुर्युर्विवाहश्मशानयोर्ग्रामंप्राविशतादिति वचनात्तस्मात्तयोर्ग्रामप्रमाणमितिश्रुतेः) ॥ अर्थ कि ॥ विवाहके कर्तव्यतामें और श्मशान अर्थात् प्रेतक्रियामें ग्राममें प्रवेश कर ग्रामवचन करे इस श्रुतिसे अपने २ देशरीति और कुलरीति और ग्रामरीति परंतु जो धर्मविरुद्ध ना होवे उन्को करे ॥

यजुर्वेद अध्याय ७ मूल० मंत्र ४८

ॐकोदात्कस्माऽअदात्कामोदात्कामायादात् । कामोदाताकामः प्रतिगृहीताकामैतत्ते ॥ इतिवरः पठेत् ॥

ततस्तांपाणौगृहीत्वा । ॐयदैषिमनसादूरंदिशोनुपवमानोवा । हिरण्यवर्णोवैकर्णः सत्वामन्मनसांकरोतु ॥ श्रीअ

सुकदेवीइतिपठन्निष्क्रामति। ततोवेदिदक्षिणस्यांदिशिवारिपूर्णदृढकलशमूर्द्धतिष्ठतोमौनिनः पुरुषस्यस्कन्धेअभिषेकंपर्यन्तंधारयेत्।ततःपरस्परंसमीक्षेथामितिकन्याप्रेषानंतरम्

ॐअघोरचक्षुरपतिघ्न्येधिशिवापशुभ्यः
सुमनाः सुवर्चाः ॥ वीरसूर्देवकामास्यो
नाशन्नोभवद्विपदेशंचतुष्पदे ॥
सोमःप्रथमोविविदेगंधर्वोविविदउत्तरः ।
तृतीयोअग्निष्टेपतिस्तुरीयस्तेमनुष्यजाः॥
सोमोददद्गन्धर्वायगन्धर्वोददद्ग्नये ।
रयिंचपुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥
सानःपूषाशिवतमामेरयसानऊरूउशती
विहर । यस्यामुशन्तःप्रहरामशेपंयस्या
मुकामावहवोनिविष्ट्यै ।.इतिवरपठितम
न्त्रान्तेपरस्परंनिरीक्षणम् ।

भा०टी०–कोदादिति (मंत्रार्थ) प्रश्न–कौन देताहै उत्तर–काम अर्थात् इच्छाही देती है ॥ जिससे कामही देता और कामही लेनेवाला इस लिये यह पत्नी प्रतिग्रह उस काम

१ अघोरचक्षुपदमत्र अथर्वणोर. कांड १४ अनु०२ मंत्र १८ दिखाहै ॥

(२ सोम प्रथमोविविदे–यहमंत्र ऋग्वेद मंडल १० सूक्त ८५ मंत्र ४० है (३) ऋग्वेद मं० १० सूक्त. ८५ मंत्र ॥ ४१

(संकल्प) के लिये है ॥ बली है सर्वसे और धन्य है कि जो क्षत्रियादि जो दान मरणपर्यंतभी नहीं लेते अधिकारके ना होनेसे यह इनकोभी दान महाकन्यारूपी देतीहै ॥ यह इच्छाकी स्तुतिपर मंत्रहै ॥ इस मंत्रको प्रथम वर पढ़े पीछे से वधूको हस्तसे ग्रहण कर यदेषि इस मंत्रको पढ़े (मंत्रार्थ) प्राच्यादिसे लक्षित वायुकी न्याई तुम्हारेको पिता गृहसे दूर लेजाताहै वह वायु और हिरण्यवर्ण सूर्य वैकर्ण अग्नि अर्थात् दिक् वायु सूर्य अग्न्यादि देव मुझमें लगाहै, हृदय जिसका ऐसी तुमको करे। इस मंत्रके अंतमें वर कन्याका नाम लेवे। आत्मनाम गुरोर्नामेति आगे नामकभी ना ग्रहण करे अनंतर दक्षिण दिशामें जलपूर्ण कलश स्कंध (कांधेपर) रखकर अभिषेकपर्यन्त दृढ पुरुष स्थित रहै उठकर ॥ तुम आपसमें देखो यह यजमान कहे (मंत्रार्थ) हे कन्ये! तुम सौम्यदृष्टिवाली हो और (अपतिघ्नी) अर्थात् पतिके अर्थके नाशकरनेवाली मतहो इस विवाहसंस्कारके अनंतर पशुवत् जो आश्रित पुरुष उनमे हित करनेवाली हो और प्रसन्न चित्तवाली सुंदर प्रतापवाली। सत्पुत्र और वीरपुत्रोंके पैदा करनेवाली (देवकामा) देवान् अग्न्यादीन् पूजार्थं कामयति इच्छतीति) अर्थात् देवताओंमें तथा पित्रोंमें श्रद्धावाली हो (स्योना) सुखी हमारेको कल्याण देनेवाली हो ॥ सिद्धांत यह है कि तुमारेसे हमको सर्वदा लाभ हो ॥ (मंत्रार्थ) कन्यास्तुतिका– हेकन्ये! प्रथम रक्षाकरनेवाला चंद्रमा जन्मदिनसे सार्द्धद्वय वर्ष (अर्थात्) २ ॥ अढाई वर्षपर्यंत तुम्हारी पुष्टि कर्ता हुआ तिसके अनंतर गंधर्व अर्थात् सूर्य पांचवर्ष पर्यंत तुहारेको पढ़ाता हुआ इसलिये सूर्य तुम्हारा दूसरा पति (पाति रक्षति इति पतिः) अर्थात् रक्षाकरनेवाला अनंतर पांचवर्षसे

लेकरसाढे सातवर्षतक अग्नि तुम्हारेको शुद्धता सर्व काममें देता हुआ इससे अग्नि तीसरा पति रक्षाकरनेवाला भया॥प्रमाण जैसे (पूर्वंस्त्रियःसुरैर्भुक्ताःसोमगन्धर्ववह्निभिः । प्रतिपोष्याध्याप्यसंशोध्यपरित्यक्तांनरोभजेत् ॥) अर्थ–जन्मादिनसे ले साढ़ेसात वर्षमें अढाई २॥ वर्ष क्रमसे सोम चंद्रमा सूर्य अग्नि देवने क्रमसे (भुक्ताः) रक्षा की । भुज पालनाभ्यवहारयोः इस धातुसे क्तप्रत्ययके आनेसे बहुवचनान्त होनेसे भुक्ता यह शब्द सिद्ध होताहै ॥ और क्रममें पुष्टकर तथा पढाकर और शुद्धकरके त्यागकी हुई स्त्रियोंको नर भजते हैं अर्थात् सेवन करते हैं भजसेवायां इस धातुसे लिङ्लकारके आनेसे यासकेस्थानमें ईय तिप् आदि आनेसे रूप भजेत् बनताहै॥ इस लिये साढेसातवर्षके नंतर ज्योतिषशास्त्रमें दोष लिखाहै विवाह करनेका ॥ (मंत्रार्थ) चंद्रमा ३० मासमें पुष्टकर सूर्यको देता भया सूर्यभी ३० महीनेके अनंतर दक्षता पांडित्यको देकर अग्निके समर्पण कर्ता भया वह अग्निदेव इस स्त्रीको साथ पुत्रोंके धनके धर्मके शुद्धकर मुझे देताहै प्रमाणभी जैसे–" याज्ञवल्क्यस्मृति अध्याय १ सोमःशौचंददावासांगन्धर्वश्चशुभांगिरं । पावकः सर्वमेध्यत्वंमेध्यावैयोषितःस्मृताइत्यादि " अर्थ–पूर्वोक्तही है इसलिये ही सर्व स्त्रीकों विना पढाये स्त्रियोंको ऐसी चातुर्यता होती है कि जो विद्वान् लोक हैं उनकीभी बुद्धि नष्टकर अपने आधीन करलेती हैं और नृत्यादि कलामें ऐसी कुशल होतीहै कि जो नहीं कही जाती यह विना सूर्यके अंतःकरणमें उपदेश करनेके कैसे होसक्ताहै ॥ अर्थ चन्द्रमाको कार्य देखे कि, जो पुरुष गांधर्वविद्यामें दिनरात्र अभ्यास करतेहैं वही स्त्रीका स्वाभाविक राग श्रवण कर संकुचित होजाते हैं तो कहिये वह किस गन्धर्वकी शिष्य

बनकर शिक्षाको प्राप्त होती है इत्यादि बहुत गुण हैं जो पुरुषको जन्मभरमेंभी ना आमे बुद्धिवान् पुरुष सर्व जानते हैं ॥ इस अपनी तर्कके सिद्ध करनेके लिये शास्त्रके प्रमाण देते है"आहारोद्विगुणःस्त्रीणां बुद्धिस्तासांचतुर्गुणा।षड्गुणो व्यवसायश्च कामश्चाष्टगुणःस्मृतः ॥ स्त्रियाश्चरित्रं पुरुषस्यभाग्यं देवो न जानातिकथंमनुष्यः ॥स्त्रीणामशिक्षितपटुत्वममानुषीषुसंदृश्यतेकिमुत याः परिबोधवत्यः । प्रागंतरिक्षगमनात्स्वमपत्यजातमन्यैर्द्विजैःपरभृताः खलुपोषयन्ति" अर्थ–दुष्यन्तराजा कहताहै कि विना शिक्षाके चातुर्यता जो पशु पाक्षियोंकी स्त्रीहै उन्में देखते है। जैसे कोकिल अपने पुत्रोंको कागादिसे पुष्ट कराती है तौ हम मनुष्योंकी स्त्रीमें क्या कहें यह प्रसंग " शकुंतलानाटक"में विस्तारसे है ॥ इति ॥

(मंत्रार्थ. सान इति) जगतका चक्षु सूर्यदेव कल्याणयुक्त इस्को हमारेमें अनुरक्त करे। यह स्त्री हमारेसे सुख और पुत्रोंको इच्छा करती भई ऊरु अर्थात् जंघाको पसारे और हम स्त्रीकी योनिसे सुख और पुत्रोंको इच्छा करते भये शेफ अर्थात् लिंगको प्रवेशन करे ॥ जिसमें धर्म पुत्र रतिसुखादिरूप बहुत गुण होते हैं (निविष्टचै) अर्थात् अग्निहोत्रादि कर्मद्वारा अंतःकरण शुद्ध होनेसे मुक्तिके लिये भाव यह है कि धर्म अर्थ काम मोक्षका साधन पतिव्रता स्त्री है प्रमाण याज्ञवल्क्यस्मृति अ० १–(लोकानंत्यं दिवःप्राप्तिः पुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः । यस्मात्तस्मात्स्त्रियः सेव्याः कर्तव्याश्चसुरक्षिताः) इति ॥

विशेषद्रष्टव्य–जिनको अर्थमें कुछ भ्रांति हो वह ऋग्वेदके चिन्हसे भाष्य देखे और सूत्र ब्राह्मण मिलावे तो उन्का हमारे पर अत्युपकार होगा और(दशास्यांपुत्रानाधेहिपतिमेकादशं

कृधि) इन्कोभी देखे तो अच्छाही है अन्यथा हम गप्पाष्टक नहीं मानते और विस्तारकेभयसे यहांबहुत लिखते नहीं॥ विशेषार्थ देखना हो तो विधवाविवाहखंडनमें देखले ॥

ऋग्वेद मंडल १० सू० ८५ मं० २५ ॥

इमांत्वमिन्द्रमीढ्वःसुपुत्रां सुभगांकृणु ।
दशास्यांपुत्रानाधेहिपतिमेकादशंकृधि॥

अर्थ– हे परमेश्वर! इसकी सौभाग्य साथ पुत्रोंके वृद्धि करे और इसमें दशपुत्र उत्पन्न हो उन्को और साथ. १० पुत्रोंकेसहित ११ में पतिकी वृद्धि करो धनादिसे॥ इस अर्थमें जिनको संदेह पडे वह ऊपर लिखित चिह्नसे ऋग्वेदमें देखे ॥ इति क्षेपक.

ततोऽग्निंप्रदक्षिणीकृत्यपश्चादग्नेरहतवस्त्रवेष्टितंतृणपूलकंकटंवानिवेश्य तदुपरिदक्षिणचरणंदत्वा वधूं दक्षिणतःकृत्वातामुपवेश्यपुष्पचंदनताम्बूलान्यादाय ॥ओंतत्सदद्यकर्तव्यविवाहहोमकर्मणिकृताऽकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मकर्तुममुकगोत्रममुकशर्माणंब्राह्मणमेभिःपुष्पचंदनताम्बूलवासोभिर्ब्रह्मत्वेनत्वामहंवृणे इतिब्रह्माणंवृणुयात्॥वृतोस्मीतिप्रतिवचनम् ॥ यथाविहितंकर्म्म कुर्विति वरेणोक्ते करवाणीतिब्रह्माब्रूयात् ॥ ततोवरोऽग्नेर्दक्षिणतः ब्रह्माणमग्निप्रदक्षिणक्रमेणानीयअत्रत्वंमेब्रह्माभवेत्यभिधायकल्पितासनेसमुपवेशयेत् ॥

भा०टी–परस्पर निरीक्षणके अनंतर अग्निको प्रदक्षिणा कर अग्निके पश्चिम भागमें अहत (ना दग्ध) वस्त्रवेष्टन कर तृणपूलक वा कट(सक) रखकर उसके ऊपर दक्षिण पाद देकर अर्थात् उल्लंघन ना कर वधूको दक्षिणभागमें लेकर उसका वामपाद रखकर बिठाय पुष्प चंदन तांबूल (पान) हाथमें ले। आज कर्तव्यविवाहके होमकर्ममें कर्मकी शुद्धि अशुद्धिकी परीक्षा इत्यादि ब्रह्माका जो कर्म उसके लिये अमुक गोत्र अमुक ब्राह्मण ब्रह्मा समझकर आपको वरण करता हूं॥हमने वरणी लई यह ब्रह्मा कहे।तुम यथावत् कर्म करो ऐसे वर कथनके अनन्तर कर्ता हूं ऐसे ब्रह्माजी कहे अनंतर अग्निप्रदक्षिण क्रमसे ब्रह्माको लेजाय तुम कर्मसाक्षी मुझका ब्रह्मा हो ऐसे कह अग्निसे दक्षिणभागमें :आसनपर बिठलावे अर्थात् वरणवृक्षसे बनेहुए काष्ठके पीठ-) पर कुशा बिछाय पूर्वोत्तर क्रमसे उसपर कर्मके तत्वको जाननेवाले श्रेष्ठ ब्राह्मण बैठावे यदि ऐसा ना मिले तो पचास कुशोंका ब्रह्मा रचकर बिठावे ॥

ततःप्रणीतापात्रंपुरतःकृत्वावारिणापरिपूर्य कुशैराच्छाद्यब्रह्मणोमुखमवलोक्यअग्नेरुत्तरतःकुशोपरिनिदध्यात् ॥ ततः परिस्तरणंबर्हिपश्चतुर्थभागमादाय आग्नेयादीशानांतंब्रह्मणोऽग्निपर्यन्तंनैर्ऋत्याद्वायव्यान्तमग्नितःप्रणीतापर्यन्तंततोऽग्नेरुत्तरतःपश्चिमादिशि पवित्रच्छेदनार्थंकुशत्रयंपवित्रकरणार्थंसाग्रमनंतर्गर्भं कुशपत्रद्वयंप्रोक्षणीपात्रमाज्यस्थालींसंमार्जनार्थंकुशत्रयंसमिधस्तिस्रः स्रुवआज्यंपट्पञ्चाशदुत्तरमुष्टिद्वयावच्छिन्नतण्डुलपूर्णपात्रंपूर्वपूर्वदिशिक्रमेणासादनीयम् ॥

भा०टी०-ब्रह्माजीकी वर्णीके अनंतर प्रणीतापात्रको मुखके बराबर आगे कर जलपूर्ण कुशासे आच्छादन कर सादी होनेसे ब्रह्माजीको देख अग्निकी उत्तरकोणमें कुशापर स्थित करदे । अनंतर कुशमुष्टिका चौथा भाग ले अग्निकोणसे ईशानकोणपर्यन्त ब्रह्मासे अग्निपर्यन्त नैर्ऋतिकोणसे वायुकोणपर्यन्त पूर्वाग्र उत्तराग्र कुशा बिछावे। अनंतर अग्निकी उत्तर तरफ पश्चिममें पवित्रछेदन लिये तीन कुशा पवित्र कर्नेके लिये साथ अग्रके और मध्यपत्रसे रहित दो कुशपत्र। प्रोक्षणीपात्र आज्यस्थाली संमार्जनके लिये तीन कुशा उपयमनके लिये वेणीरूप तीन कुशा। तीन समिधा स्रुवा घृत पुष्ट ब्राह्मणतृप्तिकारक वा २५६ मुष्टिप्रमाण तंडुलपूर्णपात्र आगे २ पूर्वदिशामें क्रमसे रखने चाहिये ॥ नीचे लिये लक्षण पात्रोंके सर्व जानने ॥

(१) प्रणीताका लक्षण—वरणवृक्षका १२ अंगुलदीर्घ ४ अंगुल विस्तार औरखोदा हुआ प्रणीतापात्र होताहै॥

(२) प्रोक्षणीपात्र लक्षण–देवलोक्त०प्रणीतानैर्ऋतेभागे तद्वायव्यगोचरे । वारणंसंविजानीयात्सर्वकर्मसुकारयेत् ॥ सर्वसंशोधनार्थोदपात्रंवारणमिष्यते। द्वादशाङ्गुलि दीर्घंचकरतलोन्मितखातकं । पद्मपत्रसमाकारंमुकुलाकारमेववा ॥

(३) आज्यस्थालीका लक्षण–तैजसीमृन्मयीवापि आज्यस्थालीप्रकीर्तिता। द्वादशाङ्गुलविस्तीर्णाप्रादेशोच्चा प्रमाणतः ॥

(४)चरुस्थालीका लक्षण–चरुस्थालीतथैवापिदीर्घोच्चा तुप्रमाणतः। नानयोरन्तरंयस्माद्द्रव्यसंस्कारणार्थकइति ॥

(५) सम्मार्जनकुशमें प्रमाण—स्रुवसम्मार्जनार्थन्तुकुशत्रयमुदीरितम् । इति व्यासस्मृतौ ॥

(६) उपयमनकुशाकाप्रमाण—उपयमनार्थमाख्याताास्त्रिपण्नवमिताःकुशाः। वेणीरूपानिरोधार्थानिरोधेवहुभिःसुखं इतिभृगुवचनात् ॥

(७) समिधा३मेंप्रमाण—पालाशजंतुप्रादेशमात्रंदैर्घ्येणस्थूलता।कनिष्ठिकासमंध्यात्वाविधिमग्नौक्षिपेच्चतत् इतिपराशरः

(८) स्रुव वा ब्रह्महस्तलक्षण—स्रुवस्तुब्रह्महस्ताख्यःस्कन्धान्तोबाहुरुच्यते । स्वाहाकारस्वधाकारवषट्कारसमन्वितः ॥ दण्डाकारोभवेन्मूलेस्यादरत्न्यांतुतत्समः । सकङ्कणस्तुदण्डाग्रेहस्ताकारस्ततोवहिः ॥ अष्टांगुलिपरीमाणंमूलाभ्यंतरतस्त्यजेत्॥दशाङ्गुलिपरीमाणंमूलाभ्यंतरतस्त्यजेत् दशांगुलिपरिमाणमारभ्यकङ्कणावधि ॥ हस्तमात्रंभवेद्धस्त स्रुवइत्यभिधीयते ॥ खादिरःशैंशिपोवापिह्यन्योवापुण्यवृक्षजः ॥ धावकोपिसमाख्यातोहोमार्थंमुनिभिःकृतः ॥ इतिकात्यायनः ॥

(९) घृतलक्षणम्—तथाचस्मृतिः गव्यमाज्यंजुहुयात् तदभावेमाहिषंस्मृतम् ॥ तथाचश्रुतिः॥ गव्यमाज्यंजुहुयात्तदभावेमाहिषेयमिति ॥

(१०)चरुलक्षणम्—व्रीहितंडुलसंसिद्धोमुख्यःप्रोक्तःसुरर्षिभिः । इत्याचारचंद्रोदये ॥

(११) पर्यग्निकेलक्षणमेंश्रुति–पर्यग्निंकुर्वन्ज्वलदु
ल्मुकमादायप्रदक्षिणमाज्यचर्वोःसमंताद्भ्रामयेदिति॥
(१२)समिधालक्षणं–पलाशखदिराश्वत्थशम्युदुम्बर
जासमित् । अपामार्गकदूर्वाग्निकुशाश्चेत्यपरेविदुः ॥
सत्वचःसमिधः स्थाप्या ऋजुश्लक्ष्णाःसमास्तथा ।
शस्तादशाङ्गुलास्तास्तु द्वादशांगुलिकास्तुताः ॥
आर्द्राःपक्काःसमच्छेदास्तर्जन्यंगुलिवर्तुलाः । अपा
टिताश्चविशिखाःकृमिदोषविवर्जिताः ॥ ईदृशीहोम
येत्प्राज्ञःप्राप्नोतिविपुलांश्रियं ॥ इतिव्यासकात्याय
नवसिष्ठगौतमभरद्वाजाः ॥ इति लक्षणानि ॥
अथतस्यामेवदिशिअसाधारणवस्तून्युपकल्पनीया
नि तत्रशमीपलाशमिश्राः लाजाःदृषदुपलंकुमारी
भ्रातासूर्यःदृढपुरुषः ॥ अन्यदपितदुपयुक्तमालेपना
दिद्रव्यं॥ततःपवित्रच्छेदनकुशैःपवित्रेछित्वाततःसप
वित्रकरेणप्रणीतोदकंत्रिःप्रोक्षणीपात्रेनिधायअनामि
कांगुष्ठाभ्यांउत्तराग्रेपवित्रेगृहीत्वात्रिरुद्दिंगनंप्रणीतो
दकेनप्रोक्षणीजलेन यथासादितवस्तुसेचनं ॥ ततोऽ
ग्निप्रणीतयोर्मध्येप्रोक्षणीपात्रनिधानं ॥ आज्यस्था
ल्यामाज्यनिर्वापः ॥ ततोऽधिश्रयणं ॥ ततोज्वलत्तृ
णादिनाहविर्वेष्टयित्वाप्रदक्षिणक्रमेणवह्नौतत्प्रक्षेपः
पर्यग्निकरणं ॥ ततःस्रुवप्रतपनंकृत्वासम्मार्जनकुशा
नामग्रैरंतरतोमूलैर्बाह्यतः ॥ स्रुवंसंमृज्यप्रणीतोदके

(५) सम्मार्जनकुशमें प्रमाण–स्रुवसम्मार्जनार्थन्तुकुशत्रयमुदीरितम् । इति व्याससमृतौ ॥

(६) उपयमनकुशाकाप्रमाण–उपयमनार्थमाख्यातास्त्रिपण्नवमिताःकुशाः। वेणीरूपानिरोधार्थोनिरोधेवहुभिःसुखं इतिभृगुवचनात् ॥

(७) समिधा३मेंप्रमाण–पालाशजंतुप्रादेशमात्रंदैर्घ्येणस्थूलता।कनिष्ठिकासमंध्यात्वाविधिमग्नौक्षिपेच्चतत् इतिपराशरः

(८) स्रुव वा ब्रह्महस्तलक्षण–स्रुवस्तुब्रह्महस्ताख्यःस्कन्धान्तोवाहुरुच्यते । स्वाहाकारस्वधाकारवषट्कारसमन्वितः ॥ दण्डाकारोभवेन्मूलेस्यादरत्न्यांतुतत्समः । सकङ्कणस्तुदण्डाग्रेहस्ताकारस्ततोवहिः ॥ अष्टांगुलिपरीमाणंमूलाभ्यंतरतस्त्यजेत्॥दशाङ्गुलिपरीमाणंमूलाभ्यंतरतस्त्यजेत् दशांगुलिपरिमाणमारभ्यकङ्कणावधि ॥ हस्तमात्रेभवेद्धस्तस्रुवइत्यभिधीयते ॥ खादिरःशैंशिपोवापिन्यग्रोधोवापुण्यवृक्षजः ॥ धावकोपिसमाख्यातोहोमार्थमुनिभिःकृतः ॥ इतिकात्यायनः ॥

(९) घृतलक्षणम्–तथाचस्मृतिः॥गव्यमाज्यंजुहुयात् तदभावेमाहिषंस्मृतम् ॥ तथाचश्रुतिः॥ गव्यमाज्यंजुहुयात्तदभावेमाहिषेयमिति ॥

(१०)चरुलक्षणम्–व्रीहितंदुलसंसिद्धोमुख्यःप्रोक्तःसुरर्षिभिः । इत्याचारचंद्रोदये ॥

(११) पर्यग्निकेलक्षणमेंश्रुति–पर्यग्निंकुर्वन्ज्वलदु
ल्मुकमादायप्रदक्षिणमाज्यचर्वोःसमंताद्भ्रामयेदिति॥
(१२)समिधालक्षणं–पलाशखदिराश्वत्थशम्युदुम्बर
जासमित् । अपामार्गकदूर्वाग्निकुशाश्चेत्यपरेविदुः ॥
सत्वचःसमिधः स्थाप्या ऋजुश्लक्ष्णाःसमास्तथा ।
शस्तादशाङ्गुलास्तास्तु द्वादशांगुलिकास्तुताः ॥
आर्द्राःपक्वाःसमच्छेदास्तर्ज्जन्यंगुलिवर्तुलाः । अपा
टिताश्चविशिखाःकृमिदोपविवर्जिताः ॥ ईदृशीहोम
येत्प्राज्ञःप्राप्नोतिविपुलांश्रियं ॥ इतिव्यासकात्याय
नवसिष्ठगौतमभरद्वाजाः ॥ इति लक्षणानि ॥
अथतस्यामेवदिशिअसाधारणवस्तून्युपकल्पनीया
नि तत्रशमीपलाशमिश्राः लाजाःदृपदुपलंकुमारी
भ्रातासूर्यःदृढपुरुषः ॥ अन्यदपितदुपयुक्तमालेपना
दिद्रव्यं॥ततःपवित्रच्छेदनकुशैःपवित्रेछित्वाततःसप
वित्रकरेणप्रणीतोदकंत्रिःप्रोक्षणीपात्रेनिधायअनामि
कांगुष्ठाभ्यांउत्तराग्रेपवित्रेगृहीत्वात्रिरुद्दिंगनंप्रणीतो
दकेनप्रोक्षणीजलेन यथासादितवस्तुसेचनं ॥ ततोऽ
ग्निप्रणीतयोर्मध्येप्रोक्षणीपात्रनिधानं ॥ आज्यस्था
ल्यामाज्यनिर्वापः ॥ ततोऽधिश्रयणं ॥ ततोज्वलत्तृ
णादिनाहविर्वेष्टयित्वाप्रदक्षिणक्रमेणवह्नौतत्प्रक्षेपः
पर्यग्निकरणं ॥ ततःस्रुवप्रतपनंकृत्वासम्मार्जनकुशा

नाभ्युक्ष्यपुनःप्रतप्यस्रुवंदक्षिणतोनिदध्यात् । ततः आज्यस्याग्नेरवतारणंततआज्येप्रोक्षणीवदुत्पवनं ॥ अवेक्ष्यसत्यपद्रव्येतन्निरसनं ॥ पुनःप्रोक्षणीवदुत्पवनम् ॥

भा०टी०–अनतर तिस दिशामें और सर्ववस्तु स्थापन कर्नी जैसे शमी जंडी पलाशसे युक्त लाजा (फलिया) शिला वट्टा कन्याका भाई देखनेलियें सूर्य मजबूत पुरुष और भी जो कामकी वस्तु हो वहभी पास रखले पवित्र कुशासे पवित्रको छेदन कर फिर साथ पवित्रके हाथसे प्रणीताके जलको तीनवार प्रोक्षणीपात्रमें रखकर अनामिका और अंगुष्ठसे उत्तराग्र पवित्र ग्रहणकर तीनवार ऊपरको जल फैकना प्रणीता और प्रोक्षणीका जल मिलाय सर्ववस्तुको सिञ्चन कर्ना अनंतर अग्नि और प्रणीताके मध्यमें प्रोक्षणीपात्र रखना आज्यस्थालीमें आज्य पाना और अग्निपर रखनी जलते तृणसे हविर्वेष्टनकर प्रदक्षिणक्रमसे तृणको अग्निमें गेरदेना जलती चमातीसे प्रदक्षिण क्रमसे घृत चरुके चारों पार्श्वमें फेरनी ॥ अनंतर स्रुव तथा संमार्जन कुशाके अग्रभागसे अनंतर मूलसे बाहिरसे स्रुवको पोंच प्रणीतोदकसे अभ्युक्षण कर (सिंचन) फिर तपाय दक्षिण भागमें राखे । पुनः घृत अग्निसे उतार आज्यको प्रोक्षणीवत् उत्पवन करना यदि निषिद्धवस्तु हो तो निकाल देनी पुनः प्रोक्षणीवत् उत्पवन कर्ना ॥

ततःउपयमकुशानादायउत्तिष्ठन्प्रजापतिंमनसाध्यात्वातूष्णीमग्नौघृताक्तास्तिस्रः समिधःक्षिपेत् ॥ततउ

पविश्यसपवित्रप्रोक्षणीउदकेनप्रदक्षिणक्रमेणाग्निपर्युक्षणंकृत्वाप्रणीतापात्रेपवित्रेनिधायपातितदक्षिणजानुःकुशेनब्रह्मणान्वारब्धःसमिद्धतमेऽग्नौ स्रुवेणाज्याहुतीर्जुहोति ॥ तत्राघारादारभ्यद्वादशाहुतिपुतत्तदाहुत्यनंतरंस्रुवावस्थितहुतशेषघृतस्यप्रोक्षणीपात्रेप्रक्षेपः॥ॐप्रजापतयेस्वाहाइतिमनसा—इदंप्रजापतये०। ओमिन्द्रायस्वाहा—इदमिंद्रा० ॥ इत्याघारौ॥ओंअग्नयेस्वाहा—इदमग्नये० । ओंसोमायस्वाहा—इदंसोमाय० ॥ इत्याज्यभागौ॥ ओंभूःस्वाहा—इदमग्नये० ओंभुवःस्वाहा—इदंवायवे० ॥ ओंस्वःस्वाहा— इदं सूर्याय० एतामहाव्याहृतयः ॥

भा०टी०—अनंतर उपयमन कुशाको ले उठकर मनसे प्रजापतिका ध्यान कर्ता हुआ चुपचापसे घृतयुक्त पूर्वोक्त तीन समिधा अग्निमें गेरदेवें ॥ अनंतर बैठकर साथ पवित्र प्रोक्षणी जलसे प्रदक्षिणा क्रमसे अग्निको पर्युक्षण कर प्रणीतापात्रमें पवित्रे रख दाक्षिणजानु निमाय कुशाद्वारा ब्रह्मासे संयुक्त हो बडी जलती अग्निमें स्रुवसे घृतका आहुति हवन करताहै स्रुवसे लगे हुए घृतको प्रोक्षणीपात्रमें फेकना ॥ प्रजापतये० इदं प्र० यह मनमें कर आहुति देनी ॐ इंद्राय०इदमिंद्राय० । यह आघारसंज्ञक है ॐअग्न०इदम० सोमा०इदंसो० यह आज्यभागसंज्ञकहै ॥ ॐभूः —इदं अ० ॐभुवः —इदं वा० । ॐ स्वः—इदंसूर्या० यह महाव्याहृति है ॥

शुक्लयजु० अध्याय० २१ मंत्र ३॥

ॐत्वन्नोऽअग्नेवरुणस्यविद्वान्देवस्यहेडोअ
वयासिसीष्ठाः॥ यजिष्ठोवन्हितमःशो
शुचानो विश्वाद्वेषाᳬसिप्रमुमुग्ध्यस्म
त्स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम्॥

शुक्लयजु० अध्याय २१ मंत्र ४॥

ॐसत्वन्नोऽअग्नेऽवमोभवोतीनोदिष्ठोऽअस्याउ
षसोव्युष्टौ। अवयक्ष्वनोवरुणᳬरराणोवीहिमृ
डीकᳬसुहवोनएधिस्वाहा।इदमग्नीवरुणाभ्यां०।

यजुर्वेद मंत्रभाग॥

ॐअयाश्चाग्नेस्यनभिशस्तिपा (वा) श्चसत्यमित्त्व
मयाअसि। अयानोयज्ञंवहास्ययानोभेषजᳬस्वाहा
इदमग्नये०॥

यजु० मंत्र॥

ॐ येतेशतंवरुणयेसहस्रंयज्ञियाः पाशाविततामहा
न्तः। तेभिर्नोऽअद्यसवितोतविष्णुर्विश्वेमुञ्चन्तुमरुतः
स्वर्काःस्वाहा॥इदं वरुणायसवित्रेविष्णवेविश्वेभ्यो
मरुद्भ्यःस्वर्केभ्यः ०॥

भा०टी०-त्वन्नो और सत्वन्नो इन मंत्रोंका वामदेव ऋषि त्रिष्टुप्छंद अग्नि और वरुणदेवता सर्वप्रायश्चित्तमें विनियोगहै ॥ (अयाश्चाग्ने) इस मंत्रका वामदेवऋषि त्रिष्टुपछंद अग्निदेवता प्रायश्चित्तहवनमें विनियोगहै ॥ (येतेशतं) इस मंत्रका शुनःशेपऋषित्रिष्टुप्छंद वरुण देवता वरुणसंबंधि शापके मोचनमें विनियोगहै ॥ अब इन्के अर्थ क्रमसे लिखते हैं ॥ (त्वन्नइति) हे अग्ने तुम इस कर्ममें वैगुण होनेसे वरुणदेवके क्रोधको हरण करो कैसे तुम-सर्व कर्ममें साक्षि चतुर हो और सबसे उत्तमहो और सबदेवताओंको यज्ञका भाग देनेवालेहो प्रकाशमान हो इस लिये मंदबुद्धिवाले हमको जान हमारेसे की हुई अवज्ञा अनादरको क्षमा कर सर्वप्रकारसे कल्याण देवो॥ १ ॥ (मंत्रार्थ-सत्वन्नइति) हे अग्ने तुम सबको पालना कर्नेवाले है। इस लिये आजादिनके प्रातःकालसे लेकर मुझकी रक्षा करो। नहि केवल रक्षा किंतु हमारे कर बुलाये तुम सुखपूर्वक आकर सुखदेनेवाला चरु यज्ञके मालिक वरुणदेवताको देकर पूजन करो । जिससे वरुणदेवभी प्रसन्न हो हमारेको सुखदे ॥ २ ॥

(मं० अयाश्चाग्नइति) हे अग्ने तुम सर्वांतर्यामी और प्रायश्चित्तद्वारा सर्वप्राणीको शुद्ध कर्नेवाले और शुभके दाता हमारे किये हुए यज्ञको कृपाल होनेसे इंद्रादिदेवताओंको देनेवाले इस लिये हमकोभी भेषज अर्थात् सुखके देनेवाला दुःखविनाशक अपूर्व सुखदेवों ॥ ३ ॥

(मंत्रार्थ येतेशतमिति) हे वरुण यज्ञके विघ्नसे पैदाहुये बडे २ भारी महान कठिन जो तुमारे शतसंख्याक और सहस्र संख्याक पाशहैं, वह पापरूपपाश हमारे सविता

सूर्य विष्णुरूप इंद्र और सर्वदेवता और वायु सुंदर हृदय-वाले आदित्य हमारे पापोंको नष्ट करें ॥ ४ ॥

शुक्लयजु० अ० १२ (मूल.) मंत्र १२ ॥

उदुत्तमंवरुण पाश मुस्म्मदवाधमंविम ध्यमꣳश्रथाय ।अथावयमादित्यव्रते तवानागसोऽअदितयेस्यामस्वाहा ।इदं वरुणाय० ।

एताःसर्वप्रायश्चित्तसंज्ञकाः ॥ ५ ॥

ततोऽन्वारब्धंविनाॐप्रजापतयेस्वाहा । इदंप्रजापतये०॥ॐअग्नयेस्विष्टकृतेस्वाहा । इदमग्नयेस्विष्टकृते० ॥ उदकोपस्पर्शनम् ॥ अथराष्ट्रभृत्यः ॥

भा०टी०–उत्तम मध्यम अधम यह तीन वरुणके पाश हैं (मंत्रार्थ) हे वरुण जो तुमारा उत्तम पाशहै उससे हमारी रक्षा करो जो मध्यम पाशहै उससेभी हमारी रक्षा करो पाशको शिथिल करो हे वरुण हम ब्रह्मचर्यसे तुमारेसे निरपराध होकर दीनतासे रहित होते हैं । 'दीनतायां दितिःप्रोक्ता दितिःस्यादैत्यमातरि' ॥ इस वचनसे दितिनाम दीनताकाभीहै ॥ अनंतर अन्वारब्धविना । प्रजापतये० । इदं प्र० ॥ अग्नयेस्विष्टकृते० इदम०स्विष्टकृते०॥ यह दोआहुति दे जलको हाथ लगावे ॥ इसके अनंतर राष्ट्रभृत्यनाम आहुति लिखते हैं ॥

तत्र द्वादश मन्त्रा यथा

शुक्लयजु अध्याय १८ मंत्र ३८ ॥

ॐऋताषाड्डृतधामाग्निर्गन्धर्वः सनऽइदम्ब्रह्मक्षत्रम्पातु तस्मै स्वाहा वाट् ॥ इदमृताषाहे ऋतधाम्नेऽग्नये गंधर्वाय० ॥

ॐऋताषाड्डृतधामाग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यः स्वाहा । इदमोषधिभ्योऽप्सरोभ्यो मुद्भ्यः ० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ३९ ॥

सुᳫंहितो विश्वसामा सूर्य्यो गन्धर्वः सनऽइदम्ब्रह्मक्षत्रम्पातु तस्मै स्वाहा वाट् ॥ इदᳫं सᳫंहिताय विश्वसाम्ने सूर्याय गन्धर्वाय० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ३९ ॥

सुᳫंहितो विश्वसामा सूर्य्यो गन्धर्वस्तस्य मरीचयोऽप्सरसऽआयुवो नाम ताभ्यः स्वाहा ॥ इदं मरीचिभ्योप्सरोभ्य आयुवोभ्यः० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४० ॥

ॐसुषुम्णःसूर्य्यरश्मिश्चन्द्रमागन्धर्वः सनऽइदंब्रह्मक्षत्रंपातुतस्मैस्वाहा वाट् ॥ इदंसुषुम्णाय सूर्य्यरश्मयेचंद्रमसेगंधर्वाय ० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४० ॥

ॐसुषुम्म्णःसूर्य्यरश्म्मिश्चन्द्रमागन्धर्वस्तस्यनक्षत्राण्यप्सरसोभेकुरयोनाम ताभ्यःस्वाहा ॥ इदंनक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यः ० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४१ ॥

ॐइषिरोविश्वव्यचावातोगन्धर्वःसनऽइदम्ब्रह्मक्षत्रम्पातुतस्मैस्वाहावाट् ॥ इदमिषिरायविश्वव्यचसेवाताय० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४१ ॥

ॐइषिरोविश्वव्यचाव्वातोगन्धर्व्वस्तस्यापोऽप्सरसऊर्ज्जोनामताभ्यःस्वाहा ॥ इदमद्भ्योऽप्सरोभ्यऊर्ग्भ्यः० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४१ ॥

ॐभुज्युःसुपर्णोयज्ञोगन्धर्वःसनइदम्ब्रह्मक्षत्रंपातुतस्मैस्वाहावाट् ॥ इदंभुज्यवे सुपर्णाययज्ञायगन्धर्वाय० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४१ ॥

ॐभुज्युःसुपर्णोयज्ञोगन्धर्वस्तस्यदक्षिणाअप्सरसस्तावानामताभ्यःस्वाहा ॥ इदंदक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यः० ॥

यजु० अध्याय १८ मंत्र ४२ ॥

ॐप्रजापतिर्विश्वकर्मामनोगन्धर्वः सनइदंब्रह्मक्षत्रंपातुतस्मैस्वाहावाट् । इदंप्रजापतयेविश्वकर्मणेमनसेगंधर्वाय० ॥

ॐप्रजापतिर्विश्वकर्म्मामनोगन्धर्वस्तस्यऽऋक्सामान्यप्सरसऽएष्टयोनामताभ्यः स्वाहा ॥ इदंऋक्सामभ्योऽप्सरोभ्यएष्टिभ्यः० ॥ इतिराष्ट्रभृत् ॥

भा०टी०-इन द्वादश मंत्रोंके अर्थ यथाक्रमसे जानने यह + यह चिन्ह होगा वहां पूर्वोक्त अर्थ समझे ॥ (मंत्रार्थ १) जो सत्यके सहनेवाला सत्यका स्थान गंधर्वरूप

जो अग्नि उसको दी हुई आहुति बहुतहो वह अग्नि हमारा ब्रह्मज्ञान और (क्षत्र) वीर्य बलको रक्षा करे ॥

(२) जो सत्यका स्थान सत्यशील गंधर्वरूप अग्नि तिस्की औषधी अर्थात् यवगोधूम माष व्रीहि मुद्गादि सर्व प्राणिको आनंददायक अप्सराहै तिस अग्नि और अप्सराके लिये सुहुत हो (+) इत्यादि ॥

(३) दिनरात्रिका स्वामी गंधर्वरूप जो सूर्यभगवान् संपूर्ण सामवेदके जाननेवाले उन्के लिये सुहुत हो (+) इत्यादि ॥

(४) रात्रिदिनपति गंधर्वरूपी सूर्यजीकी मिश्रित होनेवाली मरीचिया (किरण) रूप अप्सराहै सो (+) इत्यादि ॥

(५) निरंत सदैव आनंदके देनेवाले गंधर्वरूपी सूर्यकिरणोंसे वृद्धिको प्राप्त भये जो चंद्रमा भगवान् जी (+) इत्यादि ॥

(६) तिस गंधर्वरूपी चंद्रमाजीकी (ईकुरी) अर्थात् जो एक पिताकी द्विकन्याका एकही पति हो उन्को ईकुरी कहते हैं (+) प्रमाणभी जैसे गंगाधरजी लिखतेहे (सपितृकाएकपतिका ईकुर्य्यस्ता उदीरिताः) ऐसे जो क्षत्र तारका अप्सराहै उस्के पतिजो (+) इत्यादि ॥

(७) जो वायु गमनस्वभाव और सर्वगत गंधर्वरूपहै (+) इत्यादि ॥

(८) जो वायुरूप गन्धर्व उन्का सर्व वस्तुके देनेवाला जल अप्सराहै (+) इत्यादि ॥

(९) जो यज्ञरूप गंधर्व है पालन कर्नेवाला और शोभनगतिवाला उस्की जलरूप अप्सराहै उस्के (+) इत्यादि॥

(१०) जो यज्ञरूप गंधर्व है स्तवनरूप उस्की दक्षिणा नाम अप्सराहै उस्के (+) इत्यादि ॥

(११) प्रजाका ईश्वर कि जिसके आश्रय विश्व बनती है ऐसा मनरूप जो गंधर्व हे (+) इत्यादि ॥

(१२) जो मनरूप गंधर्व उसकी धर्म अर्थ काम मोक्ष (पुत्रादि) की देनेवाली ऋग्वेद सामवेदरूपी अप्सराहे उस्के लिये सुहुतहो वह मन हमारा ब्रत ज्ञान वीर्य्य बल वृद्धि करे इत्यादि क्रमसे अर्थ जानना यह राष्ट्रभृत नामसे हवनहै ॥

अथ जयाहोमः॥ॐचित्तश्चस्वाहा – इदंचित्ताय० १ ॐचित्तिश्चस्वाहा-इदंचित्त्यै०२ ॐआकूतंचस्वाहा-इदमाकूताय०३ ॐआकूतिश्चस्वाहा–इदमाकूत्यै० ४ ॐविज्ञातंचस्वाहा–इदंविज्ञाताय० ५ॐविज्ञातिश्चस्वाहा–इदंविज्ञात्यै० ६ ॐमनश्चस्वाहा–इदंमनसे० ७ ॐशक्वरीश्चस्वाहा-इदंशक्वरीभ्यो०८ ॐदर्शश्चस्वाहा–इदंदर्शाय० ९ ॐपौर्णमासश्चस्वाहा–इदंपौर्णमासाय० १० ॐबृहच्चस्वाहा–इदंबृहते० ११ ॐरथंतरंचस्वाहा–इदंरथंतराय० १२ ॐप्रजापतिजयानिन्द्रायवृष्णेप्रायच्छदुग्रःपृतनाजयेषु ॥ तस्मैविशःसमनमंतसर्वाःसउग्रःसहइहव्योबभूवस्वाहा १३ इतिजयाहोमः ॥

भा०टी०–यह १३ त्रयोदशमंत्र जयानाम होमहै इन्में द्वादश (१२) सुगमहै ॥ (मंत्रार्थ) १३ प्रजापति–प्रजाका स्वामि शत्रुओंकी सेनाके नाश करनेमें उग्र परमेश्वरजीने इंद्रका जयानाम मंत्रोंका उपदेश कर्ते भये । जिस मंत्रोंके

प्रभावसे इंद्र सर्वका राजा और वर्षाके कर्नेवाला सर्वसे मुख्य (अग्रणी) होता भया तद्वत् ऐसी कृपाशील परमेश्वर मुझकोभी जय देवे ॥ और हमारेसे दी हुई आहुति सुहुतहो ॥ १३ ॥ भाव यहहै कि जिन मंत्रोंके उपदेशद्वारा इंद्र ऐश्वर्यसे युक्त सर्वसे मुख्य भया इस लिये इन्का जया नाम है। इति ॥

अथाभ्यातानननामहोमः॥ओंअग्निर्भूतानामधिपतिःस मावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यां पुरो धायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या ँस्वाहा ॥ इदम ग्नयेभूतानामधिपतये०१ ॐइन्द्रोज्येष्ठानामधिपतिः समावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन् क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यां पु रोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या ँस्वाहा ॥ इद मिन्द्रायज्येष्ठानामधिपतये०२ ओंयमःपृथिव्याऽअ धिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्य स्यांपुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या ँस्वाहा ॥ इदंयमायपृथिव्याअधिपतये० ३ अत्रप्रणीतोदकस्प र्शः ॥ओंवायुरन्तरिक्षस्याधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्म ण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्मण्य स्यांदेवहूत्या ँस्वाहा ॥ इदंवायवेऽन्तरिक्षस्याधिपत ये० ४ ॐसूर्योदिवाअधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्य स्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्मण्य स्यांदेवहूत्या ँ स्वाहा । इदंसूर्यायदिवाअधिप०५ ॐचंद्रमानक्षत्राणामधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्य

स्मिन्क्षत्रे स्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन्कर्म
ण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंचंद्रमसेनक्षत्राणामाधि
पतये० ६ ॐबृहस्पतिर्ब्रह्मणोधिपतिःसमावत्वस्मि
न्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मि
न्कर्मण्यस्यां देवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंबृहस्पतयेब्रह्म
णोऽधिपतये०७ ओंमित्रःसत्यानामधिपतिःसमावत्व
स्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायाम
स्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंमित्रायस
त्यानामधिपतये०८ॐवरुणोऽपामधिपतिःसमावत्व
स्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायाम
स्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा । इदंवरुणायअ
पामधिपतये० ९ ॐ समुद्रःस्त्रोत्यानामधिपतिःसमा
वत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधा
यामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽ स्वाहा ॥ इदंसमु
द्रायस्त्रोत्यानामधिपतये० १० ॐ अन्नंसाम्राज्या
नामधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामा
शिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽ
स्वाहा । इदमन्नायसाम्राज्यानामधिपतये० ११ ॐ
सोमओषधीनामधिपतिःसमावत्वास्मिन्ब्रह्मण्यस्मि
न्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्म्मण्यस्यां
देवहूत्या॑ऽस्वाहा। इदंसोमायओषधीनामधिपतये०
१२ॐ सविताप्रसवानामधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्म

ण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्म्म
ण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंसवित्रेप्रसवानामधिप
तये० १३ ॐ रुद्रःपशूनामधिपतिःसमावत्वस्मिन्ब्र
ह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्म
ण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंरुद्रायपशूनामधिपत
ये० १४ अत्रप्रणीतोदकस्पर्शः॥ॐ त्वष्टारूपाणामधि
पतिःसमावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपु
रोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा॥इदंत्वष्ट्रेरू
पाणामधिपतये० १५ ॐविष्णुःपर्वतानामधिपतिः
समावत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरो
धायामस्मिन्कर्म्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंवि
ष्णवेप्रजानामधिपतये० १६ ॐमरुतोगणानामधिप
तयःस्तोमावंत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रेस्यामाशिष्यस्यां
पुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहूत्या॑ऽस्वाहा ॥इदंम
रुद्भ्योगणानामधिपतिभ्यः० १७ ॐ पितरःपिताम
हाःपरेवरेततास्ततामहाइहमावंत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्ष
त्रेस्यामाशिष्यस्यांपुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यांदेवहू
त्या॑ऽस्वाहा ॥ इदंपितृभ्यःपितामहेभ्यःपरेभ्यो
वरेभ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यः० १८ अत्रप्रणीतोद
कस्पर्शः ॥ इत्यभ्यातानन नामहोमः ॥

भा०टी०-इन अष्टादश १८ मंत्रोंका प्रजापतिऋषि पंक्ति छंद मंत्रोक्तदेवता अभ्यातान नाम होममें विनियोगहै ॥ इ-नका अर्थ यथाक्रमसे जानना ॥

१ (मंत्रार्थ) सर्वका स्वामी अग्निदेव मुझको वेदादि अध्ययन कर्ममें और बल वीर्य वर्तमान इस विवाहमें तथा आगे होनेवाली वृद्धिमें तथा देवपूजनादिक कर्ममें मुझकी रक्षा करे यह आहुति अग्निके लिये सुहुत हो ॥

(२) सबसे बडे जो बृहस्पतिजी उनका जो अधिपति राजा होनेसे इंद्र सो मुझको०इत्यादि पूर्वोक्त अर्थ जानना १७मंत्रोंमेंही ॥

(३) मर्त्यलोकके प्राणियोंको दण्ड देनेवाला इस लिये पृथिवीका स्वामी जो धर्मराजजी वह मुझको इत्यादि+ यह आहुति देकर हाथ प्रक्षालन करे ॥

(४) आकाशगामी होनेसे आकाशका स्वामी श्रीवायु देवताजी मुझको + इत्यादि ॥

(५)संपूर्ण अंधकार नाश करनेसे दिनके स्वामी सूर्यनारायण वह मुझको + इत्यादि ॥

(६) अश्विनीसे आदि और दाक्षायण्यादि तारका चंद्रमाजीकी स्त्री है इस लिये नक्षत्रोंके स्वामी चंद्रमाजी मुझको + इत्यादि ॥

(७) महादेवजीके शिष्य बन अपार व्याकरणादि जान और अत्युत्तम संस्कृत उच्चारणादिसे बृहस्पतिजीको वेदोंका पातित्व उचितहै वह मुझको+इत्यादि ॥

(८) सत्यपदार्थका स्वामी जो मित्रदेवताजी वह मुझको +इत्यादि ॥ प्रमाण जैसे (मित्रत्वं जायते सत्यात्सत्यादेवप्रवर्द्धते । सत्यात्प्रफलते नित्यं सत्यहेतुर्हि मित्रता)॥

(९) जलोंका स्वामी वरुणदेवजी मुझको + इत्यादि ॥ प्रमाण जैसे (जलानां जलजन्तूनां पाशी धात्राधिपः कृतः) इति ॥

(१०) स्रोत्यनाम जो नल नदी नाले वहनेवाले और गंभीर दुर्वगाह उनका मालिक समुद्रजी मुझको + इत्यादि ॥

(११) (अद्यते अत्ति च भूतानि इति अन्नं) अर्थात् जिस्को मनुष्यादि भक्षण करे और जो मनुष्यादिको भक्षण करे और उत्पन्नकरे तथा पालन करे ऐसा जो अन्न परमेश्वर हस्ति हय (घोडा) गृह बाग बगीचा इत्यादि सर्व वस्तुका स्वामी वह मुझको + इत्यादि ॥

(१२) सर्वके उत्पन्न कर्नेमें सामर्थ्य सविता देवताजी मुझको+इत्यादि ॥

(१३) औषधियोंका स्वामी सोमदेवजी मुझको कामधेनुके गर्भद्वारा नंदिकेश्वरका अवतार होनेसे महादेवजीको पशुओंके स्वामी कहा जाताहै वह मुझको + इत्यादि ॥

(१४) रूपोंका स्वामी त्वष्टादेवजी मुझको०

(१५) पर्व जो आमावास्यादि चंद्रग्रहणादि दर्शपौर्णमासादि यज्ञोंका स्वामी विष्णुपरमात्मा परमेश्वरजी मुझको ० ॥

(१७) बालि होनेसे देवगणोंके स्वामी वासुदेवताजी मुझको ० ॥

(१८) देवऋषि आंगिरस भार्गव ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र और जो पिता पितामह प्रपितामहादि सनातन फिर अग्निष्वात्तादि और आधुनिक जो हमारे गोत्री वह सर्व मुझको+इत्यादि ॥ इहांभी प्रणीताजलसे स्पर्श कर्ना जिन २ देवताकी आहुतीके अनंतर जलस्पर्श कर्ना चाहिये वह प्रमाण लिखते हैं ॥ (यमो रुद्रश्च पितरः कालो मृत्युश्च पंचमः। पंच क्रूरा विवाहस्य होमे तच्छान्तिमाचरेत् ॥ प्रणीताअप्सु शान्त्यर्थं मनुःस्वायम्भुवोऽब्रवीत्) ॥

जिन अभ्यातानमंत्रोंसे देवता असुरोंको मारते भये इस लिये इनकी अभ्यातान संज्ञा भई तथाच श्रुतिः (यद्देवा अभ्यातानैरसुरानभ्यातन्वतः) इति ॥

अथाज्यहोमः ॥ ॐअग्निरैतुप्रथमोदेवतानाꣳसोस्यैप्रजांमुंचतुमृत्युपाशात् ।तदयꣳराजावरुणोनुमन्यतांयथेयꣳस्त्रीपौत्रमघन्नरोदात्स्वाहा। इदमग्नये० ॥१॥ ॐइमामग्निस्त्रायतांगार्हपत्यःप्रजामस्यैनयतुदीर्घमायुः ॥ अशून्योपस्थाजीवतामस्तुमातापौत्रमानन्दमभिप्रबुध्यतामियꣳस्वाहा॥इदमग्नये०२स्वस्तिनोऽग्नेदिवापृथिव्याविश्वानिधेह्ययथायजत्रा ॥ यदस्यांमहि दिविजातंप्रशस्तं तदस्मासुद्रविणंधेहिचित्रꣳस्वाहा। इदमग्नये० ३ सुगंनुपंथांप्रदिशन्नएहिज्योतिष्मद्धेह्यजरन्न आयुः। अपैतुमृत्युरमृतंनआगाद्वैवस्वतोनोऽभयंकृणोतुस्वाहा॥इदमग्नये० ॥४॥परंमृत्योऽनु परेहिपंथांयस्तेऽन्यइतरोदेवयानात्। चक्षुष्मतेशृण्वतेतेब्रवीमिमानःप्रजाꣳरीरिषोमोतवीरान्स्वाहा॥ इदंवैवस्वताय० ॥५॥ अत्रप्रणीतोदकस्पर्शः ॥ ततो वधूमग्रतः कृत्वा वधूवरौप्राङ्मुखौस्थितौ भवतः॥ ततोवराञ्जलिपुटोपरिसंलग्नवध्वञ्जलिपुटोपरिसंलग्नवध्वञ्जलिघृताभिघारितंवधूभ्रातृदत्तशमीपलाशमिश्रैलाजैर्वधूकर्तृकोहोमः ॥

१ अंगेपुनः पुनरिति गोडः ॥

भा०टी०-अग्निरैतु इत्यादि चार मंत्रोंका प्रजापति ऋषि त्रिष्टुप्छंद मन्त्रोक्तदेवता घृत होममें विनियोगहै ॥ (मंत्रार्थ) देवताओंमें आदि अग्नि देवता आकर इस कन्यामें आगे होनेवाली संतानको मृत्युपाशसे मृत्युसे बचावे वा मृत्युपाशको भस्म कर इस्का प्रजापुत्रादि वरुणराजाकी आज्ञासे जैसे यह स्त्रीपुत्र संबंधिदुःखसे ना रोदन करे ऐसी प्रजापुत्रादि संतानको देवे ॥ १ ॥

(इमामग्नि) अग्निहोत्र संबंधि अग्नि इस कन्याके प्रजापुत्रादिको दीर्घायुको प्राप्त करें पुत्रोंसे नहीं शून्य गोद (अंक) जिस्की वा जीवत् वत्सा हो यह स्त्री पुत्रपौत्रादि संबंधि आनंदको जाने अर्थात् भोगे ॥ २ ॥

(स्वस्ति नो) पूजन कर्नेवालोंकी रक्षा कर्नेवाली हे अग्ने पृथिवीसे आदिले स्वर्गपर्यंत जो कल्याण क्रमको छोड अर्थात् एकदाहीं हमारेमें धारणा करो॥ और पृथिवी स्वर्गमें पैदा होनेवाली महिमा वा यश नानाप्रकारके सुवर्ण मोती पद्मराग मरकत प्रवाल रजतादि द्रव्य सर्व मुझको देवो ॥

(सुगन्तु) सुखपूर्वक जाना आना जिसमें ऐसा गृह और सुखपूर्वक चिरकाल जीवन धर्मदानादि कर्नेसे यशसे युक्त जरा रोगसे रहित आयु देवो ॥ और अपमृत्यु आदि हमारे नष्ट होवें ॥ अमृत आनंद हमारेको मिले धर्मराजभी हमारेको अभय देवे अर्थात् हमारे पापका जो फल नरकादि क्लेश उनसे तुमारी कृपाद्वारा हमको बचावे॥ यह आहुति अग्निके लिये सुहुतहो ॥

(परंमृत्यो) इस मंत्रका संकर्षण ऋषि त्रिष्टुप्छंद मृत्युदेवता आज्यहोममें विनियोगहै ॥ हे मृत्युदेव ! सर्व व्यापारादिके साक्षि और सुननेवाले जिस कारणसे तुमारा देव-

मार्गसे भिन्न मार्ग है इस लिये अपने मार्गको जावो और हमारेसे आहुति पूजाले हमारी पुत्र पौत्र भ्रातादि संततीको मतमारे किंतु प्रसन्न हो रक्षा करो हम आपसे यह प्रार्थना कर्ते हैं ॥ ५ ॥ इस मंत्रसे आहुति देकर जलस्पर्श कर्ना अनंतर वरके आगे वधूको करे पूर्वकी तरफ मुख कर होमे वर वधू हवनके लिये स्थित होमे ॥ वरकी अंजलीपर वधूकी अञ्जलीरखकर कुमारीके भ्राताने दी हुई जो घृत शमीके पत्रोंसे युक्त लाजा (फूलिया) से वधू हवन करे मंत्रपूर्वक ॥

ॐअर्यमणंदेवंकन्याअग्निमयक्षत । सनोअर्यमादेवःप्रेतो मुञ्चतुमापतेः स्वाहा ॥ १ ॥ इयंनार्य्युपब्रूतेलाजानावपंतिका । आयुष्मानस्तुमेपतिरेधन्तांज्ञातयोममस्वाहा ॥ ॥ २ ॥ इमाँल्लाजानावपाम्यग्नेसमृद्धिकरणंतव । ममतुभ्यंचसंवननंतदग्निरस्तुमन्यतामियꣳ स्वाहा ॥ ३ ॥ अथास्यै दक्षिणꣳ हस्तंगृह्णातिवरः साङ्गुष्ठम् । ॐगृभ्णामितेसौभगत्वायहस्तंमयापत्याजरदष्टिर्यथासः । भगोऽर्यमासवितापुरंधिर्मह्यंत्वादुर्गार्हपत्यायदेवाः ॥४॥ अमोहमस्मिसात्वꣳसात्वमस्यमोऽहं ॥ सामाहमस्मिऋक्त्वंद्यौरहंपृथ्वीत्वम् ॥५॥ तावेवविवहावहैसहरेतोदधावहैप्रजांप्रजनयावहैपुत्रान् विंद्यावहैबहून् ॥ ६ ॥

.भा०टी०-अर्यमणंइत्यादि तीनमंत्रोंका दध्यङ्ङाथर्वण-ऋषि अनुष्टुपछंद अग्निदेवता लाजाहोममें विनियोगहै ॥

(मंत्रार्थ)

(अर्यमणं) यह पूर्वकन्या सूर्यदेवकी पूजनादि कर्ती भई वह सूर्य भगवान् प्रसन्न होकर पितृकुलसे श्वसुर गृहयानेके लिये मोचन करे नहीं मुझपतिसे भिन्न करे ॥ १ ॥ यह तीन मंत्र वरकन्यासे कहावे ॥

(इयंनार्य्युप) संतानप्राप्तिके लिये सूर्यदेवको प्रसन्नकर। लाजाको अग्निमें गेरती हुई यह स्त्री पतिको सुंदरवाणीसे कहती है ॥ कि मुझका पति वीर्यपुष्टियुक्त चिरायुवाला होवे और मेरे बांधव ज्ञातिके लोक पित्रादि मातुलादि सब वृद्धिको प्राप्त होवें ॥ २ ॥

(इमाँल्लाजान्) हे पति तुम्हरि समृद्धिके लिये यह लाजा अग्निमें गेरतीहै। और हमारी. तुमारी प्रीतिको अग्नि सर्वांतर्यामी अनुमोदन करे अर्थात तुमारी प्रीति हमसे सदा अवछिन्न रहें ॥ ३ ॥

(अनंतर वर वधूका साथ अंगुष्ठसे हस्तग्रहण करे)(मंत्रार्थ) (गृभ्णामि) (हेपत्नि तुमारे हाथको ग्रहणकर्ता है) जिस हाथके ग्रहणकर्नेसे तुम बहुतवर्ष जीवित रहो॥शंका+ आप किसकी आज्ञासे पाणि ग्रहण कन्याका कर्तेहैं। उत्तर-गार्हपत्यादि कर्मोंके कर्नेलिये भग अर्यमा-साविता और संतान तथा आनंदके लिये सुंदररूपवती तुमको मुझे देने भये इस हेतुसे हम आपको ग्रहण कर्तेहैं ॥ ४ ॥

(अमोहमास्मि) इस मंत्रका भरद्वाज ऋषि उष्णिक् छंद विष्णुदेवता हाथके ग्रहणमें विनियोगहै॥अर्थ हेपत्नि!मैं अम नाम विष्णु वा वेदत्रयात्मकहूं और तुम सा नाम लक्ष्मी वा देवीत्रयरूप अर्थात् ब्रह्माणी रुद्राणी वैष्णवीहै। प्रमाण जैसे (ओविष्णुरःशिवः प्रोक्तः प्रपंचे अः स्मृतस्तथा) (साचलक्ष्मी बुधैःप्रोक्ता) और वेदानां सामवेदोस्मि इस वाक्यसे

मुख्यता होनेसे मैं सामवेदहूं॥.और ऋक् शब्दको स्त्रीलिं-
गहोनेसे तुम ऋग्वेदहो प्रमाण (स्त्रियामृक् सामयजुषी इ-
त्यमरः) और मैं आकाशरूप तुम पृथिवीरूपहै ॥ भावार्थ
कि जैसे आकाश पृथिवीपर छादितहै तद्वत् मैंभी अपने गु-
णोंसे तुमारेपर छादित रहा अर्थात् तुम हमारे अधीन रहे
और जैसे पृथिवी छेदन भेदन की हुई और भारसे दबाई
हुई अग्निसे दग्धकी हुई शांतिस्वभाव होनेसे कुछ नहीं क-
हती तद्वत् मेरे घर तुम श्वश्रू(सास) ननद आदिकर उपा-
लम्भ कटु वचनो प्राप्तभई भी उन्को कुछ निषिद्धवाणी ना
कहे किन्तु उनकी सेवाकरे ॥ इस मंत्रको लेकर दृष्टांतदेते
हैं यथा"शुश्रूषस्व गुरून् कुरु प्रियसखीवृत्तिं सपत्नीजने भ
र्तुर्विप्रकृतापि रोषणतया मास्मप्रतीपंगमः ॥ भूयिष्ठं भव
दाक्षिणा परिजने भाग्येष्वनुत्सेकिनी यान्त्येवं गृहीणीपदं
युवतयो वामाः कुलस्याधयः॥"शकुंतलाके श्वशुरकुलगमन-
कालमें इस वेदमंत्रका आशयलेकर भगवान्काश्यपजी
शकुंतलाको उपदेश कर्तेहैं कि हे शकुंतले तुम इहांसे जा-
कर अपने श्वशुर सास सौहरा पतीं सपतयोंहरा इत्यादि
जो २ गुरुजन उन्की सेवा कर्नी और सपत्नीमें भी मित्र-
ता भगिनीवत् कर्नी यदि तुमारा भर्ता किसीकारणसे तु-
मपर क्रुद्धहो दुर्वचनभी कहे तो आपने कुछ नहीं कहना
परंतु उस्का क्रोध मधुरवचनोंसे निवृत्त करना और जो परि-
जन नौकर चाकर दास दासी उनमें चतुर(चुस्त) रहना
(और किसीकी उन्नती देख शोच नहीं करना) इत्यादिक
श्रेष्ठ आचारसे स्त्रियां सर्व वस्तुकी मालिकप्रिय होतीहैं
व्यतिरिक्त स्त्रीकुलोंमें एकमानसिक रोगहोती तथा नि-
रादरको प्राप्तहोतीहै इति ॥ आगेभी स्त्रियोंका आच-
रण कहेंगे ॥

(मंत्रार्थ-तांवेव) तुम हम विवाह अर्थात् ऋषिवाक्य वेदद्वारा मंत्रबलसे कन्याको वरके गोत्रमें मिलाना और प्रीतिभाव कर्नेको विवाह करते हैं इसको करे ॥ अनंतर विवाहके तुम हम पुत्रोत्पत्तिके लिये वीर्य धारण कर बहुत पुत्रोंको प्राप्त होंमें ॥ ६ ॥

तेसन्तुजरदष्टयः संप्रियौरोचिष्णूसुमनस्यमानौ ॥ पश्येमशरदःशतंजीवेमशरदःशतꣳशृणुयामशरदः शतमिति ॥ ७ ॥ ॐआरोहेममश्मानमश्मेवत्वꣳ स्थिराभव ॥ अभितिष्ठतपृतन्यतोऽववाधस्वपृतना यतइति ॥ अथगाथांगायति ॥ सरस्वतीप्रेदमवसुभ गेवाजिनीवति ॥ यांत्वाविश्वस्यभूतस्यप्रजायामस्या ग्रतः । यस्यांभूतꣳसमभवद्यस्यांविश्वमिदंजगत् । तामद्यगाथांगास्यामियास्त्रीणामुत्तमंयशइति ॥ अ थवधूवरौअग्निप्रक्रामयतस्तुभ्यमग्रेइतिमंत्रेणेति ॥

ऋ० मं० १० अ० ७ सू० ८५ मंत्र ३८ ।

तुभ्यमग्रेपर्य्यवहन्त्सूर्यांवहतुनासह । पुनःपतिभ्योजायांदाअग्नेप्रजयासहेतिप ठन् परिक्रामेत् ॥ १० ॥

भा०टी०-ते संतु इस मंत्रका प्रजापति ऋषि यजुःछंद विष्णुदेवता हस्तग्रहणमें विनियोग है ॥ मंत्रार्थ वह पुत्रपौत्रादि चिरंजीवी होंमें और तुमहम प्रेमयुक्त सुमन पुत्रादि सहित शत १०० वर्ष रूपग्रहणमें (देखनेमें) तथा श्रवण कर्नेमें सामर्थ्य जीवित रहे ॥ ७ ॥

आरोहेम:इस मंत्रका अथर्वण ऋषि अनुष्टुप्छंद वधूदेवता अश्म (शिला) के आरोणहमें विनियोग है ॥ (मंत्रार्थ) हे पति तुम पाषाणवत .निश्चलहो और हमारे शत्रुकी सेनाको उद्यमवालीको निरुद्यम करो ॥ ८ ॥

कन्याके पाषाणपर स्थित होनेमें गाथा गायन करे वर ॥ सरस्वतीप्रेद इस मंत्रका विश्वावसु ऋषि अनुष्टुप्छंद सरस्वती देवता गाथाके गायनमें विनियुक्त है ॥ (मंत्रार्थ) हेवाणिरूप सरस्वती कल्याण गुण विशिष्ट अन्नादिके देनेवाली अन्नपूरणे तुम यह वधूरूप द्वंद्वोंकी रक्षा करो तुमकोही इस पृथिव्यादिसर्व प्रपंचजातकी कारणरूप प्रकृति कहते हैं कि जिसमें विश्व लयको प्राप्त होती तथा सृष्टिके आदिमें उत्पन्न होती हैं प्रमाण सांख्यतत्वकौमुदी. कारिका६२॥तस्मान्न बध्यतेऽसौन मुच्यते नापिसंसरतिकश्चित् । संसरति बध्यते मुच्यते च नानाश्रयाप्रकृतिः ॥ अर्थ-की पूर्वोक्त जो अनुपकारि पुरुषमें उपकार करनेवाली प्रकृति तिस्के अर्थको नष्ट कर आचरण कर्ती है इसलिये पुरुष ना बंधहोता नात्यंत मुक्त होता ना जन्मता मरता है परंतु प्रकृति नानाश्रय मुक्तकर्ती बंधनकर्ती उत्पन्नकर्ती है ॥ (असङ्गोयं पुरुषः) यह सांख्यसूत्रमें भी लिखाहै ॥ विस्तारके भयसे व्याख्या नहि कर्तेहैं और हम उस गाथाको गान कर्तेहैं जो स्त्रियोंकी उत्तम पतिव्रतादि यशहै ॥ ९ ॥

अनंतर तुभ्यमग्ने इस मंत्रसेमे वधू वर अग्निकी परिक्रमा करे ॥ तुभ्यमग्ने इसमंत्रका अथर्वण ऋषि अनुष्टुप् छंद अग्निर्देवता प्रदक्षिणामें विनियोगहै ॥ (मंत्रार्थ) हे अग्ने तुमारे लिये ही सोमादिदेवता इस कन्याको ग्रहण कर्ते भये ॥ अर्थात् २ वर्ष चंद्रमा पालन कर सौंदर्यताको दे गंधर्वको देता भया वह २ वर्ष पालन कर सुंदर कंठ वाणी-

को दे तुमारेको देता भया तुमभी तद्वत् पालन कर ६वर्ष पर्यंत और पवित्रताको देकर मुझको देवे अर्थात् हे अग्ने पालनके अनंतर पुत्रादि दे मुझ भर्ताके साथ मिलामें ॥

एवंपश्चादग्नेःस्थित्वालाजाहोमसाङ्गुष्ठहस्तग्रहणाश्मरोहणगाथागानाग्निप्रदक्षिणानिपुनरपिद्विस्तथैवकर्तव्यानीति ॥ एतेननवलाजाहुतयःसाङ्गुष्ठहस्तग्रहणत्रयेचसंपद्यते।तथाआसनविपर्ययः।ततोऽवशिष्टलाजैः कन्याभ्रातृदत्तैरञ्जलिस्थशूर्पकोणेनवधूर्जुहोति ॥ ॐभगायस्वाहा—इदंभगाय० ॥ अथाग्रेवरः पश्चात्कन्यातूष्णीमेवचतुर्थपरिक्रमणंकुरुतः । ततोवरउपविश्यब्रह्मणान्वारब्धःआज्येनप्राजापत्यंजुहुयात् ।ॐप्रजापतयेस्वाहा इदंप्रजापतये०इतिमनसा॥ अत्रप्रोक्षणीपात्रेआहुतिशेषाज्यप्रक्षेपः ॥ ततआलेपनेनोत्तरकृतसप्तमण्डलेपुसप्तपदाक्रमणंवरःकारयेत् । वक्ष्यमाणमंत्रैः ॥

भा०टी०–इस प्रकार अग्निके पीछे स्थित हो लाजा हवन साथ अंगुष्ठके हस्त ग्रहण अश्मारोहण गाथाका गान अग्निकी प्रदक्षिणा फिर दोवार कर्नी चाहिये ॥ अर्थात् पूर्वोक्त तीन २ वार कर्तव्यहै ॥ और आसनका बदलाना एकवार चाहिये शेषकन्याके भ्राताने दीहुई लाजोंसे शूर्पकी कोनसे वधू हवन करे भगायस्वाहा इसमंत्रसे ॥ फिर आगे वर पीछे कन्या चुपचापसे चतुर्थ परिक्रमण करे ॥ प्रजाप० इस्को मनसे कहे और इस हवनमें आहुतिशेषघृत कापप्रो-

क्षणीपात्रमें प्रक्षेप करै अनंतर आलेपन (वटना) से उत्त-रोत्तर क्रम सप्तमण्डलको वर आक्रमण करवावे वधूसे ॥

ॐएकमिषेविष्णुस्त्वानयतु ॥ द्वेऊर्ज्जेविष्णुस्त्वानंयतु ॥ त्रीणिरायस्पोषायविष्णुस्त्वानयतु । चत्वारिमायोभवायविष्णुस्त्वानयतु। पञ्चपशुभ्योविष्णुस्त्वानयतु । षड्ऋतुभ्योविष्णुस्त्वानयतु॥ सखेसप्तपदाभवसामामनुव्रताभवविष्णुस्त्वानयतु ॥ ततोऽग्नेःपश्चादुपविश्यपुरुषस्कंधे स्थितात्कुम्भादाम्रपल्लवेन जलमानीयतेनवरोवधूमभिषिञ्चति ॥ ॐआपःशिवाःशिवतमाःशांताःशान्ततमास्तेकृण्वन्तुभेषजमिति । अनेनपुनस्तथैवतस्मादेवकुम्भात्तथैवानीतजलेन

य० अ० ११ मं० ५ ॥

आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऊर्ज्जेदधातन ॥ महेरणायचक्षसे ॥ योवःशिवतमोरसस्तस्यभाजयतेहनः॥उशतीरिवमातरः ॥ तस्माऽअरङ्गमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ ॥ आपोजनयथाचनः ॥ इतितिसृभिर्वधूमात्मानंचाभिषिञ्चति॥इति॥

भा०टी०–विष्णुरूप मैं तुमको अन्नादि प्राप्तिके लिये एकपद आक्रमण कराताहै ॥ प्रसन्न हो वधू यहकहै (धनंध

न्यंचामिष्टान्नं व्यञ्जनाद्यंचयद्गृहे । मदधीनंचकर्तव्यं वधूराद्ये पदेवदेत्)॥ १॥

विष्णुस्वरूप हम बलके लिये द्वितीयपद आक्रमण कराते है॥ फिर वधू यह कहै। (कुटुंबंप्रथयिष्यामि तेसदामञ्जुभाषिणी। दुःखेधीरासुखेहृष्टा द्वितीयेसाब्रवीद्वरम्)॥२॥विष्णुस्वरूप हम धन पुष्टिके लिये तुमारा तृतीय पदाक्रमण कर्ते हैं॥ अनंतर वधू यह कहे (ऋतौकालेशुचिःस्नाता क्रीडयामि त्वयासह। नाहंपरपतिंयायांतृतीयेसाब्रवीद्वरम्) ३

चतुर्थपदको विष्णुस्वरूप हम सुखकी प्राप्ति लिये आक्रमण कराते हैं॥फिर वधू यह कहै।(लालयामिचकेशान्तं गन्धमाल्यानुलेपनैः।काञ्चनैर्भूषणैस्तुभ्यं तुरीयेसाब्रवीद्वरम्॥) ॥४॥विष्णुस्वरूप हम पशुसुख गौ महिषी इत्यादिका दुग्ध दधिघृतभक्षणरूप और अश्वादि आरोहणके लिये पंचमपदको आक्रमण कराते है॥ वधूभी यह वाक्य कहे ॥(सखीपरिवृता नित्यं गौर्य्याराधनतत्परा। त्वयिभक्ताभविष्यामि पंचमे साब्रवीद्वरम्)॥५॥विष्णु स्व०हम छः(षट्)ऋतुओंके सुख भोगने लिये तुमारा पदाक्रमण कर्ते हैं॥वधूवाक्य जैसे-(यज्ञेहोमेच दानादौ भवेयंतववामतः। यत्रत्वंतत्रतिष्ठामि पदेषष्ठेऽब्रवीद्वरम्)॥ ६ ॥

मुझकी आज्ञामें होकर पतिव्रतादि धर्मशीलसे तुम सप्तलोकमें प्रख्यात हो जैसे अरुंधति जानकी इत्यादि पतिव्रता हो अद्यपर्यन्त सप्तलोकमें प्रसिद्ध है ॥ ७॥ इति सप्तपदाक्रमणमंत्रः ॥

अनंतर पश्चिम अग्निके स्थित हो पुरुष स्कंधस्थित घटसे आम्रपत्रसे जल लेकर वर वधूका मस्तक अभिषिंचन कर्ता है (आपः शिवा इत्यादि मंत्रोंसे) आपःशिवा इस मंत्रका

प्रजापतिऋषि यजुछन्द जलदेवता अभिषेचनमें विनियोग है (मंत्रार्थ) कल्याणहेतु अतिशयसे कल्याणकारक और शीतल अतिशयसे शान्ति करनेवाले जलदेव तुमारेको आरोग्य करें॥ ॥ आपोहिष्ठादि तीनमंत्रोंका सिन्धुद्वीपऋषि गायत्रीछंद जलदेवता मार्जनमें विनियुक्तहै ॥ (मंत्रार्थ) हे जलदेव! प्रसिद्ध यश और अनुभव किये तुम मुझको बलके लिये अन्नादि भोगनेलिये धारण करे और महान् सुंदर देखने योग्य अत्यंत कल्याणके देनेवाले बलपुष्टि करनेवाले दुग्ध घृत स्तन्यपानादिसे माताकी न्याई आप मुझको रस देवें और जिस पापके नाशलिये उत्पन्न कर्तेहैं तिसरसके लिये हमशीघ्र जाते है॥हे जलदेव ! आप मोक्षप्राप्तिकेलिये योग्य हमको उत्पन्न करो अर्थात् तुम्हारी कृपा और आचरणसे शौचादिसे हमको मोक्षहो ॥ प्रमाण जैसे पातंजलदर्शन-योगसूत्रमें (शौचात्स्वांगेजुगुप्सापरैरसंसर्गः) इति ॥

तत्सूर्यमुदीक्षसेतिवधूंसंबोधयातिवरः ॥ तच्चक्षुरित्यृचंपठित्वावधूःसूर्यपश्येत् ॥ मंत्रोयथा ॥

यजु० अ० ३६ मंत्र २४ ॥

तच्चक्षुर्देवहितम्पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येमशरदः॑शतञ्जीवेमशरदः॑शतꣳश्रृणुयामशरदः॑शतम्प्रब्रवामशरदः॑शतमदीनाःस्यामशरदः॑शतम्भूयश्चशरदः॑शतात् ॥

इतिपठित्वासूर्यंपश्यति ॥ अस्तंगतेसूर्य्येध्रुवमुदीक्षस्वइतिप्रैपानन्तरंध्रुवंपश्यामीतिब्रूयात् । तत्रवर पठनीयोमंत्रः ॥ ॐध्रुवमसिध्रुवंत्वापश्यामिध्रुवैधि पोष्यामयिमह्यंत्वादाद्बृहस्पतिर्मयापत्याप्रजावती सञ्जीवशरदःशतमिति पठेत् ॥

भा०टी०–सूर्यको देखो यह वर वधूको कहे तच्चक्षु इस मंत्रको पढ वधू सूर्यको देखे तच्चक्षु इस मंत्रका दध्यङ्ङाथर्वण ऋषि अक्षरातीतिपुरउष्णिकछंदः सूर्य देवता सूर्यके उपस्थानमें विनियोगहै ॥

(मंत्रार्थ) स्वाहा स्वधाप्रभृति संपूर्ण देवता और पितर जिसके उदय होनेसे तृप्त होते हैं ऐसा देवहित और नेत्रोंसे होनेसे चक्षु जो सूर्यभगवान् प्रमाण यजु० अध्याय ३१(चक्षोः सूर्यो अजायत) अर्थ विराड् भगवान्के नेत्रसे सूर्य जो भये ॥ आदिमें कामादि और अविद्यादि दोषरहित उदयको प्राप्तहो ऊर्ध्वको जाता है उस सूर्यभगवान्को हम शत १०० वर्ष देखे और जीवत रहे कर्णोंसे यश श्रवण करे वाणीसे श्रेष्ठस्तुत्यादि करे और अदीन रहकर शत १०० वर्षसे अधिक वीस वर्ष जीवत रहे प्रमाण पूर्णायुमें जैसे-बृहज्जातके (समाषष्टिर्द्विघ्नामनुजकरिणांपंचचनिशा) इस प्रमाणसे १२० वर्ष और पंचरात्र मनुष्यकी पूर्णायुहै रात्रिमें ध्रुवजीको दर्शन करे वरमंत्रको पढे ध्रुवमसि इस मंत्रका परमेष्ठिऋषि पंक्तिछंद प्रजापतिदेवता ध्रुवजीके दर्शनमें विनियुक्तहै ॥

(मंत्रार्थ) हेध्रु व!तुम सदैव रहनेवाले नि-ल हो इसलिये तुमका दर्शन कर्ते हैं (भाव.) जैसे ध्रुवजी निश्चलहै तद्वत तुम निश्चल हो और मेरे पुत्रपौत्रादिके पुष्टि कर्नेवाली हो

इसलिये प्रजापति ब्रह्माजी मुझको देते भये मेरेसे युक्त प्रजापति तुम शतवर्ष जीवित रहो ॥ यदि वधूकी दृष्टिमें ध्रुव ना आवे तो देखतीहूं यह कहदे ॥

अथ वरोवधूदक्षिणांसस्योपरिहस्तंनीत्वातस्याहृदयमालभेत् । मंत्रोयथा॥ममव्रतेतेहृदयंदधातुममचित्तमनुचित्तंतेऽस्तु ॥ ममवाचमेकमनाजुषस्वप्रजापतिष्ट्वानियुनक्तुमह्यमितिमंत्रेण । अथवधूमभिमन्त्रयतिवरः ॥ सुमङ्गलीरियंवधूरिमाᳪ᳭समेतपश्यत । सौभाग्यमस्यैदत्वायाथास्तंविपरेतनेति ॥ अथस्विष्टकृद्धोमः॥ ॐअग्नयेस्विष्टकृतेस्वाहा इदमग्नयेस्विष्टकृते० ॥ अत्रस्रुवावशिष्टाज्यस्यप्रोक्षणीपात्रेप्रक्षेपः॥ अयञ्चहोमो ब्रह्मणान्वारब्धकर्तृकः॥अथसंस्रवप्राशनं। ततआचम्यपूर्णपात्रंदक्षिणांब्रह्मणेदद्यात् ॥ ॐअद्यकृतैतद्विवाहहोमकर्म्मणिआचार्य्यकर्मप्रतिष्ठार्थंइदंहिरण्यमग्निदैवतद्रव्यं यथानामगोत्रायाऽमुकशर्म्मणेब्राह्मणायदक्षिणांतुभ्यमहंसंप्रददे ॥ ततोब्रह्मग्रंथिविमोकः ॥

भा०टी०–वर वधूके दक्षिणअंसपर हस्तको रख हृदयको स्पर्शकरे ममव्रते इसमंत्रका परमेष्ठि ऋषि त्रिष्टुप्छन्द प्रजापति देवता हृदयके स्पर्शमें विनियोगहै (मंत्रार्थ) मेरे शास्त्रविहित नियमाचरणमें तुम्हारे हृदयको प्रजापति धारण करे और मेरे चित्तके अनुकूल तुम्हारा चित्त होवे और मेरे वचनको सुखपूर्वक करो । अनंतर वधूको अभिमंत्रण

करे वर सुमङ्गली इस मंत्रका प्रजापतिऋषि अनुष्टु-
पूछंद विवाहाधिष्ठातृदेवता अभिमंत्रणमें विनियोगहै ॥
(मंत्रार्थ) हे विवाहाधिष्ठातृदेवता! गौरी पद्मा शची प्रभृत-
या यह सुमंगलयुक्त वधूको मिल इसको दृष्टिसे देखे और
इसको सौभाग्य पुत्रपौत्रादि देकर पुनः आनेके लिये जाओ॥
(ॐअग्नये स्विष्टकृते) इस मंत्रसे आहुति देकर स्रुवालग्न घृ-
तको प्रोक्षणीपात्रमें गेरना और यह होम ब्रह्माका अन्वा-
रब्ध कर कर्ना संस्रव प्राशन कर्ना अनंतर आचमन कर पू-
र्णपात्र दक्षिणा ब्रह्माको देवे संकल्पकर ब्रह्मा स्वस्ति कहे ॥
अनंतर ब्रह्मग्रंथि खोलदेनी ॥ अथ पुष्पाञ्जलयः ।

अत्रग्रामवचनंचकुर्युः ॥ ॐ सुमित्रियानआपओष
धयःसन्तुइतिप्रणीताजलेनपवित्रेगृहीत्वाशिरःसंमृज्य
दुर्मित्रियास्तस्मैसन्तुयोऽस्मान्द्वेष्टियञ्चवयंद्विष्मः ॥
इत्यैशान्यांसपवित्रांसजलांप्रणीतांन्युब्जीकुर्यात् ॥
ततस्तरणक्रमेणबर्हिरुत्थाप्यआज्येनावधार्यवक्ष्य
माणमन्त्रेणहस्तेनैवजुहुयात् ॥

य० अ०८ मं० २१ ॥

ॐदेवागातुविदोगातुंवित्त्वागातुमित । म
नसस्पतऽइमंदेवयज्ञᳬस्वाहावातेधाः
स्वाहा ॥ इति बर्हिर्होमः ॥

ततउत्थायवध्वादक्षिणहस्तेनस्पृष्टैः स्रुवस्थघृतपु
ष्पफलैःपूर्णाहुतिंकुर्यात् ॥ मूर्द्धानमितिमंत्रस्यभ

रद्वाजऋषिर्वैश्वानरोदेवता त्रिष्टुप्छंदः पूर्णाहुतिहोमे विनियोगः ॥

यजु अ० ७ मं०२४ ॥

ॐमूर्द्धानंदिवोऽअरतिम्पृथिव्यावैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् । कविᳬसम्राजमतिथिंजनानामासन्नापात्रंजनयन्तदेवाः स्वाहा ॥

इदमग्नये० ॥ ततउपविश्यस्रुवेणभस्मानीयदक्षिणानामिकाग्रेण ।

य० अ०३ मं० ६२ ॥

त्र्यायुषंजमदग्नेःइतिललाटे । कश्यपस्यत्र्यायुषम् इतिग्रीवायाम् । यद्देवेषुत्र्यायुषं इतिदक्षिणबाहुमूले तन्नोऽअस्तुत्र्यायुषम् इतिहृदये ॥

अनेनैवक्रमेणवध्वाअपित्र्यायुषंकुर्य्यात् । तत्रतन्नो इत्यत्रतत्ते इति विशेषः ॥

भा०टी०-नगरका आचार करै कुलरीति जैसे सुमित्रियान इस मंत्रका विश्वामित्रऋषि अनुष्टुप् छंद मित्रदेवता मार्जनमें विनियुक्तहै ॥ (मंत्रार्थ) जल और औषधी हमारिको

परमसुख देवे इस मंत्रसे शिरको जलसिञ्चन करे ॥ और जो हमारेसे द्वेष कर्ता जिसको हम शत्रु मानते हैं इसको जल औषधी दुःखको दे इस मंत्रसे साथ जलके प्रणीताको साथ जलसे न्युब्ज (पुठो) करे ईशानमें ॥ अनंतर पूर्वोक्त आस्तरण क्रमसे कुशा उठाय घृतसे युक्त कर देवागातु मंत्रपढ हाथसे हवन करे ॥ (देवागातु इस मंत्रका अर्थ) ॥ हेदेवता लोक तुम यज्ञके जाननेवाले है इस लिये विष्णुरूप यज्ञको जान कर सुखपूर्वक् जाओ । हे अंतर्यामि ब्रह्मस्वरूप यह यज्ञफल तुमारे अर्पण किया जाताहै तुम वायुको अर्पण करो ॥ अनंतर उठकर वधूके दक्षिण हाथसे युक्त स्रुवपर घृत पुष्प फल रख मूर्द्धानं इस मंत्रसे पूर्णाहुति देवे । मूर्द्धानं इस मंत्रका भारद्वाजऋषि अग्निदेवता त्रिष्टुपछंद पूर्णाहुति होममें विनियुक्त है ॥ (मंत्रार्थ) स्वर्गादि लोकसे ऊपर पृथिव्यादि पांचभूतोंसे विरिक्त ब्रह्माण्डको प्रकाश कर्नेवाला ईश्वर सत्यरूप जन्मादि षड्भाव रहित निर्विकार प्रकाशमान् सर्वज्ञ परमानंद तीन कालसे रहित सृष्टिलयसे प्राणियोंका पात्रभूत और जो देवताको उत्पन्न कर स्वस्वव्यापारमें लगाताहै तिस परमेश्वरके लिये यह आहुति सुहुत हो ॥ बैठकर स्रुवसे भस्मको लै दक्षिण अनामिकासे ललाट१ग्रीवा२दक्षिणबाहु३ हृदयमें४यथाक्रम त्र्यायुषं इसमंत्रसे लगावे वर और वधूके लगानेमें तन्नो इस स्थानमें तत्ते यहपढे॥

अथ क्षेपकम् ॥

सुमंगलीकरणानंतरंसमाचाराद्वधूंवरस्यवामभागेउपवेशयंति ॥ वरस्यवामांगेउपविष्टाकन्यावरंप्रतिप्रतिज्ञावचनानिब्रूते॥कन्योवाच ॥तीर्थव्रतोद्यापनयज्ञदानंमयासह त्वं यदिकिंनकुर्याः । वामांगमायामितदा

त्वदीयंजगादवाक्यंप्रथमंकुमारी॥हव्यप्रदानैरमरान् पितॄंश्चकव्यप्रदानैर्यदिपूजयेथाः । वामांगमायामित दात्वदीयंजगादकन्यावचनंद्वितीयम् ॥ कुटुंबरक्षाभ रणेयदित्वंकुर्याःपशूनांपरिपालनंच । वामांगमाया मितदात्वदीयंजगादकन्यावचनंतृतीयम् ॥ आयव्य यौधान्यधनादिकानांपृष्ठानिवेशेप्रगृहंनिदध्याः । वा मांगमायामितदात्वदीयंजगादकन्यांवचनंचतुर्थम् ॥ देवालयारामतडागकूपवापीर्विदध्यायदिपूजयेथाः । वामांगमायामितदात्वदीयंजगादकन्यावचनंचपंचमम् ॥ देशांतरेवास्वपुरांतरेवायदाविदध्याःक्रयविक्रयौ त्वम्।वामांगमायामितदात्वदीयंजगादकन्यावचनंच षष्ठम् ॥ नसेवनीयापरपारकीया त्वयाभवोद्भाविनी कामिनीति ॥ वामांगमायामितदात्वदीयंजगादक न्यावचनंचसप्तमम् ॥ वरउवाच ॥ मदीयचित्तानुगतं चचित्तंसदामदाज्ञापरिपालनंच । पतिव्रताधर्मपरा यणात्वं कुर्याःसदासर्वमिमंप्रयत्नम् ॥ इतिमिथःप्रति ज्ञांकुर्वीयाताम् ॥ अत्रावसरेवध्वाःसीमंतेवरःसिंदूरं ददाति ॥

ॐवामद्यसवितर्वाममुश्वोदिवेदिवेवाम मस्मभ्यंसावीः ॥ वामस्यहिक्षयस्य

१ यह मंत्र यजुर्वेद अध्याय ८ अनु० २ मंत्र ६ ॥

देवभूरैरय्याधियावामुभाजःस्याम ॥

दक्षिणतउहैकऽउपदधातितदेताः पुण्यालक्ष्मीर्दक्षिणतोदध्म इति ॥ तस्माद्यस्यदक्षिणतोलक्ष्मभवति तंपुण्यलक्ष्मीक इत्याचक्षतऽउत्तरतः स्त्रियाउत्तरतऽआयतनाहिस्त्रीतत्तत्कृतमेवपुरस्तात्त्वैवेनाऽउपदध्याद्यत्राहैवशिरस्तदेवहनूताञ्जिव्हाथैताः पुण्याःलक्ष्मीर्मुखतोधत्तेतस्माद्यस्यमुखेलक्ष्मभवतितंपुण्यलक्ष्मीकइत्याचक्षते॥ इतिवरःपठेत् ॥ अथपतिपुत्रान्विताश्चतस्रःस्त्रियःसुभगास्तस्यैवध्वै सौभाग्यंदद्युः।ॐ गौर्य्याःसावित्र्यास्तवसौभाग्यंभवतु इतिवधूदक्षिणकर्णेताभिर्वक्तव्यमिति अत्रैवचविवाहादूर्द्ध्वंचतुर्थीकर्मतः पूर्वअरुंधतीदेवीपूजनीया इरणीदेवताकवंशपात्र (सुहागपटारी) दानम् ॥

इति क्षेपकम् ॥

ततआचारात्शणशङ्खशर्मीपुष्पार्द्राक्षतारोपणंसिंदूरकरणंवरःकुर्यात् ॥ अथवेदितोमण्डपमागत्य दूर्वाक्षतादिग्रहणम् ॥ ततस्त्रिरात्रमक्षारालवणाशिनौ अधःशायिनौनिवृत्तमैथुनौभवतः। प्राङ्मुखौवधूवरौ स्थितौभवतः ॥ इति श्रीपदक्रमजटावनाद्यखिलवेदवेदाङ्गन्यायमीमांसादिशास्त्रसंपन्नअपारमहिमाविराजितश्रीमच्छ्रीगणेशसूनुश्रीरामदत्तकृतावाजसने

यीयजुर्वेदीयकात्यायनसूत्रवतांविवाहपद्धतिःसमाप्ता ॥ शुभंभूयात् । श्री श्री श्रीः ॥

भा॰टी॰–आचारसे शण शंख शमी पुष्प भिगेचावलका और सिंदूरका मस्तकपर कन्याके चढाना ॥ और ग्रामके वचनको वर करे ॥ अनंतर वेदिसे मंडपको आकर दूर्वाक्षत ग्रहण कर्ने बाद तीनरात्र लवणक्षार भोजन मैथुन नहि कर्ना और भूमिशयन प्राङ्मुख होकर बैठना होगा ॥ प्रमाण जैसे गृह्यसूत्रमें (त्रिरात्रमक्षारालवणाशिनौस्यातामधःशयीतांसंवत्सरं नमिथुनमुपेयातां द्वादशरात्रं षड्रात्रंत्रिरात्रमन्ततः) इति श्रीगुरुदेवद्विजगोचरणसेवककाव्यनाटकनीतिसाहित्यज्योतिषचिकित्सादि प्रवीण शिक्षा सूत्र व्याकरण छंदयुक्त शुक्लयजुर्वेदाध्यायी गौतमगोत्र (शोरि) ज्ञातिसम्भूत विपाशाशतद्रुरंतर्गतश्रीमहाराज जगज्जीतसिंहरक्षित राजधानी कर्पूरस्थलानिवासी श्रीघनैयारामशर्मणः प्रपौत्रः श्रीतुलसीरामशर्मणः पौत्रः श्रीदैवज्ञदुनिचंद्रात्मजश्रीयुतकरुणासिंधुसर्वबंधुश्रीपण्डितविष्णुदत्तवैदिककृतविवाहपद्धतिटीका विक्रमार्कात् ऋषिवेदांकभूमिते १९४७ वर्षे मधुमासे रामनवम्यां तिथौ रात्रौ समाप्तिमगात् ॥ तच्च शुभं भूयात् श्रीरामचंद्रप्रसादात् विप्राज्ञयाच ॥

प्रार्थना ।

यदशुद्धमसंबद्धमज्ञानाच्चकृतंमया । विद्वद्भिःक्षम्यतांसर्वं बालत्वादयमञ्जलिः ॥ सूर्याचन्द्रमसौ यावत् पृथ्वी विश्वस्य धारिणी ॥ विवाहपद्धतेष्टीकातावत्तिष्ठतमेकता ॥ श्रीः नमोगणपतये ॥ श्रीः ॥

(इति षष्टप्रकरणम्)

अथ सप्तमप्रकरणम् ।

ॐस्वस्तिश्रीगणेशाय नमः॥ अथचतुर्थीकर्मप्रारभ्यते ॥ तत्रचतुर्थ्यामपररात्रेचतुर्थीकर्म तच्चगृहाभ्यन्तरएवकार्य्यम् । ततउद्वर्तनादिकृत्वायुगकाष्ठउपविश्यवधूवरौप्राङ्मुखौभवतः ॥ गणपत्यादिदेवतापूजनम्॥ततः कुशकण्डिकाप्रारम्भः॥तत्रक्रमः ॥ जामातृहस्तपरिमितांवेदींकुशैः परिसमूह्यतान्कुशानैशान्यांनिक्षिप्यगोमयोदकेनोपलिप्यस्फ्येनस्रुवेणवाप्रागग्रप्रादेशमात्रत्रिरुत्तरोत्तरक्रमेणोल्लिख्य उल्लेखनक्रमेणअनामिकाङ्गुष्ठाभ्यामृदमुद्धृत्य । जलेनाभ्युक्ष्य तत्रतूष्णींकांस्यपात्रेणाग्निमानीयस्वाभिमुखंनिदध्यात्।

टीका-विवाहके अनंतर चतुर्थीकर्म लिखते हैं। विवाहकी रात्रिसे चतुर्थरात्रमें-चतुर्थीकर्म गृहके अंतरमें कर्ना चाहिये ॥ और उद्वर्तन (बटना) आदिकर्म कर युगकाष्ठ अर्थात् हलपजालिपर बैठ स्नान कर शुद्ध वस्त्रको शुभवस्त्र आदि धारण कर घरमें प्रवेश हो वधूवर पूर्वमुख होकर बैठे और गणपति षोडश १६ मात्रा नवग्रहादि विवाहवत् सर्वपूजा करे ॥ अनंतर कुशकण्डिका कर्नी। तिसमें विधि यह है जामातृके हस्त ४ सदृश वेदि बनाय कुशोंसे समूहन कर वह कुशा ईशानमें प्रक्षेप कर गोमय जलसे लेप देय स्फ्य वा स्रुवसे प्रादेशमात्र उत्तर क्रमसे उल्लेखनत्रय रेखाकर

इसी प्रकार मृत्तिका प्रक्षेपकर जलसे अभ्युक्षण कर कांस्य-पात्रमें तूष्णीं होय अग्नि लेअपने सन्मुख वेदिमें स्थित करे॥

ततःपुष्पचन्दनतांबूलवस्त्राण्यादाय। ॐअस्यांरात्रौ कर्तव्यचतुर्थीकर्महोमकर्माणि कृताऽकृतावेक्षणरूप ब्रह्मकर्मकर्तुममुकगोत्रममुकशर्माणंब्राह्मणमेभिः पुष्पचंदनतांबूलवासोभिर्ब्रह्मत्वेनत्वामहंवृणे । इतिब्रह्माणंवृणुयात्। ॐवृतोस्मीतिप्रतिवचनम्।यथाविहितंकर्मकुर्वितिवरेणोक्ते। करवाणीतिब्राह्मणोवदेत् ॥ ततोऽग्नेर्दक्षिणतः शुद्धमासनंदत्वातदुपरिप्रागग्रान्कुशानास्तीर्य्यब्रह्माणमग्निप्रदक्षिणक्रमेणानीयॐअत्र त्वंमेब्रह्माभवइत्यभिधाय । ॐभवानीतिब्राह्मणेनोक्ते। कल्पितासनेउदङ्मुखंब्रह्माणमुपवेशयेत्॥

भा०टी०–अनंतर पुष्प चंदन तांबूल वस्त्र ले। इस चतुर्थरात्रिमें कर्ना जो होम उसकी अशुद्धि शुद्धि साक्षीके लिये अमुकगोत्र ब्राह्मण तुमको ब्रह्मा समझकर वर्ण कर्ता है। मैंने वर्णीली। फिर यथा विहित आप कर्म कीजिये यह वर कहै। करताहूं ब्रह्मा कहै। अनंतर दक्षिण अग्निसे शुद्ध आसन देकर ऊपर पूर्वाग्र कुशा बिछाय अग्निकी प्रदक्षिणा कर इहाँ तुम ब्रह्मा होवे। हुआ यह ब्राह्मण कहे। फिर उत्तराभिमुख उस आसनपर ब्रह्माको स्थित करे॥

ततःपृथूदकपात्रमग्नेरुत्तरतःप्रतिष्ठाप्यप्रणीतापात्रंपुरतःकृत्वावारिणापरिपूर्य्यकुशैराच्छाद्य ब्रह्मणोमुखमवलोक्याग्नेरुत्तरतःकुशोपरिनिदध्यात्॥ ततःपरि

स्तरणम् । वर्हिपश्चतुर्थभागमादायआग्नेयादीशाना न्तंब्रह्मणोग्निपर्यन्तंनैर्ऋत्याद्वायव्यान्तमग्नितःप्रणी तापर्यन्तम्।ततोऽग्नेरुत्तरतःपश्चिमदिशिपवित्रच्छेद नार्थंकुशत्रयं पवित्रकरणार्थं साग्रमनन्तर्गर्भकुशपत्र द्वयंप्रोक्षणीपात्रम् । आज्यस्थाली ॥ सम्मार्जनार्थकु शत्रयमुपयमनार्थंवेणीरूपकुशत्रयम्।समिधस्तिस्रः । स्रुवः । आज्यम् । षट्पञ्चाशदुत्तरवरमुष्टिशतद्वयाव च्छिन्नतण्डुलपूर्णपात्रम्।एतानिपवित्रच्छेदनकुशानां पूर्वपूर्वदिशिक्रमेणासादनीयम् ॥ ततःपवित्रच्छेदन कुशैःपवित्रेछित्वाप्रादेशमितपवित्रकरणम् ॥

भा०टी०-अग्निसे उत्तर जलसहित पित्तलका कुंभ स्था-पनकर प्रणीतापात्रको सन्मुखकर जलसे भर कुशोंसे आ-च्छादित कर ब्रह्माजीको देख अग्निसे उत्तर कुशामें स्थित करे ॥ अनंतर कुशोंका चतुर्थभागले अग्निसे ईशानपर्यंत ब्रह्मासे अग्निपर्यंत निर्ऋति कोणसे वायुकोणपर्यंत और समिद्धत अग्निसे प्रणीतापर्यंत पूर्वोत्तर क्रमसे आस्तरण करे फिर अग्निसे उत्तर पश्चिम दिशामें पवित्र छेदनार्थ कुशा-त्रय । और पवित्रकरणके लिये गर्भपत्र रहित अग्रसहित दो कुशपत्र प्रोक्षणीपात्र आज्यस्थाली । संमार्जन शुद्धिके लिये तीन कुशा उपयम (हस्तग्रहण) के लिये वेणीरूप तीन कुशा । तीन समिधा पालाशकी।स्रुव घृत५६ मुष्टिमि-त तण्डुलयुक्त पूर्णपात्र । यह पवित्र छेदन कुशाके पूर्व२ स्थित करे क्रमसे ॥ अनंतर पवित्र च्छेदन कुशोंसे पवित्रे छेदन कर प्रादेशमात्र पवित्रा बनाये ॥

ततःसपवित्रकरेणप्रणीतोदकंत्रिःप्रोक्षणीपात्रेनिधायानामिकाङ्गुष्ठाभ्यामुत्तराग्रे पवित्रे धृत्वा त्रिरुत्पवनंततःप्रोक्षणीपात्रस्यसव्यहस्तकरणम् । पवित्रेगृहीत्वात्रिरुदिङ्गनम्। प्रणीतोदकेनप्रोक्षणीप्रोक्षणं । ततः प्रोक्षणीजलेनयथासादितवस्तुसेचनम् ॥ ततोऽग्नि प्रणीतयोर्मध्येप्रोक्षणीपात्रंनिधाय ॥ आज्यस्थाल्यामाज्यनिर्वापः । ततोऽधिश्रयणं । ततोज्वलत्तृणादिनाहविर्वेष्टयित्वाप्रदक्षिणक्रमेणपर्यग्निकरणम् । ततः स्रुवंप्रतप्यसम्मार्जनकुशानामग्रैरन्तरतोमूलैर्बाह्यतःस्रुवसंमार्जनम् ॥ प्रणीतोदकेनाभ्युक्ष्यपुनःप्रतप्य स्रुवं दक्षिणतोनिदध्यात् ॥

भा०टी०–अनंतर सपवित्र हस्तसे प्रणीताके जलको तीनवार प्रोक्षणीपात्रमें प्रक्षेप कर अनामिका अंगुष्ठसे उत्तराग्र पवित्राधारण कर तीनवार ऊर्द्धको पवित्रसे जल फेंकना फिर प्रोक्षणीपात्रको वामहस्तमें स्थितकर पवित्रग्रहणकर तीनवार उद्गिंगन करे ॥ और प्रणीताजलसे प्रोक्षणी पात्रको प्रोक्षण कर फिर प्रोक्षणीजलसे सर्व वस्तु सिंचन करे । अनंतर अग्नि प्रणीतामध्यमें प्रोक्षणीपात्र धरदे आज्यस्थालीमें घृतपाय अग्निमें रख ज्वलत्तृणसे हविवेष्टन कर प्रदाक्षिणक्रमसे पर्यग्नि करण अर्थात् अग्निमें प्रक्षेप करे तृणको फिर स्रुवको तपाय सम्मार्जन कुशाके अग्रभागसे मध्यसे साफ करे और मूलसे ऊपर साफ कर फिर अग्निमें तपाय दक्षिणमें स्थित करे ।

ततआज्यस्याग्नेरवतारणम् । ततआज्येप्रोक्षणीवदु त्पवनम् । अवेक्ष्यसत्यपद्रव्येतन्निरसनम् । पुनःपूर्वव त्प्रोक्षण्युत्पवनम् । उपयमनकुशान्वामहस्तेनादाय उत्तिष्ठन्प्रजापतिंमनसाध्यात्वातूष्णींघृताक्ताःसमि धास्तिस्रःक्षिपेत् ॥ततउपविश्यप्रोक्षणीजलेनाग्निप्रद क्षिणंपर्युक्ष्यपवित्रंप्रोक्षणीपात्रे धृत्वाब्रह्मणान्वारब्धः पातितदक्षिणजानुर्जुहुयात् । तत्राघारादारभ्याहु तिचतुष्टयेतत्तदाहुत्यनन्तरं स्रुवावस्थिताज्यं प्रोक्ष ण्यांक्षिपेत् । ॐप्रजापतयेस्वाहा इदंप्रजापतये०।इ तिमनसा । ॐइन्द्रायस्वाहा । इदमिन्द्राय० । इत्या घारौ । ॐअग्नयेस्वाहा । इदमग्नये० । ॐसोमायस्वा हा।इदंसोमाय०॥इत्याज्यभागौ॥तत पंचाज्याहुतिपु स्थालीपाकाहुतौचप्रत्याहुत्यनन्तरंस्रुवावस्थितहुत शेषघृतस्यप्रोक्षणीपात्रेप्रक्षेपः॥

भा०टी०-घृतको अग्निसे उतार घृतकोभी प्रोक्षणीवत् उत्पवनकर यदि कुत्सित द्रव्य घृतमें होय तो निकाल फिर पूर्ववत् प्रोक्षणीका उत्पवनकर उपयमन कुशा वामहस्तमें ले उठकर प्रजापतिका मनमें ध्यानकर तूर्णींहो घृतयुक्त तीन समिधा अग्निमें प्रक्षेप करे फिर बैठकर प्रोक्षणी जलसे अग्निको प्रदक्षिणक्रमसे पर्युक्षण कर पवित्रा प्रोक्षणी पात्रमें रख ब्रह्मासे अन्वारब्ध अर्थात् कुशा मिलाय दक्षिण गोडानेमाय स्रुवसे हवन करे और चार आहुतिके अनंतर स्रुवमें अवशिष्टघृतका प्रोक्षणीपात्रमें प्रक्षेप करे ॥ प्रजापतिकी आहुति मनसे कहे इंद्र अग्नि सोम यह क्रम-

से चार आहुति हवन करे फिर घृतसे जो पंच आहुति और स्थालीपाक आहुतिके अनंतर स्रुवमें अवशिष्ट घृतका प्रोक्षणीपात्रमें प्रक्षेप करना ॥

ततोब्रह्मणान्वारब्धंविना ।ॐअग्नेप्रायश्चित्तेत्वंदेवानां प्रायश्चित्तिरसि । ब्राह्मणस्त्वानाथकामउपधावा मियास्यैपतिघ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ इदम ग्नये न मम । ॐ वायोप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चि त्तिरसिब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यैप्रजा घ्नीतनूस्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ २ ॥ इदंवायवेन मम ॥ ॐसूर्यप्रायश्चित्ते त्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यैपशुघ्नीतनू स्तामस्यैनाशयस्वाहा ॥ ३ ॥ इदंसूर्यायनमम ॥ ॐचन्द्रप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मण स्त्वानाथकामऽउपधावामियास्यै गृहघ्नीतनूस्ताम स्यैनाशयस्वाहा ॥ ४ ॥ इदंचंद्रमसेनमम ॥ ॐगन्ध र्वप्रायश्चित्तेत्वंदेवानांप्रायश्चित्तिरसिब्राह्मणस्त्वाना थकामऽउपधावामियास्यैयशोघ्नीतनूस्तामस्यैनाश यस्वाहा ॥ ५ ॥ इदंगन्धर्वाय नमम ॥

भा०टी०-(मंत्रार्थ-अग्नेप्रायश्चित्ते) हे अग्निदेव प्रायश्चित्तस्वरूप देवताओंके दोषनाशक ! तुमकोही स्तुतिपूर्वक में ब्राह्मण प्राप्त होता हूं कि, इस स्त्रीका पति विरोधिक अर्थात् पतिनाशक अंगलक्षण शरीरको नाश करो अस्यै यह चतुर्थ्यर्थमें षष्ठी विभक्ति है ॥

२ (मंत्रार्थ-वायोप्रायश्चित्ते) हे वायुदेव! इस स्त्रीका जो प्रजाघ्नी संतानविरोधि अर्थात् पुत्रनाशक शरीर (वा अंगविशेष) उसका नाशकरो ॥

३ (मंत्रार्थ-सूर्यप्रायश्चित्ते) हे सूर्यदेव! इस स्त्रीका जो पशुविरोधि अर्थात् पशुनाशक शरीर वह नाश करो ॥

४ (मंत्रार्थ-चंद्रप्रायश्चित्ते) हे चंद्रमादेव! इस स्त्रीका जो गृहविरोधि अर्थात् गृहनाशक शरीरहै वह नाश करो ॥

५ (मंत्रार्थ-गन्धर्वप्रायश्चित्ते) हे यशके प्रकाशक गन्धर्वदेव! इस स्त्रीका जो यश विरोधि अर्थात् यशनाशक शरीर उसका नाश करो ॥

चरुमभिघार्यततःस्थालीपाकेनजुहुयात् ॥ ॐप्रजापतयेस्वाहा। इदंप्रजापतये० ॥ इतिमनसा । अग्न्याहुतिनवकेहुतशेषघृतस्यप्रोक्षणीपात्रेप्रक्षेपः ॥ अयंचहोमोब्रह्मणान्वारब्धकर्तृकः ॥ ततआज्यस्थालीपाकाभ्यांस्विष्टकृद्धोमः॥ॐअग्नयेस्विष्टकृते स्वाहा । इदमग्नयेस्विष्टकृते० ॥ ततआज्येन । ॐभूः स्वाहा। इदमग्नये०॥ॐ भुवःस्वाहा । इदंवायवे । ॐ-स्वःस्वाहा । इदंसूर्याय०॥एतामहाव्याहृतयः ॥

भा०टी०-चरुको तप्त कर स्थालीपाकसे हवन करे ॐ प्रजापतये स्वाहा यह मंत्र मनसे कहे ॥ अग्नये स्वाहा इस आहुतिसे नव आहुतिपर्यन्त हुतशेष घृतका प्रोक्षणीपात्रमें प्रक्षेप करे ॥ यह होम ब्रह्माके अन्वारब्धकर्तृक होमहै।

शुक्लयजुर्वेद अध्याय २१ मंत्र ३ ॥

ॐत्वन्नोऽअग्नेवरुणस्यविद्वान्देवस्यहेडोऽ

अवंयासिसीष्ठाः॥ यजिष्ठोवन्हितमुश्शो
शुंचानोव्विश्वाद्वेपाꣳसिप्रमुमुग्ध्यस्म्म
त्स्वाहा॥ इदमग्नीवरुणाभ्याम्० ॥ १ ॥

शुक्ल यजु०अध्याय २१ मंत्र ४ ॥

ॐसत्वन्नोऽअग्नेवमोभवोतीनोदिष्ठोऽअ
स्याऽउपसोव्युष्टो ॥ अवंयक्ष्वनोवरुणꣳ
रराणोव्वीहिमृडीकꣳसुहवोनऽएधिस्वा
हा ॥ इदमग्नये० ॥ २ ॥

शुक्ल यजु०अध्याय मंत्र ॥

ॐअयाश्चाग्नेस्यनभिशास्तिपाश्चसत्यमि
त्वमयाऽअसि।अयानोयज्ञंव्वहास्ययानो
धेहिभेपजꣳस्वाहा ॥ इदमग्नये० ॥ ३ ॥

शुक्ल यजुर्वेद अध्याय मंत्र ॥

ॐयेतशतम्वरुणयेसहस्रंयज्ञियाःपाशा
व्वितताःमहान्तः । तेभिर्नोऽअद्यसवितो
तविष्णुर्विश्श्वेमुञ्चन्तुमरुतःस्वर्काःस्वा
हा॥ इदंवरुणायसवित्रेविष्णवेविश्वेभ्यो
देवेभ्योमरुद्भ्यःस्वर्केभ्यः ॥ ४ ॥

शुक्लयजुर्वेद अध्याय २१ मंत्र १२ ॥

ॐउदुत्तमम्वरुणपाशमस्म्मदवाधमँवि मध्यमꣳश्रथाय । अथाव्वयमादित्यव्रतेतवानागसोऽअदितयेस्यामस्वाहा ॥ ५ ॥ इदंव्वरुणायएताः॥५ सर्वाःप्रायश्चित्तसंज्ञकाः ॥

भा०टी०-त्वन्नो और सत्वन्नो इस मंत्रोंका वामदेवऋषि त्रिष्टुपछन्द अग्नि और वरुणदेवता सर्व प्रायश्चित्तमें विनियुक्तहै ॥ और (येते शतं) इस मंत्रका शुनःशेपऋषि त्रिष्टुप् छंद वरुणदेवता वरुणसंबाधि शापके मोचनमें विनियुक्तहै ॥ (मंत्रार्थत्वन्नोऽअग्नेइति) हे अग्निदेव!तुम इस कर्ममें वैगुण होनेसे वरुणदेवके क्रोधको दूर करो कैसे तुम सर्वकर्ममें साक्षी चतुर हो ॥ और सबसे उत्तम हो और सर्वदेवताओंको यज्ञका भाग देनेवाले हो प्रकाशमान् हो इसलिये मंदबुद्धिवाले हमको जानकर हमारेसे कीहुई अवज्ञा (अनादर) को क्षमाकर सर्व प्रकारसे कल्याण देओ ॥ १ ॥ (मंत्रार्थ सत्वन्नइति) हेअग्ने ! तुम सर्वकी पालना कर्नेवाले हैं इसलिये आजदिनके प्रातःकालसे लेकर मुझकी रक्षा करो। नहीं केवल रक्षाही किन्तु हमारे कर चुलाम्, तुम सुखपूर्वक आकर सुख देनेवाला चरुयज्ञके स्वामी वरुणदेवताको देकर पूजन करो। जिसे वरुणदेवभी प्रसन्न हों हमारेको सुख दें ॥ २ ॥ (मंत्रार्थ-अयाश्चाग्नइति) हे अग्ने!तुम सर्वातर्यामी और प्रायश्चित्तद्वारा सर्वप्राणियोंको शुद्धकर्नेवाले। और शुभके दाता हमारे किये हुए यज्ञको कृपालु

होनेसे इंद्रादि देवताओंको देनेवाले इसलिये हमकोभी भेषज अर्थात् सुखके देनेवाला विविध दुःखविनाशक अपूर्व सुख देवो ॥

(मंत्रार्थ–येतेशतमिति) हे वरुणदेव! यज्ञके विघ्नसे उत्पन्न हुए बडे २ भारी महान् कठिन जो तुमारे शतसंख्यक और सहस्रसंख्यक पाशहैं। वह पाश पापरूप हमारे सविता सूर्य विष्णुरूप इंद्र और सर्वदेवता और वायुदेव ४९ सुंदर हृदयवाले आदित्य १२ हमारे पापोंको नष्ट करें ॥ ४ ॥ (मंत्रार्थ–उदुत्तममिति) उत्तम मध्यम अधम यह तीन वरुणजीके पाशहैं ॥ हे वरुणदेव! जो तुम्हारा उत्तम पाशहै उससे हमारी रक्षा करो। और जो मध्यम पाशहै उससेभी हमारी रक्षा करो पाशको शिथिल करो हे वरुणदेव! हम ब्रह्मचर्यसे तुमारेसे निरपराध होकर दीनतासे रहित होते हैं ॥ (दीनतायां दितिःप्रोक्ता दितिःस्याद्दैत्यमातरि) इस वचनसे दितिनाम दीनताकाभी है ॥ ५ ॥ यह आहुति सर्वप्रायश्चित्तमें है ॥

ॐप्रजापतयेस्वाहा। इदंप्रजापतये० । इतिमनसा ॥ इदंप्राजापत्यं ततःसंस्रवप्राशनम् । आचम्य । ॐअस्यांरात्रौकृतैतच्चतुर्थीहोमकर्मणिकृताऽकृतावेक्षण रूपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदंपूर्णपात्रंप्रजापतिदैवतम मुकगोत्रायामुकशर्मणेब्राह्मणायदक्षिणांतुभ्यमहंसंप्रददे ॥ इतिदक्षिणांदद्यात् ॥ स्वस्तीतिप्रतिवचनम् ॥ ततोब्रह्मग्रंथिविमोकः। ततःसुमित्रियानऽआपऽओषधयःसन्तु । इतिपवित्राभ्यांशिरःसंमृज्य ।

(१) आध्यात्मिक २ आधिभौतिक ३ आधिदैविकभेदसे दुःख तीन प्रकारका है इनकेभेदप्रभेद मत्कृतरामगीताविषमपदीटीकामेंसविस्तर लिखे हैं ॥

ॐ दुर्म्मित्रियास्तस्म्मैसन्तुयोऽस्मान्द्वेष्टियञ्चवयंद्वि ष्मः। इत्यैशान्यांदिशिप्रणीतांन्युब्जीकुर्यात् ।ततः स्तरणक्रमेणबर्हिरुत्थाप्यघृताक्तंहस्तेनैवजुहुयात् ॥

शुक्लयजुर्वेद अध्याय ८ मंत्र २१ ॥

ॐदेवागातुविदोगातुंवित्त्वागातुमित ।
मनसस्पतऽइमन्देवयज्ञꣳस्वाहाव्वाते
धाःस्वाहा ॥

भा०टी०-प्रजापतये यह मनसे कह प्रजापति संबंधि हवनकर फिर संस्रव प्राशन करे ॥ इस रात्रिमें कृत चतुर्थी कर्मकी सांगतासिद्धिके लिये अमुकगोत्र ब्राह्मणको दाक्षिणा देताहै ब्राह्मण स्वस्ति कहै। फिर ब्रह्माकी ग्रंथि खोल देवे (सुमित्रियानऽआप ओषधयःसन्तु) इस मंत्रसे शिरको जलसे मार्जन करे (दुर्मित्रिया) इस मंत्रसे प्रणीताको ईशानकोणमें न्युब्जकरे फिर आस्तरणक्रमसेही कुशाले घृत लगाय देवागातु इस मंत्रसेही हवन करे (मंत्रार्थदेवा गात्विति) हे देवतालोक तुम यज्ञके जाननेवाले हैं इसलिये विष्णुरूपयज्ञको जानकर सुखपूर्वक जाओ हे अन्तर्यामी ब्रह्मस्वरूप! यह यज्ञका फल तुमारे अर्पण किया जाताहै तुम वायुको अर्पण करो ॥

आम्रपल्लवेनजलमादायभूर्ध्निवरोवधूमाभिपिञ्चति । ॐयातेपतिघ्नीप्रजाघ्नीपशुघ्नीगृहघ्नीयशोघ्नीनिंदितात नूजारघ्नीततएनांकरोमिसाजीर्यत्वंमयासहश्रीअमुक देव्या।इतिमंत्रेण।ततोवधूंस्थालीपाकंप्राशयतिवरः।

ॐप्राणैस्तेप्राणान्संदधामिॐअस्थिभिरस्थीनिसंदधामि ॥ ॐमाꣳसैस्तेमाꣳसानिसंदधामिॐत्वचातेत्वचंसंदधामि ॥ इतिमंत्रचतुष्टयेनप्रतिमंत्रान्तेअन्नं प्राशयेत् ॥ ततोवधूहृदयंस्पृष्ट्वा वरःपठेत् ॥ ॐयत्ते सुशीमेहृदयंदिविचन्द्रमसिश्रियम् । वेदाहंतन्मांतद्विद्यात्पश्येमशरदःशतंजीवेमशरदःशतꣳशृणुयामशरदःशतमिति ॥

भा०टी०-आम्रके पत्रसे जल ले वर वधूको यातेपतिघ्नी इस मंत्रसे मार्जनकरे ॥(मंत्रार्थ-याते) हेस्त्री जो तुमारा पतिनाशक पुत्रनाशक पशुनाशक गृहनाशक यशनाशक निंदित शरीरहै सो जीर्ण(नाश)को प्राप्तहोय मुझकाभीजोस्त्री पुत्र पशु गृह यशनाशक शरीरहै उसके साथ और मैं तुमको जारके नाशकर्नेवाली अर्थात् पतिव्रता कर्ताहै ॥ अनंतर वधूको वर प्राणैस्ते इन चारमंत्रोंसे स्थालीपाक प्राशन करवाये ॥ (मंत्रार्थ-प्राणैस्ते) हे वधू तुह्मारे प्राणोंके साथ मैं अपने प्राण और अस्थियोंसे आपनि अस्थि मांससे मांस त्वचासे त्वचा स्थित कर्ताहै अर्थात तेरे और मेरेमें कुछ भेदबुद्धि नहींहै अनन्तर वरवधूके हृदयको स्पर्शकर यत्ते सुशीमे यह मंत्रपढे ॥ (मंत्रार्थ-यत्ते सुशीमे) हेवधू जो तुह्मारे हृदयमें चंद्रमासि शोभा लक्ष्मीमें जानताहै वह मुझको प्राप्तहो उसको मैं शतवर्ष पर्यंत देखा और शतवर्ष जीवतरहा और शतवर्षकी श्रवणकरा ॥ भावार्थ यहहै कि तुमारे साथ रोग रहित शतवर्षपर्यंत सुखपूर्वक प्राणोंको धारणकरा ॥

अथकङ्कणमोक्षणादीनियुतग्रंथिविमोकादीनिआचा

रात्प्राप्तानिकर्तव्यानि ॥ मंत्रः—कंकणंमोचयाम्यद्य रक्षांसिनकदाचन॥मयिरक्षांस्थिरांदत्वास्वस्थानंगच्छ कंकण ॥ ततउत्थायवधूदक्षिणहस्तस्पृष्टस्रुवेणघृतफलपुष्पपूर्णेनपूर्णाहुतिञ्जुहुयात् ॥

यजु०अध्याय ७ मंत्र२४ ॥

ॐमूर्द्धानंदिवोऽअरतिम्पृथिव्यावैश्वानरमृतऽआजातमग्निम् । कविꣳसम्म्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रञ्जनयन्त देवाः स्वाहा ॥ इदमग्नये० ॥

ततःस्रुवेणभस्मानीयदक्षिणानामिकयात्र्यायुषंकुर्यात् ।

यजु० अध्याय ३ मंत्र६२ ॥

ॐत्र्यायुषंजमदग्नेः । इति ललाटे॥ॐ कश्यपस्यत्र्यायुषम् । इति ग्रीवायां॥ॐ यद्देवेषुत्र्यायुषम् । इतिदक्षिणबाहुमूले॥ ॐतन्नोअस्तुत्र्यायुषम् । इतिहृदये ॥

एवंवध्वाअपित्र्यायुषङ्कुर्यात् । तत्रतन्नोइत्यस्यस्थानेतत्तइतिविशेषः । ततआचार्यायदक्षिणांदद्यात् ॥ भूयसींदद्यात् ॥ इति श्रीचतुर्थीकर्म समाप्तम् ॥

भा०टी०-कंकणमोक्षण और युतग्रंथि (खट्वचितावा) मोक्षण आचारसे (मंत्रार्थ) में आज कंकणको त्यागता है राक्षस दूर होये हेकंकण मेरेमें दृढ रक्षादे अपने स्थानको यथासुख जाओ ॥ फिर उठकर वधूका दक्षिण हाथ स्रुवके साथ लगाय घृतफलपुष्पयुक्त पूर्णाहुति वर हवन करें।मूर्द्धानं इस मंत्रसे (मंत्रार्थ मूर्द्धानमिति) स्वर्गादि सप्तलोकसे ऊपर पृथिव्यादि पांचभूतोंसे विरिक्त(रहित)ब्रह्माण्डको प्रकाश करनेवाला ईश्वर सत्यरूप जन्म आदि षड्भाव रहित निर्विकार प्रकाशमान् सर्वज्ञ परमानंद तीन कालसे रहित सृष्टि (उत्पत्ति) लय (नाश) से प्राणियोंका पात्रभूत आधार और जो देवताओंको उत्पन्नकर स्वरव्यापारमें लगाता है तिस परमेश्वरके लिये यह आहुति सुहुतहो ॥ बैठकर स्रुवसे भस्मले दक्षिण अनामिकासे ललाट १ ग्रीवा २ दक्षिण बाहुमूल ३ हृदयमें ४ यथाक्रम त्र्यायुषं इस मंत्रसे लगावे इसीप्रकार वधूकेभी लगावे तन्नोंके स्थान तत्ते यह वधूको कहना ॥ इतना विशेषहै ॥ अनंतर आचार्यको दक्षिणा भूयसी देवे ॥

इति श्रीकर्पूरस्थलनिवासि गौतमगोत्र (शोरि) अन्वयालंकृत देवज्ञ दुनिचंद्रात्मज पण्डित विष्णुदत्त वैदिककृत चतुर्थी कर्म टीका अद्रिवेदांकभूमिते १९४७ मधुमासे कृष्णपक्षम्यां गुरुदिने समाप्तिमगात् । साचशुभावहास्यात्कुलदेव्याः प्रसादात् देवगुरुद्विजाशीर्भिः ॥

॥ श्रीः ॥ शुभम् ॥ समाप्तश्चेदं सप्तमं प्रकरणम् ॥

(विशेपद्रष्टव्य)

अथयाज्ञवल्क्यस्मृतौ विवाहप्रकरणम्।

गुरवेतु वरं दत्वा स्नायीत तदनुज्ञया ॥ वेदव्रता निवापारं नीत्वाह्युभयमेववा ॥ १ ॥ अविप्लु तब्रह्मचर्योलक्षण्यांस्त्रियंमुद्वहेत् । अनन्यपूर्विकां कान्तामसपिण्डां यवीयसीम् ॥ २ ॥ अरोगिणीं भ्रातृमतीमसमानार्पगोत्रजाम् । पञ्चमात्सप्तमादूर्द्ध्वं मातृतः पितृतस्तथा ॥ ३ ॥ दशपूरुपविख्याताच्छ्रो त्रियाणांमहाकुलात् ॥ स्फीतादपिनसंचारिरोगदोप समन्वितात्॥४॥एतैरेवगुणैर्युक्तःसवर्णःश्रोत्रियोवरः॥ यत्नात्परीक्षितः पुंस्त्वेयुवाधीमान्जनप्रियः॥ ५॥

भा०टी०-ब्रह्मचारी गुरुजीको गुरुदक्षिणा देकर वेदोंको वेदको वा व्रतको अथवा वेदव्रत दोनोंको समाप्तकर ब्रह्म-चर्यको ना नष्टकर उक्तलक्षणयुक्त स्त्रीसे विवाह करें ॥ जो प्रथम विवाही नाहो सुंदरहो सापिंडा और आयुसे अधिक नाहो अर्थात् छोटीहो मातृ (माताकी संतान) कुलसे पं-चम पितृ (पिताकी संतान) कुलसे सप्तम अर्थात् भगिनि भागिनिभ्राता भ्रातृपुत्री पितृव्य चाचा ताया । एवं पिता-दि ७ से ऊपर जिस्को इस समय अंग वोला जाताहै वह नामिले यह प्राचीन संप्रदायहै पिताकुल माताकुल पिताके नानाके माताके नानाके ऐसीही .कन्या मातृकुल कन्या पितृकुल कन्याके . पिताके नानाके यह ७ भये ॥ यह मतमिले ॥ पांच मातासे पांच पितासे१० पुरुप (पस्त)

से कुल प्रसिद्ध हो श्रोत्रियोंकी बढी कुलसे॥परंतु रोग और दोषयुक्त कुल नाहोय ऐसी कुलकी कन्या इन पूर्वोक्त गुणों-से युक्त समानजाति वर युवा जनको प्यारा बोलनेवाला बुद्धिमान् यत्नसे पुंस्त्वमें परीक्षित(पुल्लिंग)होना चाहिये॥

यदुच्यतेद्विजातीनांशूद्राद्दारोपसंग्रहः। नैतन्ममम तं यस्मात्तत्रायंजायतेस्वयम् ॥ ६ ॥ तिस्रोवर्णानुपूर्व्येण द्वेतथैकायथाक्रमम् । ब्राह्मणक्षत्रियविशां भार्या स्वा शूद्रजन्मनः ॥ ७॥ ब्राह्मो विवाह आहूय दीयते शक्त्यलंकृता॥तज्जः पुनात्युभयतः पुरुषानेकविंशतिम्॥८॥यज्ञस्थऋत्विजेदैव आदायार्षस्तुगोद्वयम् । चतुर्दशप्रथमजःपुनात्युत्तरजश्चषट् ॥९॥ इत्युक्त्वा चरतां धर्मं सह या दीयतेऽर्थिने।सकायः पावयेत्तज्जः षट्षड्वंश्यान्सहात्मना॥१०॥आसुरोद्रविणादानाद्गांधर्वःसमयान्मिथः॥ राक्षसोयुद्धहरणात्पैशाचः कन्यकाच्छलात् ॥ ११ ॥

भा०टी०–जो द्विजातियोंको शूद्रकी कन्यासे विवाह अन्यऋषि कहते हैं यह मेरेको ईप्सीत नहि कारण वह फिर उस शूद्रामें पुत्ररूप होकर पैदा होता है प्र० आत्मा वै पुत्र नामासि श्रुति है॥ब्राह्मणको ब्राह्मणी १ क्षत्रिया २ वैश्या ३ शूद्रा और क्षत्रीको क्षत्रिया १ वैश्या २ शूद्रा ३ वैश्यको वश्या १ शूद्रा २ भार्या लिखी है शूद्रको शूद्राही १ भार्या लिखी है ॥ ब्राह्म विवाह वह होता है जो यथाशक्ति अलंकृत कन्या श्रेष्ठ वरको बुलाकर संकल्प दीजाती है उससे उत्पन्न संतान २१ कुलोंको १० पिताकी १० माताकी और

१ आपको पवित्र कर्ता है॥८॥जो यज्ञमें ऋत्विक्को दीजाय वह दैवविवाह होता है ॥ यह १४ कुलको पवित्र कर्ता है॥ जो दो गऊ लेकर कन्या देवे वह आर्ष विवाह ६ कुलको पवित्र कर्ता है ॥ जो अर्थीको धर्माचरण करो यह कहकर दीजाय वह प्राजापत्य विवाह होता है वह १२ कुल पवित्र कर्ता है ॥ १० ॥ जो द्रव्य लेकर कन्या देवे वह आसुरी विवाह होता है जो वर कन्या आपसमें विवाह चाहे वह गांधर्वी विवाह होता है॥जो जबरदस्ती युद्धमें जीत कन्या लीहो वह राक्षस विवाह और छलसे कन्या ले तो पैशाच विवाह होता है ॥ ११ ॥

पाणीर्ग्राह्यःसवर्णासुगृह्णीयात्क्षत्रियाशरम् ॥वैश्याप्रतोदमादद्याद्वेदनेत्वग्रजन्मनः ॥ १२ ॥ पितापितामहोभ्रातात्मकुल्याजननीतथा ॥कन्याप्रदः पूर्वनाशेप्रकृतिस्थःपरःपरः ॥ १३ ॥ अप्रयच्छन्समाप्नोतिभ्रूणहत्यामृतावृतौ । गम्यंत्वभावेदातॄणां कन्याकुर्यात्स्वयंवरम् ॥१४॥ सकृत्प्रदीयतेकन्याहरंस्तांचोरदण्डभाक्।दत्तामपिहरेत्पूर्वाञ्छ्रेयांश्चेद्वरआव्रजेत् ॥१५॥ अनाख्यायददद्दोषंदण्डउत्तमसाहसम् ।अदुष्टांतुत्यजन्दण्डयोदूपयंस्तुमृषाशतम् ॥ १६ ॥

भा०टी०—सवर्णोमें अर्थात् ब्राह्मण ब्राह्मणीसे इत्यादि विवाहमें हाथ ग्रहण करना लिखा है ॥ यदि ब्राह्मण क्षत्रियाको विवाहे तो क्षत्रिया बाण हाथमें पकडे वैश्या प्रतोदको – शूद्रा वस्त्रको हाथसे पकडे ॥ कन्याके अधिकारी क्रमपूर्वक यह है कि पिता पितामह भ्राता कन्याका अप-

ने कुलका माता यह क्रमपूर्वक एकके अभावमें वा उन्मा-
दादि रोगयुक्त होनेसे पिछला २ होताहै ॥ यदि विवाह-
योग्य कन्याको ना विवाहे तो मास२ में गर्भहत्याके दोष-
को प्राप्त होता है यदि कन्यादाता कोई ना हो वा (क-
न्याही योग्य पतिको चाहती है) तो स्वयंवर करैं ॥ एकही
वार कन्याका दान होता है यदि फिर देकर कन्याका हर-
ण करे तो चौर दंडको प्राप्त होता है ॥ यदि पुनः पूर्व वर-
से अधिक गुणयुक्त श्रेष्ठवर आजाय तो अवश्य विवाहदे प-
रंतु सप्तपदीसे पूर्वही दान होता है पीछे नहिं ॥ जो कन्या-
का दोष अंधत्वादिना कहकर विवाह देता है वह उत्तम
साहसके दंडको प्राप्त होता है ॥जो दोषरहित स्त्रीको त्यागे
वा झूठी तोहमत लावे वहभी दंडयोग्य होता है ॥

अक्षताच क्षताचैव पुनर्भूः संस्कृतापुनः । स्वैरिणी
या पतिंहित्वा सवर्णं कामतः श्रयेत् ॥ अपुत्रां गुर्व
नुज्ञातो देवरःपुत्रकाम्यया । सपिण्डोवासगोत्रोवा
घृताभ्यक्तऋतावियात्॥ आगर्भसंभवाद्गच्छेत्पतित
स्त्वन्यथा भवेत् ॥ अनेन विधिनाजातः क्षेत्रजोस्य
सुतोभवेत्। हृताधिकारांमलिनांपिण्डमात्रोपजीवि
नीम्।परिभूतामधःशय्यांवासयेद्व्यभिचारिणीम्॥सोमः
शौचंददावासांगंधर्वश्चशुभांगिरम् ॥पावकःसर्वमेध्य
त्वंमेध्यावैयोपितोह्यतः ॥

भा०टी०-पतिके जीते या मरे पर जो स्त्री फिर विवाही
जाय वह पुनर्भू होतीहै ॥ जो स्त्री अपने पतिको छोडकर
सवर्णी अन्य पुरुषको अपनी इच्छासे सेवन करे वह स्वैरिणी

स्त्री कहलातीहै ॥ अपुत्रा स्त्रीको अपने बड़ोंकी आज्ञासे पुत्रकी इच्छा रख सपिंडी वा सगोत्री घृत शरीरपर मर्दनकर ऋतुकालमें संभोग करें जबतक गर्भ ना हो तबतक गमन करे अन्यथा पतित होजाताहै ॥ इसविधिसे उत्पन्न पुत्र क्षेत्रज कहलाताहै परंतु यह वाक्य वहांहै यहां बडाभाईकी सगाई हो वह मरजावे तो यदि उसकी सगाईको विवाह ले तो यह विधान करे इसमें मनुजीका वाक्यहै ॥ (यस्याम्रियेत कन्यायावाचासत्येकृतेपतिः तामनेनविधानेननिजोविंदेतदेवरः ।) अर्थ पूर्वही लिखाहै॥ जो स्त्री व्यभिचारिणी होजाय उसके पाससे भूषणादि छीन मलिन वस्त्र पहिराय केवल अन्नमात्र दे और पृथिवीपर शयन करवावे उससे भोग करना प्रायश्चित्त निवृत्तिपर्यंत छोडदें ॥ और तिरस्कार करतारहै परंतु घरसे बाहिर मत निकाले यह स्त्री अल्पही प्रायश्चित्तसे शुद्ध होतीहै कारण सोम इन्को पवित्रता देता भया गंधर्व शुभ वाणी अग्नि शुद्धि सो स्त्री शुद्धहै ॥

व्यभिचाराहतौशुद्धिर्गर्भेत्यागोविधीयते॥गर्भभर्तृवधादौचतथामहतिपातके ॥ सुरापीव्याधिता धूर्ता वंध्यार्थघ्न्यप्रियंवदा । स्त्रीप्रसूश्चाधिवेत्तव्यापुरुषद्वेषिणी तथा ॥ अधिविन्नातुभर्तव्यामहदेनोन्यथा भवेत् । यात्रानुकूलंदंपत्योस्त्रिवर्गस्तत्रवर्धते ॥ मृते जीवति वापत्यौ या नान्यमुपगच्छति॥सेहकीर्तिमवाप्नोति मोदतेचोमयासह ॥ आज्ञासंपादिनीं दक्षांवीरसूं प्रियवादिनीम् । त्यजन्दाप्यस्तृतीयांशमद्रव्यो भरणं स्त्रियाः॥

भा०टी०-जो स्त्री मनमें पराये मनुष्यके साथ संभोग कर्नेकी इच्छा कर्तीहै इस प्रायश्चित्तसे मासपीछे ऋतु आनेपर शुद्ध हो जातीहै यदि परपुरुपसे स्त्रीको गर्भ हो-जाय वा अपने पतिके गर्भको वा पतिको नाश कर्ना चाहे सत्य २ और ब्रह्महत्यादि दोष दूषित होय तो उस स्त्रीका त्याग लिखाहै ॥ यदि स्त्री मद्यपीवे वा व्याधियुक्तहो वा दुष्टा धूर्ता हो वा वंध्या धनके नाश कर्नेवाली कटुवचन सदैव कहै वा कन्याही उत्पन्न करे अथवा पतिसे मनमें विरोध राखे यह सत्य २ मालूम कर इ-न्के जीनेपर अन्य स्त्रीसे विवाह करावें ॥ और जो प्रथम स्त्रीहै उस्कोभी भूषण वस्त्र अन्नसे पालन करे अन्यथा बडा पापहै ॥ यहां स्त्रीपुरुषकी अनुकूलताहै वहां धर्म अर्थ काम बढताहै ॥ जो मनुष्य कामवशहो आज्ञा माननेवा-ली चतुर पुत्रोंको उत्पन्न करनेवाली प्रिय वाक्य कहनेवा-लीको छोडताहै वह अपनी धनसे तीसरा हिस्सा उस स्त्री-को दे यदि धन ना होतो उस्को अन्न वस्त्र भूषण दे रक्षाकरें॥ जो स्त्री पतिके मृतहोनेपर वा जीवतपर अन्य मनुष्यके साथ भोग नहिं कर्ती वह इस संसारमें कीर्तिको प्राप्तहो अंतकालमें पार्वतीके साथ आनंद कर्तीहै ॥

स्त्रीभिर्भर्तृवचः कार्यमेपधर्मःपरःस्त्रियाः ॥ आशुद्धेः संप्रदतीक्ष्योहिमहापातकदूपितः॥लोकानंत्यंदिवःप्रा प्तिःपुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः।यस्मात्तस्मात्स्त्रियःसेव्याःकर्त व्यांश्चसुरक्षिताः॥पोडशर्तुनिशाःस्त्रीणांतस्मिन्युग्मा सुसंविशेत् ॥ ब्रह्मचार्यवपर्वण्याद्याश्चतस्रश्चवर्जये त् ॥ एवंगच्छन्स्त्रियंक्षामां मघांमूलंचवर्जयेत् । सुस्थइंदौसकृत्पुत्रंलक्षण्यंजनयेत्पुमान ॥

भा०टी०—स्त्रीयोंने भर्ताका वचन परिपालन कर्ना यही स्त्रीका परम धर्महै ॥ यदि भर्ता महापातकसे युक्तहै तो शुद्धिपर्यंत प्रतीक्षा करे ॥ अनेक चिर वंशकी स्थिति और पुत्रपौत्र प्रपौत्रादिसे स्वर्गप्राप्ति स्त्री मूल होनेसे स्त्रीका सेवन अवश्यहै ॥ स्त्रीकी १६रात्रि ऋतुकालसे ले गर्भ होनेकी है उन्में ८ । १४ । १५ । ३० । ११ तिथि मघा मूल छोड श्रेष्ठचंद्रमा । युग्म दिन ४ । ६ । ८ । १० । १२ में भोगकर लक्षणयुक्त श्रेष्ठ पुत्रको उत्पन्न करें ॥

यथाकामी भवेद्वापि स्त्रीणांवरमनुस्मरन्॥स्वदारनिरतश्चैव स्त्रियोरक्ष्या यतः स्मृताः ॥ भर्तृभ्रातृपितृज्ञातिश्वश्रूश्वशुरदेवरैः । बंधुभिश्चस्त्रियाःपूज्याःभूपणाच्छादनाशनैः ॥ संयतोपस्करादक्षाहृष्टाव्ययपराङ्मुखी ॥ कुर्याच्छ्वशुरयोःपादवंदनं भर्तृतत्परा॥ क्रीडांशरीरसंस्कारं समाजोत्सवदर्शनम् । हास्यं परगृहेयानं त्यजेत्प्रोपितभर्तृका ॥ रक्षेत्कन्यांपिता विन्नांपातिःपुत्रास्तुवार्धके॥अभावेज्ञातयस्तेपांनस्वातंर्यं क्वचित्स्त्रियाः ॥

भा०टी०—इंद्रने दिया जो वर की तुम्हारी काम इच्छा नष्ट करनेवाला पातकी होताहै ॥ इस्को संमरण करता हुआ यथा कामीभी हो सक्ताहै ॥ कारण अपनी स्त्रीमेंही संभोग करे और स्त्रीकी रक्षा करे ॥ भर्ता भ्राता पिता बांधव सास सौहरा देवर इनकर स्त्रीलोग भूषण वस्त्रादिसे पूजनीयहै॥ और स्त्री घरकी उपकरण सामग्री अच्छी तरह राखे चतुर प्रसन्न धनका खर्च मत करे और सास श्वसुरके चरणपर वंदना करे परंतु प्रीति भर्तामें राखे जिस स्त्रीका

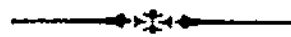
पति परदेश गयाहो वह खेलना शृंगार समाज सभा मेला मत देखे हास्य मतकर पराये घरोंमें मत गमन करे ॥ कन्याकी पिता स्त्रीकी पति वृद्धाकी पुत्र रक्षा करे अभावमें बांधव रक्षा करे स्त्रीको स्वतंत्र होना नहि लिखा ॥

पितृमातृसुतभ्रातृश्वश्रूश्वशुरमातुलैः॥हीनानस्याद्विनाभर्त्रागर्हणीयान्यथाभवेत् ॥ पतिप्रियहिते युक्ता स्वाचारा विजितेंद्रिया । सेह कीर्तिमवाप्नोतिप्रेत्य चानुत्तमांगतिम्॥सत्यामन्यांसवर्णायांधर्मकार्यंनकारयेत्॥सवर्णासुविधौधर्म्येज्येष्ठयानविनेतरा ॥ दाहयित्वाऽग्निहोत्रेण स्त्रियंवृत्तवतीं पतिः । आहरेद्विधिवद्दारानग्नींश्चैवाविलंबयन् ॥

भा०टी०-स्त्रीविना भर्ताके पिता माता पुत्र भ्राता सास सौहरा मामा इन्के अलग ना रहै अन्यथा निंदित होजातीहै ॥ जो स्त्री पतिके हितमें हो श्रेष्ठ आचारवाली जितेंद्रि हो वह यहां यशको अंतमें उत्तम लोकको प्राप्त होतीहै ॥ जिस मनुष्यकी बहुतस्त्री हो वह सवर्णाके विना अन्य वर्ण स्त्रीसे धर्म ना कराय यदि समान वर्णकी अनेक स्त्रीहो तो प्रथम स्त्रीके साथ धर्मकार्य करें ॥ यदि व्रतवती स्त्री मृत्युको प्राप्त हो तो उसको अग्निहोत्रकी अग्निसे दाहकर विधिपूर्वक शीघ्रही स्त्रीको और अग्निको ग्रहण करें अन्यथा अग्निहोत्रका अभावसे दोषहै ॥ इति श्रीदैवज्ञदुनिचंद्रात्मजपं० विष्णुदत्तवैदिककृतनवरत्नविवाहपद्धतिधृत. विवाहविधानं भाषाटीकासहितं समाप्तम् ॥ शुभम् ॥

प्रीयताश्चानेन श्रीरामचंद्रः ॥

अथ विवाहमंत्राणां सूचीपत्रम् ।



इति विवाहमंत्राणांसूचीपत्रम्

अथ अष्टमप्रकरणम्।

(स्त्रीणामाचारे)

ॐस्वस्ति श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरवेनमः ॥

लोकानंत्यंदिवः प्राप्तिःपुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ॥
यस्मात्तस्मात्स्त्रियःसेव्याःकर्तव्याश्चसुरक्षिताः ॥

भा०टी०–याज्ञवल्क्यस्मृति और मन्वादि धर्मशास्त्र और श्रुतियोंमें स्त्रियोंका स्वीकार रक्षा यह सिद्धहै इस

लिये पुत्रपौत्र प्रपौत्रादिद्वारा स्वर्गादिप्राप्तिके लिये स्त्रियोंका पाणिग्रहण करना चाहिये और स्त्रियोंको उपदेश करना आचारका तथा भर्ताकी पूजन अवश्य कर्तव्यहै और यहभी याज्ञवल्क्यस्मृति प्रथम अध्यायमेंभी लिखाहै कि (पतिप्रियहितेयुक्तास्वाचाराविजितेन्द्रिया। सेहकीर्तिमवाप्नोतिप्रेत्यचानुत्तमांगतिम) अर्थात् जो स्त्री पतिके प्रियमें तत्पर और शुद्ध आचार युक्त और इंद्रियजित ऐसी स्त्री इसलोकमें कीर्ति यश और परलोकमें उत्तमगतिको प्राप्त होतीहै और भी लिखाहै (स्त्रीभिर्भर्तृवचःकार्यमेषधर्मः परःस्त्रियाः) अर्थात् भर्ताका वचन मानना यही स्त्रीका परम धर्महै॥ अन्यच्च (गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः। पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः) अर्थात् ब्राह्मणोंका अग्नि गुरु, वर्णोंका ब्राह्मण गुरु, स्त्रीका एक पतिही गुरु होताहै अभ्यागत सर्वका गुरुहै इत्यादि अनेक प्रमाणोंसे स्त्रियोंका पतिही गुरुहै इसलिये पतिकी सेवा और आज्ञा कर्नी आचार शुद्ध रखना यही स्त्रीका मुख्य धर्महै इसलिये कुछ यत्किंचित् स्त्रियोंका आचार धर्म शास्त्रोक्त लिखते हैं॥ जो सौभाग्यवती स्त्रीमात्रहै उन्को प्रातःकाल सूर्योदयके प्रथम चार घडीके तडके(प्रातःकाल)उठकर नेत्रोंको प्रथम जल स्पर्श करना अनंतर अपने पतिके चरणोंपर सिरको धर प्रणाम कर प्रथम पतिके मुखका दर्शन करना पश्चात् शुद्ध (साफ) दर्पणमें अपना मुख देखना पीछेसे भूमिको प्रोक्षण (छिडकन) सम्मार्जन (वहारी) लेपनादिसे घरको शुद्ध करे और पृथिवीकी पूजा कर फिर शूद्रकमलाकरोक्त मंगलपाठ पढकर पतिकी सेवा पादप्रक्षालन आदिकर फिर वेणी (गूत) को कंकपत्र (कंगी) से शुद्धकर और पुष्पादिक धारण कर भाल (मस्तुक) में तिलक लगाय हस्त कर्ण

इति विवाहमंत्राणांसूचीपत्रम्

अथ अष्टमप्रकरणम् ।

(स्त्रीणामाचारे)

ॐस्वस्ति श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगुरवेनमः ॥

लोकानंत्यंदिवः प्राप्तिःपुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः ॥
यस्मात्तस्मात्स्त्रियःसेव्याःकर्तव्याश्चसुरक्षिताः ॥

भा०टी०-याज्ञवल्क्यस्मृति और मन्वादि धर्मशास्त्र और श्रुतियोंमें स्त्रियोंका स्वीकार रक्षा यह सिद्धहै इस

लिये पुत्रपौत्र प्रपौत्रादिद्वारा स्वर्गादिप्राप्तिके लिये स्त्रियोंका पाणिग्रहण करना चाहिये और स्त्रियोंको उपदेश करना आचारका तथा भर्ताकी पूजन अवश्य कर्तव्यहै और यहभी याज्ञवल्क्यस्मृति प्रथम अध्यामेंभी लिखाहै कि (पतिप्रियहितेयुक्तास्वाचाराविजितेन्द्रिया। सेहकीर्तिमवाप्नोतिप्रेत्यचानुत्तमांगतिम्) अर्थात् जो स्त्री पतिके प्रियमें तत्पर और शुद्ध आचार युक्त और इंद्रियजित ऐसी स्त्री इसलोकमें कीर्ति यश और परलोकमें उत्तमगतिको प्राप्त होतीहै और भी लिखाहै (स्त्रीभिर्भर्तृवचःकार्यमेषधर्मः परःस्त्रियाः) अर्थात् भर्ताका वचन मानना यही स्त्रीका परम धर्महै॥ अन्यच्च (गुरुरग्निर्द्विजातीनां वर्णानां ब्राह्मणो गुरुः। पतिरेको गुरुः स्त्रीणां सर्वस्याभ्यागतो गुरुः) अर्थात् ब्राह्मणोंका अग्नि गुरु, वर्णोंका ब्राह्मणगुरु, स्त्रीका एक पतिही गुरु होताहै अभ्यागत सर्वका गुरुहै इत्यादि अनेक प्रमाणोंसे स्त्रियोंका पतिही गुरुहै इसलिये पतिकी सेवा और आज्ञा कर्नी आचार शुद्ध रखना यही स्त्रीका मुख्य धर्महै इसलिये कुछ यत्किंचित् स्त्रियोंका आचार धर्म शास्त्रोक्त लिखते हैं॥ जो सौभाग्यवती स्त्रीमात्रहै उन्को प्रातःकाल सूर्योदयके प्रथम चार घडीके तडके(प्रातःकाले)उठकर नेत्रोंको प्रथम जल स्पर्श करना अनंतर अपने पतिके चरणोंपर सिरको धर प्रणाम कर प्रथम पतिके मुखका दर्शन करना पश्चात् शुद्ध (साफ) दर्पणमें अपना मुख देखना पीछेसे भूमिको प्रोक्षण (छिटकन) सम्मार्जन (वहारी) लेपनादिसे घरको शुद्ध करे और पृथिवीकी पूजा कर फिर शुद्रकमलाकरोक्त मंगलपाठ पढकर पतिकी सेवा पादप्रक्षालन आदिकर फिर वेणी (गूत) को कंकपत्र (कंगी.) से शुद्धकर और पुष्पादिके धारण कर भाल (मस्तक) में तिलक लगाय हस्त कर्ण

बाहुके भूषणादि धारण कर फिर जिस प्रकार केशादिक जलसे क्लिन्न (गिल्ले) ना होवे तद्वत् स्नान करे इसमें प्रमाण-भी जैसे सौभाग्यकल्पद्रुममें लिखाहै ॥

यथा—बुद्धाब्राह्मेमुहूर्तेनिजपतिचरणौसंप्रणम्यास्य मस्यप्रेक्ष्यप्रेम्णाथनैजंशुभमुकुरतलेभूमिमभ्यर्च्यपत्नी । प्रातःस्मृत्यादिकृत्वापतिपरिचरणंसंविधायैववेणीसं रच्याधायभालेतिलकमथगलाधोनिमज्जेत्सभूपा ॥

और स्कांदमेंभी लिखाहै (प्रसुतंच सुखासीनं रममाणं यदृच्छया ।आतुरेष्वपि कालेषु पतिंनोत्थापयेत्क्वचित्) अर्थात् पति शयनअवस्थामें हो वा सुखपूर्वक आराममें होय।वा स्वेच्छापूर्वक आनंद लेताहो ॥ अर्थात् अपनी तखलीफमें भी होय तबभी पतिको ना उठावे ॥ और पतिको सर्व प्रकारसे प्रसन्न करे ॥ और हरिद्रा (हलदी) का मर्दन केशरका स्वीकार ।सदूर कज्जल कूर्पासक (बहुदेवाकंगण) ताम्बूल यह स्त्रियोंको मंगलदायक भूषणहै । और केशोंका संस्कार कर्णके भूषण तथा हस्तोंके भूषण भर्त्ताकी आयुकी वृद्धिकी इच्छावाली स्त्री इन्को मत त्यागे ॥

प्रमाणं । हरिद्राकुंकुमंचैवकस्तूरीकज्जलंतथा । कूर्पासकंचतांबूलंमांगल्याभरणंस्त्रियाः ॥ केशसंस्कारकबरीकरकर्णविभूषणम् । भर्तुरायुष्यमिच्छंतीदूरयेन्नकचित्सती ॥

और नियम काजल और पत्रपुष्प आदि जो आज्ञा करे पति वह आगे रखदे ॥ और भर्त्ताका उच्छिष्ट सेवन करे ॥

और तीर्थस्नानकी इच्छावाली स्त्री पतिका पादोदकपान करे और शंकर विष्णुसे अधिक स्त्रीको पति होताहै ॥

प्रमाणंप्रसुतंचसुखासीनंरममाणंयदृच्छया।आतुरेष्व पिकालेपुपतिंनोत्थापयेत्कचित् ॥ हरिद्राकुंकुमंचै वसिंदूरंकज्जलंतथा । कूर्पासकंचताम्बूलंमाङ्गल्या भरणंस्त्रियः ॥ केशसंस्कारकवरीकरकर्णविभूषण म् । भर्तुरायुष्यमिच्छन्तीदूरयेन्नकचित्सती ॥ निय मोदकवह्निचपत्रपुष्पादिकंचयत् । सेवेतभर्तुरु च्छिष्टमिष्टमन्नंफलादिकम् ॥ तीर्थस्नानार्थिनीनारी पतिपादोदकंपिवेत् । शंकरादपिविष्णोर्वापतिरेको ऽधिकःस्त्रियाः ॥

श्रीमद्भागवते ।

स्त्रीणांचपतिदेवानांतच्छुश्रूषानुकूलता ॥ तद्बन्धुष्व नुवृत्तिश्चनित्यंतद्व्रतधारणम् ॥ सम्मार्जनोपलेपा भ्यांसेकमण्डलवर्तने ॥ स्वयंचमण्डितानित्यंप रिमृष्टपरिच्छदा ॥ कामैरुच्चावचैःसाध्वीप्रश्रयेण दमेनच ॥ वाक्यैःसत्यैःप्रियैःप्रेम्णाकालेकालेर्चयेत्प तिम् ॥ संतुष्टालोलुपादक्षाधर्मज्ञाप्रियसत्यवाक् ॥ अप्रमत्ताशुचिः स्निग्धापतितंत्वपतिंतंभजेत् ॥ यापतिंहरिभावेनभजेच्छ्रीरिवतत्परा ॥हर्यात्मनाहरे र्लोकेपत्याश्रीरिवमोदते ॥ दुःशीलोदुर्भगोवृद्धोजडो रोग्यधनोपिवा । पतिःस्त्रीभिर्नहातव्योलोकेप्सुभिर

पातकी ॥ अस्वर्ग्यमयशस्यंचफल्गुकृच्छ्रंभयावह म्। जुगुप्सितंचसर्वत्रऔपपत्यंकुलस्त्रियाः ॥

भावार्थ–

स्त्रीलोगोंका पतिही परम देवहै इसकाही पूजन करना और आज्ञामें रहना और पतिके बंधु माता पिता इन्की सेवा करनी पतिव्रत धारण करना और पृथिवीकी शुद्धि संस्कार पूजन और अपने शरीरमें भूषण पुष्प धारण करने श्रेष्ठ कार्यों और वचनोंसे पतिव्रता स्त्री पतिकी सेवा करे और काल अर्थात् ऋतुकालमेंही पतिसे संभोग करे अन्यथा अतिविषयासक्त ना होवे। और सदैव संतुष्टरहै और सावधान पवित्र स्नेहवती रहै ॥ जो स्त्री हरिभावसे लक्ष्मीवत् पूजन कर्तीहै विष्णुलोकमें वह स्त्री पतिके साथ विष्णुजीवत् आनंद भोगतीहै ॥ यदि पति दुष्ट निर्द्धन वृद्ध मूर्ख जड रोगीभी होय वह लोकपरलोकमें सुख इच्छावती स्त्री न तिरस्कार करे ॥ और स्वर्गके ना देनेवाला यशके नाशकर्ने वाला संपूर्ण शास्त्र वेदोंमें निंदित उपपति अर्थात् जारस्त्रीको होताहै इसलिये स्त्रियोंको परपुरुषसे एकांत भाषण हास्य विहार अति निषिद्धहै। और इसमें याज्ञवल्क्यजीभी लिखते हैं ॥

पितृमातृश्वसृभ्रातृजामिसम्बंधमातुलैः ॥ हीनानस्याद्विनाभर्त्रा गर्हणीयान्यथा भवेत्। पतिप्रियहितेयुक्तास्वाचाराविजितेन्द्रिया ॥ सेहकीर्तिमवाप्नोतिमोदतेचोमयासह॥रक्षेत्कन्यांपितांविन्नांपतिःपुत्रास्तुवार्द्धकेअभावेज्ञातयस्तेषांनस्वातंत्र्यंकचित्स्त्रियाः॥

अर्थ-पिता माता वहन भ्राता बंधुओंकी स्त्री संबंधि मातुल इन्से रहित विना भर्त्ताके स्त्री ना होवे यदि होय तो विना भर्ताके निंदित होतीहै ॥

और जो स्त्री पतिके प्रियमें हित आचार शुद्ध विजित इंद्रिय सो इस लोकमें सुखको प्रात होतीहै मरनेबाद पार्वतीके लोकमें आनंद पार्वतीसे करतीहै ॥ और कन्याको पिता रक्षा करे विवाहीकी पति रक्षा करे वृद्धकी पुत्र रक्षा करे इन्के अभावमें ज्ञाति रक्षा करे अर्थात् स्वतंत्र स्त्री नाहो और वसिष्ठसंहितामें लिखाहै ॥

पितारक्षतिकौमारेभर्त्तारक्षतियौवने। पुत्राश्चस्थविरेभावेनस्त्रीस्वातंत्र्यमर्हति।असत्यंसाहसंमायामात्सर्यंचलचित्तता।निर्गुणत्वमशौचत्वंस्त्रीणांदोपाःस्वभावजाः॥अर्थात्-झूठबोलनासाहसमायाक्रोधचंचलता निर्गुणअपवित्ररहनायहस्त्रियोंकेस्वाभाविकदोपहैं॥ अन्यच्च। पानंदुर्जनसंसर्गःपत्त्याचविरहोटनम्। स्वमश्चान्यगृहेवासोनारीणांदूपणानिपट्॥

अर्थ-मद्यका पीना १ बुरी सोभत कुसंगत २ पतिसे वियोग कलह३भ्रमण देश स्थानोंमें४और के गृहमें शयन५ अन्य गृहमें वास ६ यह पट् दोपोंसे स्त्री दुष्ट हो जाती है कारण इसमें स्वतन्त्रता इस लिये स्त्रियोंको अपने वशमें रखना उचितहै और मांस का भक्षण स्त्रीको बडे रोगादि करनेवाला होनेसे वर्जनीयहै जैसे चिकित्सा शास्त्र भावप्रकाशमें लिखाहै (आमिपस्याशनंयत्नात्ममदापरिवर्जयेत्) अर्थ-मांसका भक्षण स्त्री अवश्य छोडदे ॥ और द्वार-

देशमें बैठना अर्थात् प्रतिदिन अपने द्वारपर बैठ और सर्व बातमें हास्य (हंसना) और गवाक्ष (झरोखे) से देखना बहुत प्रलाप (वृथा वाद करना) यह कुलस्त्रियोंके दोषहैं इस्को व्यासजी लिखतेहैं ॥

द्वारोपवेशनंनित्यंगवाक्षेणनिरीक्षणम् ।
असत्प्रलापोहास्यंचदूषणंकुलयोषिताम् ॥

अन्यच्च

स्त्रीशूद्रोऽनुपनीतश्चवेदमंत्रान्विवर्जयेत् ॥अर्थ-स्त्रीशूद्रयहवेदमंत्रोंकोत्यागदे ॥ इससेपुराणश्रवणाध्ययनतुलसीपूजनहरितालिकाव्रतगौरीपूजनयहशूद्रकमलाकरसेदेखेअवश्यकर्तव्यहै ॥ औरभगवान्पराशरजी लिखतेहैंऋतुस्नातांतुयोभार्य्यांसन्निधौनोपगच्छति । घोरायांभ्रूणहत्यायांयुज्यतेनात्रसंशयः ॥ ऋतुस्नातातुयानारीभर्तारंनोपसर्पति । सामृतानरकंयातिविधवाचपुनःपुनः ॥

अर्थ–जो स्त्री ऋतुस्नानके अनन्तर अपने भर्तासे संभोग नहीं करती वह मरनेबाद नरकको प्राप्त होतीहै और वारंवार विधवा होतीहै इस प्रकार ऋतुकालमें स्वस्थ हो जो पुरुष स्त्रीको नहीं प्राप्त होता वहभी घोर जो भ्रूणहत्या अथवा गर्भहत्या उस्को प्राप्त होताहै यदि रोगयुक्त हो तो ना जानेसे दोष नहीं होता अन्यथा प्रमादसे जो ना प्राप्त होवे वह पापका अधिकारी अवश्यहै इस लिये ऋतुकालमें स्त्रीको भर्तासे संभोग आवश्यकहै अन्यथा स्वेच्छासेहै ।

पराशरः ।

दरिद्रंव्याधितंधूर्तंभर्तारंयावमन्यते ।
साशुनीजायतेमृत्वासूकरीचपुनःपुनः ॥

अर्थ–जो स्त्री निर्धन वा रोगयुक्त वा मूर्ख भर्ता का प्रमादसे तिरस्कार करतीहै वह स्त्री मरकर शुनी (कुत्ती) सूकरीके वारंवार जन्मको प्राप्त होतीहै ॥ इसलिये भर्ताका अपमान स्त्री मात्रको कदाचित् ना करना चाहिये ॥

स्मृतिपाराशरः ।

पत्यौजीवतियानारीउपोष्यव्रतमाचरेत् ।
आयुष्यंहरतेपत्युःसानारीनरकंव्रजेत् ॥

अर्थ–जो सौभाग्यवती अर्थात् पतिवती स्त्री उपवास व्रत आचरण करतीहै वह पतिकी आयुको नष्ट कर मरकर नरकको प्राप्त होतीहै ॥

मनुः ।

अपृष्ट्वाचैवभर्तारंयानारीकुरुतेव्रतम् ।
सर्वंतद्राक्षसान्गच्छेदित्येवंमनुरब्रवीत् ॥

अर्थ–जो स्त्री भर्ताकी आज्ञा विना व्रत नियम दानादि करतीहै उसका फल राक्षसोंको मिलताहै ऐसे मनुजी कहते हैं इस स्मृतिमें मनुजीका आशय है ॥

पाराशरी ।

नष्टेमृतेप्रव्रजितेक्लीवेचपतितेऽपतौ ।
पंचस्वापत्सुनारीणांपतिरन्योविधीयते ॥

अर्थ–नष्ट मृत संन्यस्त क्लीब पतित इन पंच आपतमें स्त्री-को अन्य पति विधान कियाहै ॥ शंका है कि एक पतिके मरने पर द्वितीयपति उसके मरनेपै तृतीय चतुर्थ आदि असंख्य स्त्रीको पति कर्तव्य है क्योंकी पराशरजी स्वयं लिखतेहैं नष्टे मृते इत्यादि उत्तर यहहै कि पति शब्दका क्या अर्थहै यदि तुम कहो कि पति अर्थात् पाणिग्रहण जिससे करा हो तो हम कहते यहहै की (पतौ) यह रूप सिद्ध कैसे होताहै यदि कहै कि पतिशब्दकी विभक्तिमें (•अच्चघेः) इस सूत्रसे घिसंज्ञकङिको (औत् घिको अत्) होकर पतौ सिद्ध भया तो हम कहते हैं कि (पतिःसमास एवघिसंज्ञः) अर्थात् पतिशब्दकी समासमेंही घि संज्ञा होतीहै तो इहां समास नही एकही शब्दहै॥और केवल पतिशब्दका सप्तमी विभक्तिमें (पत्यौ) यह शब्द बनताहै ॥ इसलिये इहाँ असिद्ध असंस्कृत पति शब्दके प्रयोगसे भगवान् पराशर का यही आशयहै कि, असंस्कृत अर्थात् जिस्का पाणिग्रहण नाहो केवल वाङ्मात्र से पतिहो अर्थात् वाग्दान मात्र कियाहो उस पतिको नष्ट मृत संन्यस्त क्लीब होनेपर और पति स्त्रीको कर्तव्यहै ॥ और यह बात आचारसेभी सनातन सिद्धहै ॥ यदि आप यह शंका करे कि भगवान् पराशरजीने यह अशुद्ध (पतौ) प्रयोग लिखा क्यों वह हमारे तुमारे सदृश थे वह तो आचार्य धर्मशास्त्रके मुख्य हैं तो इस्का उत्तर देतेहैं कि यह जो आपको पूर्वोक्त कहाहैं सो उन्का आशय इस (पतौ) शब्दसेही मालुम होताहै। महाशय वह भगवान् पराशरजी तो ठीक २ लिखगये परंतु आपकी समझमेंही गडबड है। पराशरजीने अनञ् तत्पुरुप समासान्त पति शब्दकी संज्ञाकर (अपतौ) यह शब्द सिद्ध संस्कृत लिखाहै ॥ यथा न पतिः अपतिः तस्मि-न् अपतौ पतिभिन्ने पतिसदृशे ईषत्पताविसर्थः ॥ तस्मिंश्च

नष्टे मृते सति स्त्रीणामन्यः पतिर्विधेय इति ॥ ऐसे पराश-रजी अपने आशय को लिखते हैं यदि तुम कहो कि वहाँ तो क्लीबे च पतितेऽपतौ ऐसा लिखाहै अपति तो लिखा नहीं उत्तर--महात्मन् यहां पररूप एङः पदान्तादति इस सूत्रसे (पतितेअपतौ) अकारका पररूप भयाहै ॥ और आगे द्विती-यश्लोकमें भी इस स्मृतिश्लोकके प्रगट कर्ते हैं ॥

मृतेभर्तरियानारीब्रह्मचर्यव्रतेस्थिता ॥
सामृतालभतेस्वर्गंयथातेब्रह्मचारिणः ॥

अर्थ-जो स्त्री पतिकी मृत्युपर ब्रह्मचर्य व्रतको धारण क-रतीहै वह मृत्यु होनेपर ब्रह्मचारीवत् स्वर्गको प्राप्त होती है इसलिये पतिशब्दसे असंस्कृत अर्थात् वाग्दान मात्र क-हाहै ॥ तो उक्तदोष ना भया॥ नहीं तो पूर्वोक्त व्यर्थ होताहै ॥ और इस वाक्यकी दृढताकेलिये और भी प्रमाण देतेहैं॥

तिस्रःकोट्योर्धकोटीचयानिलोमानिमानवे ॥
तावत्कालंवसेत्स्वर्गंभर्तारंयानुगच्छति ॥
व्यालग्राहीयथाव्यालंबलादुद्धरतेबिलात् ॥
तद्वद्भर्तारमादायतेनैवसहमोदते ॥
पुरुषेणापिचोक्तायादृष्टावाक्रुद्धचक्षुषा ॥
सुप्रसन्नमुखीभर्तुःसानारीधर्मभाजनम् ॥
चितौपरिष्वज्यविचेतनंपतिं
प्रियाहियामुञ्चतिदेहमात्मनः ।
कृत्वापिपापंशतलक्षमप्यसौ
पतिंगृहीत्वासुरलोकमाप्नुयात् ॥

इत्यादि अनेक प्रमाण सतीविधानके व्यर्थ होते हैं और दरिद्रं व्याधितंधूर्तं। (पत्यौजीवति) इत्यादि (इमानारी-रविधवा ऋ०मंडल १० सू०८५) इत्यादि अनेक वेदमंत्रोंसे विधवाविवाह औ उपपतिस्वीकार (जारसे मैत्री) निषिद्ध है। यह मैंने विवाहका अंग समझकर साथ प्रमाणोंके स्पष्ट भाषामें सर्वोपकारके लिये स्त्रियोंका आचार दिङ्मात्र लिखाहै जिन महाशयोंको विशेष आकांक्षाहो वह मन्वादि धर्मशास्त्र ऋग्वेदादिमें अच्छीतरह देखले॥ विस्तार भयसे बहुत नही लिखा॥ इसका प्रचार अवश्य धर्माभिलाषी पुरुषोंको उचितहै॥ इतिश्रीकर्पूरस्थलनिवासिगौतमगोत्र (शौरि) अन्वयालंकृत दैवज्ञ दुनिचन्द्रात्मज पण्डितविष्णुदत्तवैदिककृतःस्त्रीणामाचारःसमाप्तः॥ शुभम्॥ इत्यष्टमंप्रकरणसमाप्तम॥

श्रीः।

अथ नवमंप्रकरणम्।

(रजस्वलाकृत्यम्)

अथ रजस्वलास्वरूपम्।

भावप्रकाशे-द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वमापञ्चाशत्समाः स्त्रियाः। मासिमासिभगद्वारात्प्रकृत्यैवार्तवंस्रवेत्॥ आर्तवस्रावदिवसाहतुःषोडशरात्रयः। गर्भग्रहणयोग्यस्तु सएवसमयःस्मृतः॥

याज्ञवल्क्येनाप्युक्तम्।

षोडशर्तुनिशाःस्त्रीणांतास्मिन्युग्मासुसंविशेत् । ब्रह्मचार्येवपर्वण्याद्याश्चतस्रश्चवर्जयेत्।एवंगच्छन्स्त्रियंक्षामांमघामूलंचवर्जयेत् ।सुस्थइन्दौसकृत्पुत्रंलक्षण्यंजनयेत्पुमान्॥ सर्वासामेवचतुर्वर्णस्त्रीणांसर्वंवादिसम्मतःपूर्वोक्तःसमयः । ग्रंथांतरेतुविशेषः । तद्यथा।स्नानदिवसादूर्ध्वं द्वादशपरिमितरात्रावधिर्ब्राह्मण्याः ।दशरात्रावधिःक्षत्रियायाः। अष्टरात्रावधिर्वैश्यायाः। षड्रात्रावधिशूद्रायागर्भधारणेशक्तिरिति ॥ रजस्वलास्वरूपमुक्त्वानियमानाहभावमिश्रप्रकाशे॥आर्तवस्रावदिवसादहिंसाब्रह्मचारिणी।शयीतदर्भशय्यायांपश्येदपिपतिंनच।करेशरावेपर्णेवाहविष्यंत्र्यहमाचरेत्। अश्रुपातंनखच्छेदमभ्यंगमनुलेपनम्॥ नेत्रयोरञ्जनंस्नानंदिवास्वापंप्रधावनम् । अत्युच्चशब्दश्रवणंहसनंबहुभाषणम् । आयासंभूमिखननंप्रवातञ्चविवर्जयेत् ॥ इममेवाशयंयथाहभगवान्धन्वन्तरिःसुश्रुते । (ऋतौप्रथमदिवसात्प्रभृतिब्रह्मचारिणीदिवास्वप्नाश्रुपातस्नानानुलेपनाभ्यङ्गालङ्कारमाल्यनखच्छेदनप्रधावनहसनकथनातिशब्दश्रवणावलेखनायासान्परिहरेत्। दर्भसंस्तरशायिनींकरतलशरावपर्णान्यतमशरावभाजनाहविष्याशनान्त्र्यहंचभर्तासंरक्षेदिति ॥ एता

न्नियमानुल्लंघ्ययावर्ततेताम्प्रतिदोपमाहभावप्रकाशे
भावमिश्रः ॥ यथा–
अज्ञानाद्वाप्रमादाद्वालोभाद्वादैवतश्चवा ।साचेत्कुर्या
न्निषिद्धानिगर्भोदोषाँस्तदाप्नुयात् ॥ एतस्यारोदना
द्गर्भोभवेद्विकृतलोचनः । नखच्छेदेनकुनखीकुष्ठी
त्वभ्यंगतोभवेत् ॥ अनुलेपात्तथास्नानाद्दुःशीलोऽ
भ्यञ्जनादहक् ॥ स्वापशीलोदिवास्वापाच्चञ्चलः
स्यात्प्रधावनात्॥ अत्युच्चशब्दश्रवणाद्बधिरःखलुजा
यते।तालुदन्तोष्ठजिव्हासुश्यावोहसनतोभवेत्॥प्रला
पीभूरिकथनादुन्मत्तस्तुपरिश्रमात् ॥स्खलतेभूमिख
ननादुन्मत्तोवातसेवनात्॥अथचतुर्थदिवसानन्तरंवह
तिरक्तेगच्छतःपुरुषस्यदोपमाहभगवाञ्छुश्रुतः ॥
किञ्चतत्रप्रथमदिवसेऋतुमत्यांमैथुनगमनमनायुष्यं
पुंसांभवति। यश्चतत्राधीयतेगर्भःसोऽप्रसवमानोवि
मुच्यतेप्राणैः॥ द्वितीयेप्येवं (सूतिकागृहेवा)तृतीये
प्येवमसम्पूर्णाङ्गोऽल्पायुश्चभवति ॥ यथानद्यांप्रति
स्रोतःद्रव्यंप्रक्षिप्तंप्रतिनिवर्ततेनोर्ध्वंगच्छातितद्वदेव
द्रष्टव्यम् । तस्मान्नियमवतींत्रिरात्रंपरिहरेत् ॥
चतुर्थेतुसम्पूर्णाङ्गोदीर्घायुश्चभवति ॥ इममेवाशयं
भावप्रकाशेभावमिश्रोपिभर्तृकृत्येविशिनष्टि दृष्टा
न्तेन ॥ यथा–प्रवहत्सलिलेक्षिप्तंद्रव्यंगच्छत्यधोयं
था ॥ तथावहतिरक्तेतुक्षिप्तंवीर्य्यमधोव्रजेत्॥(अतः)

आयुःक्षयभयाद्भर्ताप्रथमेदिवसेस्त्रियम् । द्वितीयेपि दिनेरत्यैत्यजेद्दतुमतींतथा ॥ तत्रयश्चाहितोगर्भोजा यमानोनजीवति । आहितोयस्तृतीयेह्निस्वल्पायुर्वि कलाङ्गकः ॥ अतश्चतुर्थीपष्ठीस्यादष्टमीदशमीत था।द्वादशीवापियारात्रिस्तस्यांतांविधिनाभजेत्।वि धिनाकोर्थोगर्भाधानोक्तविधानेन॥अत्रोत्तरोत्तरंविद्या दायुरारोग्यमेवच ।प्रजासौभाग्यमैश्वर्य्यंबलंचाभिग मात्फलं ।धर्मशास्त्रेप्रथमरात्रिचतुष्टयगमनेनिपेधमा हपाराशरः ॥ प्रथमेऽहनिचाण्डालीद्वितीयेब्रह्म घातिनी । तृतीयेरजकीपुंसायथावर्ज्यातथाङ्गना ॥ व्याधिमतीचवर्ज्या ॥ तत्रस्त्रीणांव्याधयःप्रदरादय स्तद्युक्तानिषिद्धा । तत्रापिविशेपाद्योनिरोगिणी अशुद्धगर्भदोपमाविष्करोतिप्रकाशेभावमिश्रः ॥ दम्पत्योःकुष्ठबाहुल्याद्दुष्टशोणितशुक्रयोः । यदप त्यंतयोर्जातंज्ञेयंतदपिकुष्ठितमिति ॥ गर्भाधानेऽ योग्यंपुरुषंस्त्रियश्चाहसएव ॥ अत्यांशितोऽधृतिःक्षु द्वान्सव्यथाङ्गःपिपासितः।बालोवृद्धोऽन्यवेगार्तस्त्य जेद्रोगीचमैथुनम् ॥ रजस्वलाव्याधिमतीविशेपा द्योनिरोगिणी ॥ वयोधिकाचानिष्कामामलिनागर्भि णीतथा ॥एतासांसङ्गमात्पुंसांवैगुण्यानिभवन्तिहि॥

युग्मरात्रीणांफलमाह ।

युग्मासुपुत्राजायन्तेस्त्रियोऽयुग्मासुरात्रिपु।।तत्रस्त्रीपु

रुपयोःसंभोगेयादृगुक्तस्तादृगुच्यते॥स्नातश्चंदनलि
ताङ्गःसुगन्धिःसुमनोर्चितः। भुक्तवृष्यःसुवसनःसुवेषः
समलङ्कृतः।ताम्बूलवदनस्तस्यामनुरक्तोऽधिकस्म
रःपुत्रार्थीपुरुषोनारीमुपेयाच्छयनेशुभे॥भार्य्यापि॥
पुरुषस्यगुणैर्युक्ताविहितन्यूनभोजना।नारीऋतुमती
पुंसासङ्गच्छेत्तुसुतार्थिनी॥ पूर्वंपश्येदृतुस्नातायादृशं
नरमङ्गना॥तादृशंजनयेत्पुत्रमतःपश्येत्पतिंप्रियम्॥
प्रियमितिभर्तर्य्यसन्नेपुत्रादिकमपिपश्येत् ॥ अतः
किंसिद्धम् ॥ पतिस्नेहदृष्ट्यातथापुत्रंपश्येत्असमी
पेएपांभास्करंपश्येत्। एवंमंगलशब्दश्चाश्रौषीत्।
मधुरान्नंभक्षयेत्॥भूषणवस्त्रादिकंसंधार्य्यरात्रौविहि
तन्यूनभोजनासुतार्थिनीस्त्रीसुमुहूर्तेसंगच्छेत् ॥ ए
तेनदिवसगमनंनिषिद्धंकर्मकाण्डचिकित्साशास्त्रे ॥
यथाचगृह्यसूत्रेभगवान्पारस्करः ॥ (यदिदिवामै
थुनंव्रजेत्क्लीबाऽल्पवीर्याअल्पायुषश्चप्रसूयन्तेतस्मा
देतद्वर्जयेत्प्रजाकामोगृहीति) भावप्रकाशचिकि
त्साशास्त्रेभावमिश्रोप्याह। आयुःक्षयभयाद्विद्वान्रा
त्रिसेवेतकामिनीम्। अवश्यंदिसेवेतत्तदाग्रीष्मवस
न्तयोः। ग्रीष्मवसन्तयोरित्यत्रभोगार्थसेवतनतुसुता
र्थम् अन्यथातस्मादेतद्वर्जयेत्प्रजाकामइतिव्यर्थस्या
त्॥ आवश्यकेभोगमपि ॥ गर्भाधानोक्तविधिनास
ङ्गच्छेदित्युक्तेगर्भाधानमुहूर्तमाहमुहूर्तचिंतामणौरा
मः ॥ यथा–

हस्तानिलाश्विमृगमैत्रवसुध्रुवाख्यैःशक्रान्वितैःशुभ
तिथौशुभवासरेच॥स्नायादथार्तववतीमृगपौष्णवायु
हस्ताश्विधातृभिरलंलभतेचगर्भम् ॥ यथाहस्तस्वा
तीअश्विनीमृगशिरअनुराधाउत्तरभाद्रपदारोहिणिज्ये
ष्ठाशुभतिथिरिक्तावर्जितशुभवारसौरारार्किविरहित
दिनेपुरजस्वलायाःस्नानंविधेयम् ॥ सुस्नातावस्त्रभू
षणसंयुतारात्रौमृगशिररेवतीस्वातिहस्तअश्विनीरो
हिणीएषुभेषुगमनात्स्त्रीगर्भंलभते ॥

(गमनेनिषेधमाहसएव)

गण्डान्तंत्रिविधंत्यजेन्निधनजन्मर्क्षेचमूलान्तकंदास्रं
पौष्णमथोपरागदिवसंपातंतथावैधृतिं। पित्रोःश्राद्ध
दिनंदिवाचपरिघाद्यर्द्धंस्वपत्नीगमे भान्युत्पातहता
निमृत्युभवनंजन्मर्क्षतःपापभम् ॥

तद्यथा

गण्डान्तंचतुर्घटिकात्मकंज्येष्ठाशतभिषारेवतीएषां
तथातिथिगण्डान्तंद्विघटिकात्मकंतथालग्नगण्डान्तं
नवांशार्द्धंघट्यात्मकं ॥ जन्मर्क्षंतअष्टमनक्षत्रंनिधन
संज्ञकंमूलांत्यमश्विनीरेवतीतथोपरागःसूर्यचन्द्रग्रह
णम् ।(उपरागोग्रहोराहुग्रस्तेत्विन्दौचपूष्णिच) व्य
तीपातवैधृतियोगौपितुःश्राद्धदिनंतथादिनेपरिघार्द्धं
एतानिनक्षत्रयोगदिवसानिस्वस्त्रियं संतानार्थं ग

च्छतापुरुषेणअवश्यंवर्जनीयानि ॥ ऋतुमतीस्त्री मनसापिमैथुनचिंतनंनकुर्यात् । उक्तञ्चबृहन्नारदीये॥ मैथुनंमानसंवापिवाचिकंदेवतार्चनम् । वर्जयेच्चनमस्कारंदेवतानांरजस्वलेति ॥

अथरजस्वलायाऋतुशुद्ध्यनंतरंपतिरेवद्रष्टव्यःअसमीपेपत्युःपुत्रमुखंद्रष्टव्यंवासूर्यदर्शनंविधेयंनान्यपुरुषंमनसावाचास्मरेत्चक्षुषानपश्येत् ॥ उक्तमिदं बृहन्नारदीये॥स्नात्वान्यंपुरुषंनारीनपश्येच्चरजस्वला। ईक्षेतभास्करंदेवंब्रह्मकूर्चंततःपिबेत् ॥ ब्रह्मकूर्चंपंचगव्यंस्नानानन्तरंशुद्ध्यर्थंपातव्यम् ॥

भाषामें रजस्वलास्त्रीका कर्तव्य लिखतेहैं–भावप्र०में लिखाहै कि, बारह वर्षके उपरंत५०वर्षतक स्त्रीके मास २ में भगद्वारा स्वभावसेही रुधिर ऋतु आतेहैं ॥ और ऋतुके प्रथम दिनसे ले १६ रात्रिपर्यंत गर्भ होनेके दिन होतेहैं ॥ इसलिये उन दिनोंमें पर्वणी ८।१४। ११। १५। अमावस यह तिथि और मघा मूलनक्षत्र छोड चंद्रअनुकूल हो तो गमन करें और रजस्वलास्त्री ३ तीन दिन पर्यंत यह नियम धारणकरे कि, हिंसा मतकरे ब्रह्मचारिणी हो पृथ्वीपर कुशा बिछायकर शयन करे पतिको मत दर्शन करें ॥ हाथमें वा माटीके वर्तनमें डाल भात कोमल अन्न एकवार खाय तीनदिन नेत्रोंमें सुरमा स्नान दिनका शयन धावन बडा शब्दश्रवण करना हास्य बहुत बोलना कसरत पृथिवीका खो॰ वायुसेवन छोडदेवें ॥ अन्यथा जो स्त्री अज्ञानसे वा प्रमादसे वा लोभसे अथवा जीवके कर्मसे इन कामोंको करतीहै तो गर्भ दोषोंको प्राप्त होताहै ॥ अर्थात् जो स्त्री ऋ

तुकालमें रोदनकर्तीहै उसका गर्भ नेत्ररोगी होताहै ॥ यदि नख कटवावे तो गर्भस्थबालकके नख खराब हो जातेहैं ॥ यदि स्त्री अभ्यंग उवटना मर्दनादि करे तो बालकको कुष्ठ होजाताहै ॥ चंदनलेप स्नानादि करनेसे बालक सदैव रोगी सा होताहै अंजनकरनेसे नेत्रहीन अंध होजाताहै दिनके सोनेसे शयनशील होताहै और दौडनेसे चंचलहोताहै बडा ऊंचा शब्दश्रवण करनेसे बालक बाहिरा होताहै अतिहास्यसे तालुदांत ओष्ठमे काला होजाताहै बहुतभाषणसे बकवादी बालक होताहै ॥ कसरत और वायुके सेवनसे उन्मत्त (पागल) बालक होजाताहै ॥ माटी खोदनेसे जंघामें तागत नहीं होती लँगडा होताहै ॥ इसलिये नियम पालन करने चाहिये ॥

अन्यच्च-

ऋतुकालके तीनादिवसोंमें स्त्रीसे संभोगकरना आयुके नष्टकरनेवाला तेजहानिकारक अतिनिषिद्धहै उन्में यदि गर्भ कराजाय तो गिरजाताहै ॥ ऐसेही दूसरेदिन (और प्रसूत स्थानमें) तृतीयदिनमें हीनांग अल्पायु होताहै ॥ दृष्टांत जैसे वेगयुक्त नदीके प्रवाहमें फेंकी हुई वस्तु ऊपरको नहीं जाती अर्थात् नीचेकोही गिरजातीहै वैसे यहाभी समुझें इसलिये चतुर्थी ४ षष्ठी ६ अष्टमी ८ दशमी १० द्वादशी १२रात्रिमें स्त्रीको गर्भ होनेसे क्रमपूर्वक आयु ४ आरोग्य६ ऐश्वर्य ६ प्रजा ८ सौभाग्य १० बल १२ पूर्ण बालकमें होताहै ॥ और प्रथम दिन स्त्री चांडाली. दूसरे दिन ब्रह्महत्यारी तीसरे दिनमें रजकी वैश्या समान होतीहै इन दिनोंमें तथा व्याधियोनि रोगादियुक्त मलीन तथा गर्भिणी निष्काम स्त्रीसे भोग मत करे ॥ यदि स्त्री-पुरुषको कुष्ठ हो तो उन्के दुष्ट वीर्य ऋतुसे उत्पन्न गर्भभी समयमें

कुष्ठी होजाताहै ॥ इसलिये इन्को छोड़देवे ॥ और यह पुरुष मैथुन मतकरे, जो बहुत भोजन कर चुकाहै धैर्य्यरहित क्षुधायुक्त रोगी तृषा युक्त बालक १६ वर्षके नीचे वृद्ध ८० वर्षके ऊपर जो प्रथम किसी स्त्रीसे भोग कर चुका हो यह पुरुष मैथुन मत करे ॥ युग्मोंमें ४ । ६ । ८ ।१० । १२ दिनोंमें भोगकरनेसे पुत्र होताहै अयुग्म । ५ । ७ । ९ । ११ । वें दिनमें भोग करनेसे कन्या होतीहै ॥ और वीर्य अधिकसे पुत्र ऋतु अधिकसे कन्या बराबर दोनोंके नपुंसक होताहै॥

संभोगप्रकार ।

स्नानकर चंदन लगाय गंध धारण कर पुष्पमाला पहिन वृष्य अन्न दुग्ध घृतादि सेवनकर सुंदर वस्त्र भूषण धारण कर तांबूल भक्षणकर ऐसीही अपनी स्त्रीसे प्रीतिवाला अतिकामयुक्त पुरुष पुत्रकी इच्छाकेलिये शुभपर्यंकमें शयन करे नतु कामार्थ ॥ स्त्रीभी पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त अल्प भोजन कर ऋतुसे शुद्ध हो उक्त दिनोंमें पुत्रकी इच्छाकर पुरुषके साथ भोग करे ॥ ऋतुस्नात स्त्री जैसे मनुष्यका दर्शन करे वैसीही संतान उत्पन्न करतीहै इसलिये पतिको वा पुत्रको देखे यदि वह समीप नहो तो सूर्यभगवान्‌का दर्शन करे

संभोगनिषेध ।

आयुके क्षयके भयसे मनुष्य दिनको स्त्रीसे मत भोगकरे यदि वहाँ गर्भ होगा तो अल्पायुवाला कमताकत नपुंसक मूर्ख होगा इस लिये गृहस्थी लोग दिनको मैथुन मत करे ॥ कामार्थ मनुष्य अवशहुआ ग्रीष्म वसंतमें भोग करे यहभी गौण वाक्य है परंतु दिनमें भोग न करना यही मुख्य है ॥

अथ गर्भाधानका मुहूर्त ।

हस्त स्वाती अश्विनी मृगशिर अनुराधा उत्तराभाद्रपदा रोहिणी ज्येष्ठा रिक्ता विना शुभतिथि शनि सूर्य मंगल विना वारको रजस्वला स्नानकर भूषणादियुक्त रात्रिमें मृगशिर रेवती स्वाती हस्त अश्विनी रोहिणी इन नक्षत्रोंमें संभोग करनेसे गर्भधारण करती है ॥

(निषिद्ध काल)

गंडकी ४ घटी अंतकी ज्येष्ठा शतभिषादि लग्नगंडांत जन्मनक्षत्रसे अष्टम नक्षत्र अष्टम राशि मूल अश्विनी रेवतीग्रहण व्यतीपात वैधृति पिताका श्राद्धदिन परिघका अर्धभाग यह पूर्वोक्त नक्षत्रादि संतानकी इच्छासे अपनी स्त्रीसे भोग करनेवाले मनुष्यको त्याज्य अवश्यहै ॥ ऋतु कालमें स्त्री मनसेभी मैथुनकी इच्छा मत करे ॥ क्यों कि अन्यथा दुष्टसंतान होतीहै ॥ऋतुके अंतमें पंचगव्य पानकर संभोगादि विधि करें॥यह संक्षेपसे रजस्वला विधानलिखाहै। प्रार्थनेयं दैवज्ञदुनिचंद्रात्मज पं०विष्णुदत्तवैदिकशर्मणः ।

इति श्रीकर्पूरस्थलनिवासिगौतमगोत्र (शोरि)अन्वयालंकृतदैवज्ञदुनिचंद्रात्मजश्रीमच्छ्रीपण्डितविष्णुदत्तवैदिककृतंरजस्वलाकृत्यंसमाप्तम् ॥ शुभमस्तु श्रीरामचंद्रप्रसादात् ॥ समाप्तंचेदंनवमंप्रकरणम् ॥

अथ प्रकीर्णाध्यायः प्रारभ्यते ।

अथविवाहेलग्नादिद्वादशस्थानेसूर्यादीनांफलमाह ॥ अथसूर्यस्य ॥ मृति १,विधनता २ धनं ३ सहजसं

क्षयः ४ पुत्रसूः ५ प्रियस्यपरमोन्नति ६ र्विधवता७ चिरंजीविताम्८॥शुभाकृति९ रशीलता१०विविधल ब्धि११रर्थक्षयः १२ तनुप्रभृतिभास्करेसतिफलंभ वेद्योपिताम्॥१॥अथ चंद्रस्य॥प्राणस्यच्युति१रर्थसंप २ दुभयप्रीतिश्च ३ वंधून्नति ४ र्वैपुत्र्यंच ५ सवैरता च ६ नियतंसापत्न्य ७ मात्मव्यथा ८ ॥ स्त्रीसूतिः ९ परकर्मकृत् १० स्वमधिका ११ लब्धिक्षयः१२ संपदां स्यादिंदावुदयात्सुखेतुकथितोवंधुक्षयः कै श्चन ॥ २ ॥ अथभौमस्यफ०॥ पंचत्वञ्च १ दरिद्रता २ सधनता३ सुभ्रातृवैरं ४ सुतानुत्पत्ति ५ र्दयितो न्नतिः ६ कुचरिता ७ सक्तिश्चरक्तस्रुतिः ८॥स्याद्भर्तृ प्रतिकूलता ९ऽऽसिपरुचि१०र्वित्ताप्ति ११ रर्थक्षयो १२नारीणासुदयादिवर्तिनिमहीपुत्रेविवाहोत्सवे ३॥ अथबुधस्यफलम्॥सौम्येभर्तृपरायणा१स्वगृहिणी२ स्यात्स्वामिपक्षार्चिता ३ वंधुत्वंच ४ सुतान्विताच ५ विगत ६ प्रद्वेषिपक्षातथा७॥ वंध्याच ८ स्वभिरु ज्झितातुकृतिनीमाया ९ विनीच क्रमात् १० भूरिद्र व्य ११ वती वहुव्यय १२ परालग्नादिभावस्थिते॥

अथ गुरुफलम् ॥

स्वाभीष्टा १ धनभागिनी २ प्रमुदिता ३ द्रव्यान्वि ता ४ स्वात्मजा ५ नद्यारि ६ दयितोज्झिता ७ च

विगतप्राणा ८ रताश्रेयसि ९॥सिद्धार्था १० विभवा
न्विता ११ च विधना १२ भावेषु मूर्त्यादिषु–

अथ शुक्रफलम् ॥

मनोभीष्टाभर्तु १ र्धनचयपरा २ देवररता ३ कुले
ष्टा ४ सत्पुत्रा ५ विहितवहुवैरा ६ न्यनिरता ७ ॥
व्यसु ८ र्धर्मेष्टास्या ९ त्कुशलनिरता १० भूरिविभ
वा ११ निरर्था १२ शुक्रेस्याद्भवतिखलुलग्नप्रभृतिषु ॥

अथ शनिफलम् ॥

स्यात्पुंश्चल्य १ धना २ ऽर्थवत्य ३ थयशोहीना ४
चहृद्रोगिणी ५ शत्रुघ्ना ६ निजगर्भपाटनरता ७
नीरुक्च ८ भग्नव्रता ९॥दुःशीला १० वहुवित्तसंग्रह
परा ११ पानप्रसक्तांगना १२ स्याच्छ्याद्रविनंदनेन
शिखिनास्वर्भानुनाचक्रमात् ॥ शनिवत्राहुकेत्वो
रपि फलंज्ञेयम् ॥
इति श्रीकर्पूरस्थलीयदैवज्ञदुनिचंद्रात्मज (शौरि)
पण्डितविष्णुदत्तवैदिकसंगृहीतंविवाहकुंडलीस्थि
तग्रहफलंसमाप्तम् ॥ समाप्तश्चायंप्रकीर्णोध्यायः ॥
शुभमस्तु श्रीरामचंद्रप्रसादात् ॥

श्रीः ।

अथार्कविवाहः ॥

प्रयोगरत्नेमात्स्ये ।

ॐस्वस्तिश्रीगणेशाय नमः ॥ तृतीयांमानुपींनैवच तुर्थीयःसमुद्वहेत् । पुत्रपौत्रादिसंपन्नःकुटुंबीसाग्निको वरः॥उद्वहेद्रतिसिद्ध्यर्थंतृतीयांनकदाचन ॥मोहाद ज्ञानतोवापि यदिगच्छेत्तुमानुपीम् ॥ नश्यत्येवनसं देहोगर्गस्य वचनंयथा ॥

तत्रैवसंग्रहे–

तृतीयांयदिचोद्वाहेत्तर्हिसाविधवाभवेत् ।चतुर्थ्यादिविवाहार्थंतृतीयेऽर्कसमुद्वहेत् ॥ आदित्यदिवसेवापिहस्तर्क्षेवा शनैश्वरे । शुभेदिनेवापूर्वाह्णेकुर्यादर्कविवाहकम् ॥

व्यासः–स्नात्वालंकृतवासास्तुरक्तगंधादिभूपितम् । सपुष्पफलशाखैकमर्कगुल्मंसमाश्रयेत् ॥ सलक्षणेनसंयुक्तमर्कं संस्थाप्ययत्नतः॥अर्ककन्याप्रदानार्थमाचार्यंकल्पयेत्पुरा ॥ अर्कसन्निधिमागत्यतत्रस्वस्त्यादिवाचयेत् । नांदीश्राद्धेहिरण्येनअष्टवर्गान्प्रपूजयेत् । पूजयेन्मधुपर्केणवरंविप्रस्यहस्ततः । यज्ञोपवीतंवस्त्रंचहस्तकर्णादिभूपणम् । उष्णीपगंधमाल्यादिवरायास्मैप्रदापयेत् । स्वशाखोक्तप्रकारेणमधुपर्कंसमाचरेत् ॥

आह्ने-ग्रामात्प्राच्यामुदीच्यांवासुपुष्पफलसंयुतं।परीक्ष्य यत्नतोधस्तात्स्थण्डिलादियथाविधि ॥ कुर्यादितिशेषः ॥ कृत्वार्कपुरतस्तिष्ठन्प्रार्थयेतद्विजोत्तमः । त्रिलोकवासिन्स प्ताश्वछाययासहितोरवे ॥ तृतीयोद्वाहजंदोषंनिवारयसुखंकु रुतत्राध्यारोप्यदेवेशंछाययासहितंरविम् ॥वस्त्रैर्माल्यैस्तथा गन्धैस्तन्मंत्रेणैवपूजयेत् । तत्रैवश्वेतवर्णेनतथाकार्पासतंतु भिः । गन्धपुष्पैःसमभ्यर्च्यअर्कलिंगैरभिषिच्यच ॥ गुडौदनं तुनैवेद्यंताम्बूलंचसमर्पयेत् ।

व्यासः—अर्कप्रदक्षिणीकुर्वञ्जपेन्मंत्रमिमंबुधः।ममप्रीतिक रायेयंमयासृष्टापुरातनी ॥ अर्कजाब्रह्मणासृष्टाअस्माकंप्रति रक्षतु ॥पुनःप्रदक्षिणीकुर्यान्मंत्रेणानेनधर्मवित् । नमस्तेमंग लेदेवि नमःसवितुरात्मजे । त्राहिमांकृपयादेविपत्नीत्वंमेइ हागता । अर्कत्वंब्रह्मणासृष्टःसर्वप्राणिहितायच । वृक्षाणामा दिभूतस्त्वंदेवानांप्रीतिवर्द्धनः ॥ तृतीयोद्वाहजंपापंमृत्युंचा शुविनाशय । ततश्चकन्यावरणंत्रिपुरुषंकुलमुद्धरेत् । आदि त्यः सविताचार्कपुत्रीपौत्रीचनप्त्रिका॥गोत्रंकाश्यप इत्युक्तं लोकेलौकिकमाचरेत् । सुमुहूर्तेनिरीक्षेतस्वस्तिसूक्तमुदीर यन् । आशीर्भिःसहितैःकुर्यादाचार्यप्रमुखैर्द्विजैः ॥ अथाचा र्यसमाहूयविधिनातन्मुखाच्चताम् । प्रतिगृह्यततोहोमंगृह्योक्त विधिनाचरेत् ।

आशीर्हितैत्यादिभिर्मंभि ॥

व्यासः-अर्ककन्यामिमांविप्रयथाशक्तिविभूषिताम्।गोत्राय शर्म्मणेतुभ्यंदत्तांविप्रसमाश्रय। अंजल्यक्षतकर्म्माणिकृत्वा कंकणपूर्वकम् ॥ यावत्पंचवृतासूत्रंतावदर्कंप्रवेष्टयेत् । स्वशाखोक्तेनमंत्रेणगायत्र्यावाथवाजपेत् । पंचीकृत्यपुनःसूत्रंस्कंधेवध्नातिमंत्रतः ॥ बृहत्सामेतिमंत्रेणसूत्ररक्षांप्रकल्पयेत्।अर्कस्यपुरतःपश्चाद्दक्षिणोत्तरतस्तथा।कुम्भांश्चनिक्षिपेत्पश्चादाग्नेयादिचतुष्टये। सवस्त्रंप्रतिकुम्भंचात्रिसूत्रेणैववेष्टयेत् ॥ हरिद्रागन्धसंयुक्तंपूरयेच्छीतलंजलम् । प्रतिकुंभंमहाविष्णुंसंपूज्यपरमेश्वरम् । पाद्यार्घादिनिवेद्यान्तंकुर्यान्नाम्नैवमंत्रवित् ॥

अत्रशौनकोक्तहोमप्रकारः ।

तृतीयेस्त्रीविवाहेतुसंप्राप्तेपुरुषस्यतु।आर्कविवाहंवक्ष्यामिशौनकोहंविधानतः ॥ अर्कसन्निधिमागत्यतत्रस्वस्त्यादिवाचयेत् । नान्दीश्राद्धंप्रकुर्वीतस्थंडिलंचप्रकल्पयेत् ॥ अर्कमभ्यर्च्यसौर्य्याचगंधपुष्पाक्षतादिभिः ॥सौर्यासूर्यदेवत्यया ॥ आकृष्णेनेत्यनया । स्वयंचालंकृतस्तद्वद्वस्त्रमाल्यादिभिः शुभैः । अर्कस्योत्तरदेशेतुसमन्वारब्धएतया ॥ एतयार्ककन्यया । उल्लेखनादिकंकुर्यादाघारांतमतःपरम् । आज्याहुतिंचजुहुयात्संगोभिरनयैकया । यस्मैत्वाकामकामायेत्येतयर्चाततःपरम् । व्यस्ताभिश्चसमस्ताभिस्ततश्चस्विष्टकृद्भवेत् । परिषेचनपर्यंतमयाश्चेत्यादिकंक्रमात् ।प्रार्थनामंत्रादिविशेषमाहव्यासः ॥ पुनःप्रदक्षिणंकृत्वामंत्रमेतमुदी

रयेत् । मयाकृतमिदंकर्मस्थावरेपुजरायुणा । अर्कापत्या निनोदेहितत्सर्वंक्षंतुमर्हसि । इत्युक्त्वाशांतिसूक्तानिज स्वातंविसृजेत्पुनः ॥ गोयुग्मंदक्षिणांदद्यादाचार्यायचभक्तितः ॥ इतरेभ्योपिविप्रेभ्योदक्षिणांचापिशक्तितः । तत्सर्वंगु रवेदद्यादंतेपुण्याहमाचरेत् ॥

॥ अथप्रयोगविधिः ॥

तृतीयोद्वाहात्प्राग्दिनचतुष्टयाधिकव्यवहिते रविवारेश निवारेहस्तनक्षत्रेशुभदिनांतरेवा ग्रामात्प्राच्यामुदीच्यांवापु ष्पफलयुतार्काधस्तात्स्थण्डिलं कृत्वाऽर्कपश्चिमतउपवि श्यमासपक्षाद्युल्लिख्यममतृतीयमानुषीविवाहजदोषापनुत्त्य र्थमर्कविवाहंकरिष्यइतिसंकल्प्य गणेशपूजास्वस्तिवाचन- मातृपूजनवृद्धिश्राद्धाचार्यवरणानिकुर्यात् । तत्रवृद्धिश्राद्धं सुवर्णेन ॥ अथाचार्येणपूजितोवरः ॥ त्रिलोकवासिन्सप्ता श्वछाययासहितोरवे । तृतीयोद्वाहजंदोषंनिवारयसुखंकुरु। इत्यर्कंसंप्रार्थ्याऽर्कं॥ आकृष्णेनेतिछाययासहितंरविमावाह्य श्वेतवस्त्रसूत्राभ्यामावेष्ट्य संपूज्यापोहिष्ठेत्यादिभिरभिषि च्यगुडौदनतांबूलादिसमर्प्य प्रदक्षिणीकुर्वन्ममप्रीतिकराये यंमयासृष्टापुरातनी । अर्कजाब्रह्मणासृष्टाअस्माकंप्रतिरक्षतु इतिपठेत् ॥ द्वितीयप्रदक्षिणायांतु । नमस्तेमंगलेदेविन मःसवितुरात्मजे । त्राहिमांकृपयादेविपत्नीत्वंमेइहागता। अर्कत्वंब्रह्मणासृष्टःसर्वप्राणिहितायच । वृक्षाणामादिभूत स्त्वंदेवानांप्रीतिवर्द्धनः । तृतीयोद्वाहजंपापंमृत्युंचाशुविना

श्रयेति ॥ ततआचार्येणमासपक्षाद्युल्लिख्यकाश्यपगोत्रामादित्यपुत्रींसवितुः पौत्रीमर्कस्यप्रपौत्रीमिमामर्ककन्यामित्युक्तेवरःस्वस्तिनइंद्रोवृद्धश्रवाइतिसूक्तंपठन्नर्कनिरीक्षेत । ततआचार्योविप्रैःसहाशिषोदत्वाऽमुकगोत्रामुकशर्म्मणे संप्रददे इत्यर्ककन्यांदत्वा ॥

अर्ककन्यामिमांविप्रयथाशक्तिविभूपिताम्।गोत्रायशर्म्मणे तुभ्यंदत्तांविप्रसमाश्रयेतिपठेत् ।वरस्तुयज्ञोमेकामःसमृद्ध्यतामितिप्रथमांधर्मोमेइतिद्वितीयां यशोमेतृतीयामितित्रीनक्षतांजलीनर्कोपरिक्षिप्त्वागायत्र्यापरित्वेत्यादिनावा पंचावृतासूत्रेणार्कमावेष्टचतत्सूत्रं पुनःपंचगुणंकृत्वार्कस्यस्कंधेवद्ध्वाबृहत्सामेतिरक्षांपरिकल्प्यार्कस्यदिग्विदिक्ष्वष्टौकुंभान् संस्थाप्यवस्त्रेणत्रिसूत्रेणचावेष्टचहरिद्रागंधाद्यंतःक्षिप्त्वातेषुनाम्नामहाविष्णुमावाह्य षोडशोपचारैःसंपूज्यस्थंडिलेग्निंप्रतिष्ठाप्यआघारावाज्येनेत्यंतमुक्त्वात्रप्रधानं बृहस्पतिमग्निं वायुंसूर्यंप्रजापतिंचाज्येनशेषेणेत्याद्युक्त्वाघारांतेसंगोभिरांगिरसोबृहस्पतिस्त्रिष्टुप्॥ अर्कविवाहहोमेविनियोगः॥ॐसंगोभिराङ्गिरसोनक्षमाणोभगइवेदर्यमणंनिनाय।जनेमित्रोनदंपतीअनक्तिबृहस्पतेवाजयाशूँरिवाजौस्वाहा बृहस्पतयइदंनममेतित्यजेत् । यस्मैत्वाकामदेवोग्निस्त्रिष्टुप्विनियोगःप्राग्वत्

ॐयस्मैत्वाकामकामायवयंसम्राडचजामहे ॥तमस्मभ्यंकामंदत्वाथेदंत्वंघृतंपिबस्वाहा ॥ अग्नयइदं० ॥

ततोव्यस्तसमस्तव्याहृतिभिर्हुत्वास्विष्टकृदादिकर्मशेषंसमाप्यार्कंप्रदक्षिणीकृत्य ॥ मयाकृतमिदंकर्मस्थावरेणजरायुणा । अर्कापत्यानिनोदेहितत्सर्वंक्षन्तुमर्हसि ॥ इति प्रार्थ्याचार्य्यायगोयुग्ममन्येभ्यश्वविप्रेभ्योयथाशक्तिदक्षिणां दत्वाशांतिसूक्तंजप्त्वापूजोपस्करानाचार्यायदत्वादिनचतुष्टयमग्निंकुंभांश्वरक्षेत् ॥ कुंभेषुमहाविष्णुंपूजयेच्च ॥

पंचमदिनकृत्यं ब्राह्मे–चतुर्थेदिवसेतीतेपूर्ववत्तांप्रपूज्य च ॥ विसृज्यहोममग्निश्चविधिनामानुपींपराम्॥उद्वहेदन्यथा नैवपुत्रपौत्रसमृद्धिमान् ॥ इत्यर्कविवाहःसमाप्तः ॥

श्रीहरिःशरणम् ॥

अथ विवाहनिर्णयः ॥

श्रीतारानाथतर्कवाचस्पतिभट्टाचार्य्यसंगृहीतवादार्थसारांशमादायनिश्चयार्थंप्रमाणानिप्रदर्श्यंते ।

तद्यथा॥ईशंनत्वादर्श्यंतेऽत्रवेदादिशास्त्रमानतः॥एकस्य कामतोऽनेकसवर्णापाणिपीडनम् ॥ धर्म्मतत्वबुभुत्सूनांबोधनायैवमत्कृतिः । तैनैवकृतकृत्योऽस्मिनजिगीपास्तिलेशतः ॥ पाणिग्रहणिकामंत्रानियतंदारलक्षणम् । तेपांनिष्ठातु विज्ञेयाविद्वद्भिःसप्तमेपदे॥ मनुः–पाणिग्रहणसंस्कारःसवर्णासूपदिश्यते।मनुः-विवाहमात्रंसंस्कारंशूद्रोपिलभतेसदेति ॥ [illegible]शिष्टे स्वपितृभ्यः पिताद्द्यात्सतसंस्कारकर्म्म

णि ॥ पिण्डानोद्वहनात्तेषांतदभावेपितत्क्रमादिति ॥विवाहस्यसंस्कारत्वेसतितत्रविशेषोवक्ष्यते । वलादपहृताकन्यामन्त्रैर्यदिनसंस्कृता ॥ अन्यस्मैविधिवद्देयायथाकन्यातथैवसेति पराशरभाष्यादिधृतकात्यायनवचनेनराक्षसादावपहरणमात्रेकन्यैव ।

यथावा—अद्भिर्वाचाप्रदत्तायांम्रियेतोर्द्ध्वंवरोयदि॥नचमंत्रोपनीतातुकुमारीपितुरेवसेति ॥

विवा०-उद्वाहतत्त्वधृतवसिष्ठवचनेनवाङ्मात्रदानेउदकपूर्वदानेवामंत्रसंस्काराभावेअन्यस्मैदेयेतिगम्यते ॥

मंत्रसंस्कृतातुसा—शरीरार्द्धंस्मृताजायापुण्यापुण्यफलेसमेति ॥ अस्थिभिरस्थीनिमांसैर्मांसानित्वचात्वचमित्यादिभिःशरीरार्द्धहराअर्द्धफलभाग्भवतीत्याशयः ॥

पतिलक्षणंनिर्णयसिंधौ—यथा-नोदकेनचवाचाचकन्यायाःपतिरुच्यते । पाणिग्रहणसंस्कारात्पतित्वंसप्तमेपदेइति॥तथाचहारीतः—पाणिग्रहणेनजायात्वंकृत्स्नंहिजायापतित्वंसप्तमेपदेइति ॥

अथकाभार्य्याकार्य्या—अत्रपैठीनसिः-भार्य्याःकार्य्याःसजातीयाःसर्वेषांश्रेयस्यःस्युरिति ॥

केनविवाहेन—गंधर्वादिविवाहेपुशुभोवैवाहिकोविधिःकर्तव्यश्चात्रिभिर्वर्णैःसमर्थैश्चाग्निसाक्षिकः ॥ अत्रत्रिभिरितिविशेषणाद्शूद्रस्यात्रनाधिकार इतिविशेषः॥

कोविधिस्तेष्वित्यपेक्षायाम् ॥ गांधर्वासुरपैशाचाविवा
हाराक्षसश्चयः । पूर्वंपरिश्रयस्तत्रपश्चाद्धोमोविधीयते ॥
सवर्णासु—पाणिग्रहणसंस्कारःसवर्णासूपदिश्यतइति·
· विप्रेणक्षत्रियादिपरिणयने—शरःक्षत्रिययाग्राह्यःप्रतोदो
वैश्यकन्यया ॥ मनुः ॥ तथाचयाज्ञवल्क्यः—पाणिर्ग्राह्यःसव
र्णासुगृह्णीयात्क्षत्रियाशरम् । वैश्याप्रतोदमादद्याद्वेदनेत्वग्रज
न्मनः॥ वस्तुतस्तु-स्वदारनिरतःसदेतिमानववचनस्यपरदा
रान्नगच्छेदितिपरिसंख्यापरतायाः सर्वैःस्वीकारेणपरदा
रगमननिषेधात्तद्व्युदासेनअनिषिद्धस्त्रीगमनं शास्त्रविहित
स्त्रीसंस्कारंविनानुपपन्नमितिसंस्कारआक्षिप्यते॥ सवर्णायां
संस्कृतायांस्वयमुत्पादयेत्तुयम् । औरसंतंविजानीयादिति॥
औरसोधर्मपत्नीजः । इति याज्ञवल्क्यस्मृतिः ॥
स्त्रीपरिणयनफलम्—अपत्यंधर्म्मकार्य्याणिशुश्रूषारतिरु
त्तमा । दाराधीनस्तथास्वर्गःपितॄणामात्मनश्चह ॥ मनुः ॥
लोकानंत्यंदिवःप्राप्तिःपुत्रपौत्रप्रपौत्रकैः । यस्मात्तस्मात्स्त्रि
यःसेव्याःकर्तव्याश्चसुरक्षिताः ॥ याज्ञ०स्मृ०पुन्नाम्नोनरका
द्यस्मात्पितरंत्रायतेसुतः ॥ तस्मात्पुत्रइतिप्रोक्तइत्यादि
पुत्रःपुरुत्रायतेनिपरणाद्वापुंनरकंततस्त्रायतइतिनिरुक्तम् ॥
पुत्रेणलोकाञ्जयतिपौत्रेणानंत्यमश्नुते इत्यादि ॥
कीदृशीस्त्रीस्यादित्याकांक्षायाम्—मनुः ॥ असपिण्डाच
यामातुरसगोत्राचयापितुः । साप्रशस्ताद्विजातीनांदारक
र्मणिमैथुनेइति

तयाहिसहितःसर्वान्पुरुपार्थान्समश्नुते ॥ अनाश्रमीन तिष्ठेत्तुदिनमेकमपिद्विजः॥ आश्रमेणविनातिष्टन्प्रायश्चित्ती यतेहिसः॥दक्षः ॥ नगृहंगृहमित्याहुर्गृहिणीगृहमुच्यते॥तया हिसहितःसर्वान्पुरुपार्थान्समश्नुते॥ द्वितीयमायुपोभागंकृ तदारोगृहंवसेदितिमनुः। अथनापुत्रस्यलोकोऽस्तीति॥नैमि त्तिकानिकाम्यानिनिपतन्तियथातथा ॥ तथातथैवकार्य्या णिनकालस्तुविधीयते ॥ अथप्रथमभार्यायांसत्यामन्याधि वेत्तव्यानवेतिआकांक्षायां मनुः॥वन्ध्याष्टमेधिवेत्तव्यादशमे स्त्रीमृतप्रजा ॥ एकादशेस्त्रीजननीइत्यादि ॥ स्त्रीप्रसूश्चाधिवे त्तव्यापुरुपद्वेपिणीतथाइतियाज्ञवल्क्यः ॥ अधिविन्नातुभ र्तव्यामहदेनोन्यथाभवेदित्युक्तेवंध्यादीनामपिभूपणवस्त्रादि भिर्भरणंनतुत्यागःपापभयात्। अधिविन्नातुयानारीनिर्गच्छे द्रोपिताग्रहात् ॥ सासद्यस्तुनिरोद्धव्यात्याज्यावाकुलसन्नि धौ ॥ एकामूढ्वातुकामार्थमन्यांवोढुंयइच्छति ॥ समर्थस्तो पयित्वार्थैःपूर्वोढामपरांवहेत् ॥ अप्रजांदशमेवर्पेस्त्रीप्रजांद्वा दशेत्यजेत् ॥ मृतप्रजांपंचदशेसद्यस्त्वप्रियवादिनीम् ॥

अन्यच्च--अथयदिगृहस्थोद्वेभार्य्येविन्देतकथंकुर्य्यादि तिबौधायनमाशंक्ययस्मिन्कालेविन्देतोभावग्नीपरिचरेदि त्युपक्रम्यद्वयोर्भार्य्ययोरन्वारब्धयोर्यजमानइति ॥

तथाचकात्यायनः--नैकयापिविनाकार्य्यमाधानंभार्य्य याद्विजैः। अकृतंतद्विजानीयात्सर्वाभिर्नारभेद्यदि ॥ एकै कामेवासांसंनह्यादेकैकांगार्हपत्यमीक्षयेत्। एकैकामाज्यम

वक्षयेदिति ॥ यदेकस्मिन्यूपेद्वेरशनेपरिव्ययति ॥ तस्मादेकोद्वेभार्य्येविन्देतेति श्रुतिः ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणानांविरोधेयत्रविद्यते ॥ तत्रश्रौतंप्रमाणंस्यात्तयोर्द्वैधेस्मृतिर्वरा।व्यासः–विरोधेत्वनपेक्षंस्यादसतिह्यनुमानमितिजैमिनिसूत्रम् ॥

तथाचमहाभारते–एकस्यबह्व्योविहिता महिष्यःकुरुनन्दन। नैकस्याबहवःपुंसः श्रूयन्तेपतयः क्वचित्॥भार्य्याःकार्य्याःसजातीयाःसर्वेषांश्रेयस्यःस्युरित्यत्रापिबहुवचनम् ॥

तथाचकात्यायनः–अग्निहोत्रादिशुश्रूषांबहुभार्य्यःसवर्णया ॥ कारयेत्तद्बहुत्वेचज्येष्ठयागर्हितानचेत् ॥ सवर्णासुविधौधर्म्येज्येष्ठयानविनेतरेतियाज्ञवल्क्यः ॥

तथाचमहाभारते–ददौसदशधर्मायकश्यपायत्रयोदश। एकैवभार्य्यास्वीकार्य्याधर्म्मकर्म्मोपयोगिनी । प्रार्थनेचातिरागेचग्राह्यानेकापिचद्विज ॥ आद्यायांविद्यमानायांद्वितीयामुद्वहेद्यदि । तदावैवाहिकंकर्मकुर्यादावसथेऽग्निमान्॥ नि०सिं० सदारोऽन्यान्पुनर्दारानुद्वोढुंकारणांतरात् । यदीच्छेदग्निमान्कश्चित्क्वहोमोस्यविधीयते ॥ स्वेग्नावेवभवेद्धोमोलौकिकेनकदाचन ॥ कात्यायनः ॥

मात्स्येयथा–उद्वहेद्रतिसिद्ध्यर्थंतृतीयांनकदाचन॥मोहादज्ञानतोवापियदिगच्छेत्तुमानुषीम् । नश्यत्येवनसंदेहोगर्गस्यवचनंयथेति ॥ तृतीयस्त्रीविवाहेतुसंप्राप्तेपुरुषस्यतु। आर्कविवाहंवक्ष्यामिशौनकोऽहंविधानतः॥ इत्युपक्रम्य । विसृ

ज्यहोम्यमग्निचविधिनामानुपींपराम् । उद्वहेदन्यथानैवपुत्र पौत्रादिवृद्धिमान् ॥ विमृज्याग्निकङ्कणञ्चमानुपीमुद्वहेत्परा म् । अनेनविधिनायस्तुकुर्यादर्कविवाहकम् ॥ पुत्रपौत्रादि संपत्तिश्चतुर्थ्यालभतेनरः । चतुर्थादिविवाहार्थंतृतीयेऽर्कसमु द्वहेत् । ऋणत्रयमपाकृत्यमनोमोक्षेनिवेशयेत् ॥ जायमा नोवैपुरुपस्त्रिभिर्ऋणैर्ऋणीभवतिब्रह्मचर्येणऋषिभ्यःयज्ञेनदे वेभ्यःप्रजयापितृभ्यइति ॥ एतदुक्तंभवति । दर्शितबहुप्रमा णैरेकपुरुपस्यबहुभार्य्याकरणंसिद्धम् ॥ एतद्विपये किंस्वव र्णाउतब्राह्मणादिभिरसवर्णाःकार्य्याअत्रकोमुख्यःकल्पः क श्चगौणः ॥

अत्रोच्यते।यथाहमनुः—सवर्णाग्रेद्विजातीनांप्रशस्तादार कर्म्मणि । कामतस्तुप्रवृत्तानामिमाःस्युःक्रमशोवराः ॥ शू द्रैवभार्य्याशूद्रस्यसाचस्वाचविशःस्मृते । तेचस्वाचैवराज्ञ श्चताश्चस्वाचाग्रजन्मनः ॥

तथाहयाज्ञवल्क्यः-तिस्रोवर्णानुपूर्व्येणद्वेतथैकायथाक्रमम् ब्रह्मक्षत्रविशांभार्य्यास्वाचैवशूद्रजन्मनः ॥ भार्य्याःकार्य्याः स्वाजातीयाःसर्वेपांश्रेयस्यःस्युरिति मुख्यःकल्पस्तदनुचत स्रोब्राह्मणस्यतिस्रोराजन्यस्यद्वेवैश्यस्येति ॥ सवर्णासुसव र्णासुजायन्तेहिसजातयः । अनिन्द्येषुविवाहेषुपुत्राःसन्तानव र्द्धनाइतियाज्ञवल्क्यपैठीनसिमन्वादिवचनैःस्वजातीयविवा हेषुविशेपफलप्रतिपादनात्मुख्योऽयंकल्पःसर्वैरभिवंद्यः ॥ कामतस्तुप्रवृत्तानामिमाःस्युःक्रमशोवराः । यदिकामाद्रा

गाह्लोभात्क्रमशःप्रवर्तते तदोत्तमंपक्षमाश्रयेदितिनिष्कपः

याज्ञ० स्मृ० अथविवाहभेदानिरूप्यन्ते—ब्राह्मोविवाह आहूयदीयतेशक्त्यलंकृता। तज्जःपुनात्युभयतःपुरुषानेक विंशतिं॥ यज्ञस्थऋत्विजेचैवआदायार्षस्तुगोद्वयं।चतुर्दशप्र थमजःपुनात्युत्तरजश्चषट्॥. इत्युक्त्वाचरतांधर्मंसहयादीय तेऽर्थिने। सकायःपावयेत्तज्जःषट्षड्वंश्यान्सहात्मना॥ आ सुरोद्रविणादानाद्गांधर्वःसमयान्मिथः॥ राक्षसोयुद्धहरणा त्पैशाचःकन्यकाच्छलात्॥ पाणिर्ग्राह्यःसवर्णासुगृह्णीयात्क्ष त्रियाशरम्। वैश्याप्रतोदमादद्याद्वेदनेत्वग्रजन्मनः॥

अधिकारिणःकन्यादानस्य॥ पितापितामहोभ्रातास कुल्योजननीतथा। कन्याप्रदःपूर्वनाशेप्रकृतिस्थःपरःपरः॥

· अथकतिविधाःपुत्राः—औरसोधर्मपत्नीजस्तत्समः पुत्रि कासुतः क्षे० ज०। क्षेत्रजातस्तुसगोत्रेणेतरेणवा॥ गृहेप्रच्छन्न उत्पन्नोगूढजस्तुसुतःस्मृतः।दद्यान्मातापितावायंसपुत्रोदत्त कोभवेत्॥ क्रीतश्चताभ्यांविक्रीतःकृत्रिमःस्यात्स्वयंकृतः। दत्तात्मातुस्वयंदत्तोगर्भेविन्नःसहोढजः॥ उत्क्षिप्तोगृह्यतेय स्तुसोऽपविद्धोभवेत्सुतः।इत्याद्युपक्रम्यांते॥ पिण्डदोंशहर श्चैषांपूर्वाभावेपरःपरः॥ इत्यादिप्रमाणैःपुरुषस्यबहुस्त्रीत्वं सिद्ध्यते॥अत्राशंक्यतेयथाबहवःपुरुषस्यस्त्रियएवंस्त्रीणाम पिबहवःपुरुषाःस्युः॥ अत्रकिंमानं येनपुरुषेणबहवःस्त्रियः कार्य्याः नतुस्त्रियाबहुपुरुषाइतिशङ्क्यमानंप्रत्याह॥

श्रयतांभोः॥

तथाचश्रुतिः—यदेकस्मिन्यूपेद्वेरशनेपरिवयाति । त स्मादेकोद्वेभार्य्येविन्दते ॥ इतिश्रुतिःतस्मादेकोबह्वीर्विन्द तेइतिश्रुतिः ॥ तस्मादेकस्यबह्व्योजायाभवन्तिनैकस्यबह वःसहपतयइतिश्रुतिः ॥

तथाचस्मृतिः । याज्ञवल्क्यः ॥ सकृत्प्रदीयतेकन्याहरं स्तांचोरदण्डभाक् ॥ मृतेजीवतिवापत्यौयानान्यमुपगच्छ ति॥सेहकीर्तिमवाप्नोतिमोदतेचोमयासह॥ इत्यादिश्रुतिस्मृ तिनिष्पन्नत्वात्पुरुपस्यैववहवःस्त्रियोनतुस्त्रीणां वहुपुरुपाअ न्यथाव्यभिचारप्रसङ्गःस्यात् ॥

यथाहमनुः—आर्षंधर्म्मोपदेशंचवेदशास्त्राविरोधिना ॥य स्तर्केणानुसंधत्तेतद्धर्मवेदनेतरः । नतुस्वकपोलकल्पितयु क्तयः ॥ इतिश्रुतिस्मृतिपुराणनिष्पन्नोविवाहस्यसंक्षेपतोनि र्णयःकृतः । विस्तरस्तुतत्तद्ग्रंथेभ्योज्ञेयइति शम् ॥

इतिश्रीकर्पूरस्थलनिवासिगोतमगोत्र (शोरि) जात्या लंकृतदैवज्ञदुनिचन्द्रात्मज० पं०विष्णुदत्तवैदिककृतविवा हनिर्णयःसमाप्तः॥शुभमस्तु ॥

(विधवाविवाहखण्डनम् ॥)

विदित होकी इस समयके आधुनिक पंडितमन्य स्वामी दयानंदानुयायि महामायि आई बताई एस्स आई पढनेसे शास्त्र वेदकी पंडिताई करनेवाले अनपढ यही रुदे चिल्लाते हैं कि देखो भाई इन विधवास्त्रियोंका फिर वि- वाह करना बहुत अच्छा वेदप्रतिपादित है ॥" इसमें प्रथम

यही कहना चाहिये कि यदि ठीक है तो आप अपने घर-मेंही क्यूं नहि करते अगर वेदमें लिखा है तो प्रमाण दो आर्य० उत्तर देताहै ओमायो डीयर (अन्यमिच्छस्वसुभगे पतिमत्) अर्थ हे मेरी स्त्री मेरे विना और पतिकी इच्छाकर ॥ सो यदि वेदको मानते हो तो ठीकहै ॥ उत्तर वाह जी वाह मंत्रकी एक टांग लोकोंको बहकाने वास्ते पकड छोडीहै प्रथम यह संपूर्ण मंत्र तो कह अर्थ करो तो तुम आपही जान लेगें आ०(यूवडवी) यह मंत्र क्या औरभी है ॥ नाहि भाई तुमारे लिये, इतनाही मंत्रहै ॥ बस आपके स्वामीका पोल गोलम मोल मालूम हो गया कि सपैद रीछोंको नकेल मंत्रकी पाकर नचाते है ॥ अगर तुमको यथार्थ वेद आताहो तो कभी नये रास्ते नानिकालते यद्यपि (उपदेशोहि मूर्खाणां प्रकोपाय न शांतये) परंतु भूलेको रास्ते पाना लिखाहै सो आप सावधान हो मंत्र और अर्थ सुनें ॥ अमेरे प्यारे मित्र केवल आप लोकोंको अनजान होनेसे अपने पंथ (सहेकी तीन टांगवत्) चलानेके लिये स्वामीजीका जाल है। अन्यथा आजतक पीछे लोग पढेही नहिथे वा स्वामीजीने पंचम अन्यही वेद पढा सो देखिये॥

यह मंत्र ऋग्वेद मं १० सू० १० । मं १० है ॥

आघाता गच्छानुत्तराणि युगानियत्र जामयःकारिष्यन्त्यजामि । उपवर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिंमत् ॥ मंत्र १० इस्का निरुक्त पूर्वषट्क अध्याय ४ अनु० २०॥ ओगमिष्यंति तान्युत्तराणि युगानियत्र जामयः करिष्यंत्यजामी कर्म्माणि जाम्यतिरेकनाम वालिशस्य वा समानजातीयस्य वोपजनं उपधेहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्वसुभगे पतिं मदिति व्याख्यातम् ॥

भाषार्थ—वह घोर कलियुग आवेगा जिसमे भ्राता भगिनीयोंके साथ पापकर्म करेंगे सो हे यमी भगनि मुझसे

अतिरिक्त अन्य जातिका बलिष्ठ पुरुषसे विवाहपूर्वक भोगकी इच्छा कर ॥ भावार्थ यह वेद मंत्रका है कि यमयमीका संवाद है उसमे यम भ्राता अपनेसे यमी भगिनी भोग करनेकी इच्छा रखतीथी तब यमने यह वाक्य कहा की मैं तुमारा भाई हूं सो बडा पाप है तुम अन्य जातिका वरकी इच्छाकर सो यह मंत्र तो भ्राताने भगिनी प्रति कहा है। नहि पति स्त्रीको कहता है कि तुम मेरे विना और पति करलो क्या वह नपुंसक वा वृद्ध हो आज्ञा कर्ता छः ॥

आर्य०क्यूंजी हमारेको स्वामीजीने और आज्ञा दीहै की स्त्री ग्यारह ११ पति करले ॥ वह मंत्र यह है ॥ ऋवेद मंडल १० सूक्त ८५ ॥ मंत्र

इमांत्वमिन्द्रमीढ्वःसंपुत्रांसुभगांकृणु ।
दशास्यांपुत्रानाधेहिपतिमेकादशंकृधि ॥

सो इस्का अर्थ क्या है ॥ वाह जी वाह अरे भोले आर्य भ्राता तुम कुछ व्याकरण पढो तुमको अर्थके नामालुम होनेसे यह अंधकार है ॥ अर्थ श्रवण करो ॥

अन्वयः ॥ हे इंद्र इमांत्वम् द्वःसपुत्रांसुभगां कृणु । अ-स्यां दशपुत्रान् आधेहि पुत्रैःसहितम् एकादशं पतिंकृधि॥

भाषार्थ-हे इंद्र इस्को तुम स्तुतियुक्त पुत्रयुक्त पति युक्त करो और इस्से दशपुत्र उत्पन्नहो दशपुत्रोंके साथ ग्यारहवा पतिभी वृद्धिको प्राप्तहो अर्थात् इस्के पुत्र १० और पति जीवें तो यह पुत्रान् बहुवचन और पति एक वचन है ॥ सो विशेष सायणभाष्यसे मालूम करो ॥ और " नष्टे मृते प्रव्रजिते " इस स्मृतिका अर्थ स्त्रियोंके आचारमें लिखाहै वहांसे देखलें ॥ और विवाहप्रकरणमे भी विशेष लिखाहै विस्तारके भयसे नहि लिखा ॥ इति श्रीदैवज्ञढुनिचंद्रात्मज पं० विष्णुदत्तवैदिककृतसंक्षेपविधवाविवाहखण्डनम् ॥

अथ वधूप्रवेशप्रयोगः ॥

तत्र चतुर्थीकर्म्मानन्तरं पुत्रोत्साहविधानादिलौकिकाचारं यथासंप्रदायं कृत्वा वरः पित्रादत्तांवधूं गृहीत्वा महोत्स

युतः रथेवध्वाः दक्षिणत उपविश्य मंगलवाद्यघोषपुरःसरं मंगलगीतपरैः पुरंध्रीजनैराचार्यादिविप्रैः आनोभद्राःस्वस्तिन इन्द्रोवृद्धश्रवा इतिस्वस्तिवाचनपुरःसरैश्चस्वगृहं गच्छेत् । ततोवधूपिता दासीहस्ते दीपंदत्वा सहैवनयेत् ॥ पर्यंकादि यथाशक्ति यथारुचि पारिबर्हंच दद्यात् ॥ स्वगृहमागतेसपत्नीकेवरे वरमाता ओदनंबलिंगृहीत्वाइष्टयुत्तारणं कुर्यात् गृहद्वारसमीपेप्रथमंतंडुलपूर्णां कंचुकीं वधूहस्ते दद्यात् ॥ सातांगृहीत्वातत्रसततं तण्डुलानवकिरंतीद्वीपद्वयंयुक्तद्वारमंततोऽनेकदीपैर्विराजितगृहं वधूः पादौ सुवर्णोपरिनिधाय वरेण सह प्रथमं दक्षिणपादपुरःसरंमंत्रवाद्यघोषैर्गृहंप्रविशेत ॥ ततः शृंगारिते महानसे वस्त्राच्छादिते पीठे वरः प्राङ्मुख उपविश्य दक्षिणतः वधूमुपवेश्य इत्यखिलंलोकाचारमात्रम् ॥ ततोवरः आचम्य प्राणानायम्य देशकालौ स्मृत्वा अस्याः मम नवोढाया भार्यायाः प्रथमागमने गृहप्रवेशांगतया विहितं मम सकलमनोरथसिद्ध्यर्थं लक्ष्मीप्राप्त्यर्थं ज्येष्ठाख्यलक्ष्मीपूजनमहं करिष्ये॥ महानसंपूजनं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनंच करिष्ये ॥ इति संकल्प्य ॥ ततो ज्येष्ठाख्यलक्ष्मीपूजनं महानसंपूजनं गणपतिपूजनं स्वस्तिपुण्याहवाचनंच विधिवत्कृत्वा ततः यथाचारप्राप्तं कांस्यपात्रे तण्डुलान्प्रसार्य तदुपरि सुवर्णशलाकया श्रीकुलदेवताप्रयुक्तमादौ अमुकीर्ति नाम विलिख्य ॥ ॐमनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमंतनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमंदधातु । विश्वेदेवास इहमादयंतामोंप्रतिष्ठ ॥ इति मंत्रेण प्रतिष्ठाप्य ॥ ॐश्रीश्चते लक्ष्मीश्चपत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम्॥ इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकंमऽइषाण॥इत्यनेन मंत्रेण षोडशोपचारैः संपूज्य ॥ अन्यद्यथाकुलाचारं कुर्यात् ॥ ततो वरेण नामवाचनपुरः सरं वध्वानाम प्रतिष्ठितं कुर्यात्॥श्रीकुलदेवताप्रयुक्तमादौ अमुकनाम प्रतिष्ठित मिति त्रिर्वाचयित्वा ब्राह्मणाः मनोजूतिरिति मंत्रंपठित्वा वधूशिरसि मं-

आक्षतान्दद्युः ब्राह्मणेभ्योगंधताम्बूलदक्षिणादिदत्वा तेराशी-
र्वादा गृह्णीयात् इति वधूप्रवेशः ॥ श्रीहरिर्विजयते ॥

वंशवर्णनम् ।

न्यायशास्त्रस्यकर्तायोह्यक्षपाद्गौतमोमुनिः ॥
महाप्रभावोराजर्षिर्मुनिमान्यअभूदिह ॥ १ ॥
तस्यरत्नविशुद्धेस्मिन्वंशेस्यादानुपूर्व्यतः ॥
महाप्रभावोविद्वांश्चकनैयालालविश्रुतः ॥ २ ॥
तत्पुत्रोविशुद्धात्माश्रीतुलसीरामनामतः ॥
अभूद्यापारविद्यायांकुशलोधर्मपरायणः ॥ ३ ॥
त्रिवर्गसाधयित्वायोगंगांसमनुगम्यच ॥
ध्यानयोगेनसंपश्यन्नीश्वरंव्यसृजत्तनूम् ॥ ४ ॥
तत्प्रभावाच्चतत्सूनुःसर्वशास्त्रविचक्षणः ॥
अनन्यकल्पोदैवज्ञोदुनिचंद्रइतिश्रुतः ॥ ५ ॥
तस्यात्मजेनविदुषाविष्णुदत्तेनशौरिणा ॥
वैदिकोपाह्वयुक्तेनकृतोयग्रंथउत्तमः ॥ ६ ॥
नत्वाश्रीरामनाथंचशास्त्रिणंस्वगुरुंतथा ॥
श्रीमद्गोपालनामानमयोध्यावासिनंगुरुम् ॥ ७ ॥
श्रीहरिभक्तमहात्मानंशास्त्रिणंप्रणमाम्यहम् ॥
यमुनादत्तंचविद्वांसंभायलाग्रामवासिनम् ॥ ८ ॥
मित्रंचसाधुरामंश्चविष्णुदासंतथैवच ॥
अन्यान्स्वाध्यायवर्गीयान्नमस्कृत्यपुनःपुनः ॥ ९ ॥
श्रीकर्पूरस्थलेरम्येअद्रिवेदांकभूमिते ॥
वैक्रमेमधुमासेचकृताटीकामनोरमा ॥ १० ॥
यदशुद्धमसंबद्धमज्ञानेनकृतंमया ॥
विद्वद्भिःक्षम्यतांसर्वमत्वामामल्पमेधसम् ॥ ११ ॥
विशेषेणार्थपुष्पाञ्जलिः ॥ श्रीः ॥